अमर मधेसी शहीद "रघुनाथ ठाकुर मधेसी" की रचना "परतन्त्र मधेस और उनकी संस्कृति"

अमर शहीद रघुनाथ ठाकुर "मधेशी"
(१९३४–१९८१ ई०)

प्राक्कथन

श्रद्धेय पाठक वृन्द!

आज से लगभग ४० वर्ष पहले से ही मधेशियों के राजनीतिक अधिकार की प्राप्ति के लिए "अहिंसात्मक मधेश मुक्ति आन्दोलन" से लेकर क्रमिक रूप में आगे बढ़ते हुए "मधेशजन-क्रान्तिकारी दल" तथा "मधेश मुक्ति मोर्चा" के प्रवर्त्तक एवम् नेतृत्त्व प्रदान करनेवाला महामानव, अमर शहीद **रघुनाथ ठाकुर "मधेशी"** के पथ पर कार्यरत हो, अपने प्राणों की आहुति देने वाले अमर शहीद क्रमशः **"शनिश्चर चौधरी"**, **"सत्यदेवमणि त्रिपाठी"** व **"रघुनाथ राय"** की पुण्य स्मृति में अपना विश्लेषण सहित "रघुनाथ ठाकुर" 'मधेशी' का "संक्षिप्त जीवन वृत्त" के साथ उनकी कृतियाँ (कुछ ज्यों का त्यों, कुछ आंशिक रूप में) आपकी जानकारी एवम् चिन्तन-मनन के लिए प्रस्तुत किया है।

अब तक देश के सैकड़ों शिक्षित लोगों से सम्पर्क साध, जिसमें प्राध्यापक, शिक्षक, वकील, डाक्टर, कर्मचारी, पढ़े-लिखे युवा एवम् कृषक वर्ग शामिल हैं, इन्हें जानकारी कराने के बाद अनुभव हुआ कि उपरोक्त घटना के बारे में लगभग शत-प्रतिशत लोग अनजान से हैं।

पूर्णरूपेण अवगत एवम् सही तथ्यों को एहसास करने के बाद श्री विवेकानन्द सिंह जी, जो अब ने. स. पा. (आर) के संगठन मंत्री हैं, रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" द्वारा लिखित एवम् प्रकाशित प्रमाणिक दस्तावेजों के साथ विभिन्न व्यक्तियों से सम्पर्क किया। इसके बाद उन व्यक्तियों के द्वारा नेपाल सद्भावना पार्टी के नेतृत्व के प्रति क्षोभ प्रकट करते हुए निम्न प्रतिक्रियाएँ सामने आयीं :—

कि, जान-बुझकर भी, पीड़ित मधेशीयों की भावना को भुनाकर निजी स्वार्थ परिपूर्त्ति करने से पहले, ने. स. पा. के नेताओं का सबसे पहला कर्त्तव्य था, इन पुस्तकों का मुद्रण कर, इस तरह के ऐतिहासिक एवम् प्रमाणिक दस्तावेज को जनसमक्ष लाना। राजनीतिक कार्यक्रमों के द्वारा उपरोक्त घटित घटनाओं के बारे में निरन्तर रूप से जानकारी कराना। दु:ख की बात है कि विगत में हमारे भी ऐसे योद्धा थे, जो प्रतिकुल अवस्था में हमारे राजनीतिक अधिकारों की लड़ाई के लिए, अनुसन्धान कर प्रमाणिक दस्तावेज का आधार देते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दी। लेकिन हम लोग इस इतिहास को, जो अपनी पहचान है, अपना इतिहास है, जानते तक भी नहीं हैं ? जब तक अपने इतिहास का ज्ञान जनमानस को नहीं होगा तब तक अपने राष्ट्र के प्रति, अपने अधिकारों के प्रति मधेशी जनता स्वाभिमानी नेपाली नागरिक की तरह सजग कैसे हो सकेगा ? इस इतिहास को दबाने का कारण क्या था ? शीघ्राति-शीघ्र उनकी जीवनी के साथ उनकी अन्य पुस्तकें भी प्रकाशित करें। इसी हौसला के साथ अभिप्रेरित हो आर्थिक सहयोग भी प्राप्त हुआ।

उपरोक्त आक्रोश भरा अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में जानकारी देना चाहूँगा कि उपरोक्त इतिहास को जन-समक्ष लाने के लिए सम्पूर्ण ने. स. पा. नेतृत्व वर्ग के बीच तत्कालिन ने. स.

इस पुस्तक को जल्द प्रकाशित करवाने की भावना से प्रभावित हो, श्री दिनेश्वर झा (ने. शि. मंच, मोरङ्ग) रु० आठ हजार, श्री विवेकानन्द सिंह (संगठन मंत्री ने. स. पा. आर.) रु० पाँच हजार, श्री नापीलाल सिंह राजवंशी (अनारमुनि, झापा) रु० पन्द्रह सौ, श्री सत्यनारायण मेहता (बविया, सुन्सरी) रु० ढाई सौ, श्री भागवत मेहता (बविया, सुन्सरी) रु० ढाई सौ तथा अभिमन्यु साह (मोरङ्ग) ने एक सौ रुपये का आर्थिक सहयोग करते हुए अपना संघर्षशील भावनाओं का परिचय दिया है। इस पुनीत कार्य की सफलता के लिए अपनी-अपनी भावभीनी यथेष्ट योगदान हेतु, मैं इन लोगों का सदैव आभारी हूँ। मैं ने. स. पा. (आर) के महामंत्री प्रो० भाग्यनाथ प्र० गुप्ता जी का आभारी हूँ जिन्होंने ''यह लुटेरों का नगर है'' नामक कविता इस पुस्तक में प्रकाशनार्थ देकर पुस्तक की रोचकता को बढ़ा दिया है।

मैं ने. कां. जि. वि. स., सुन्सरी का जि० उपसभापति श्री अरविन्द मेहता जी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मधेशियों के राजनीतिक अधिकार के प्रति सम्वेदनशील हो असाधारण सहयोग करने का फैसला लेकर मेरा हौसला बढ़ाया है। मैं श्री रामचन्द्र मिश्र (पीपरा, महोत्तरी), श्री श्याम लाल मिश्र (ईनरूवा, सुन्सरी), श्री ओम कुमार झा (विन्ही, धनुषा), श्री आर० डी० आजाद (सप्तरी), डा० शिवशंकर यादव (वीरगंज), श्री आशिक लाल महत (उर्लावारी, मोरङ्ग), श्री कमल कुमार खवास (मोरङ्ग), श्री उमालाल चौधरी (तन्मुना, सुन्सरी), श्री सीताराम पंडीत (ईनरूवा, सुन्सरी), वकील श्री देव ना० मंडल (सप्तरी), श्री सुर्य ना० प्र० देव (सप्तरी), श्री ज्ञानचन्द यादव (संगठन मंत्री, ने. स. पा. आर., बारा), वृन्दा प्र० रौनियार, कोषाध्यक्ष, ने. स. पा. (आर), मदनानन्द मिश्र, प्रचार मंत्री, ने. स. पा. (आर) तथा श्री अब्दुल अजिज खाँ (एकला रूपन्देही) के साथ सप्तरी के ने. स. पा. महासमिति की बैठक में आये रूपन्देही के एवम् उपरोक्त तमाम महानुभावों के प्रति किन शब्दों में आभार व्यक्त करूँ, मुझे मालूम नहीं जिनके द्वारा उत्प्रेरकरूपी असाधारण एवम् वैचारिक सहयोग प्राप्त हुआ है—इस पुस्तक को छपवाने में। मैं, डा० योगेन्द्र नाथ झा (पी० एच० डी०), विलासपुर, मध्यप्रदेश के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने विशिष्ट बौद्धिक सहयोग के साथ शहीदों के प्रति अपना भावभीनी अभिव्यक्ति इस प्रकार दी है—

सर वही चढ़ा, जो चमन से निकल गया,
शोहरत उसे मिला, जो वतन से निकल गया।
जिन्होंने शहीद किया, देश के लिए खुद को,
दुनियाँ निहारती है, अब उनको।

मधेशियों के राजनीतिक अधिकार के संघर्ष से जुड़े शहीदों के सम्बन्ध में जिन्हें कुछ विशेष जानकारी हो, सप्रमाण उपलब्ध करवाने का अनुरोध करता हूँ, जिसे अगले संस्करण में अनुबन्ध करना चाहूँगा। मैं ऐसे महानुभावों का सदैव कृतज्ञ रहूँगा।

अन्त में राष्ट्रिय अखण्डता, राष्ट्रियता, राजनीतिक रूप से सभी तरह के भेद-भावों का अन्त, संवैधानिक राजतंत्र एवम् संघात्मक शासन-व्यवस्था व प्रजातंत्र के प्रति प्रतिबद्धता के साथ इस पुस्तक को प्रकाशित करने में बौद्धिक एवम् अन्य सहयोग करने वाले सभी मान्य-जन के प्रति आभारी हूँ।

—लेखक

पा. का संयुक्त महामंत्री के रूप में खुद ही मेरे द्वारा मौखिक रूप से अथक प्रयास किया गया। अन्ततोगत्वा, २०४९ साल श्रावण महीना का २ एवम् ३ गते की केन्द्रीय कार्यसमिति की बैठक में पार्टी अध्यक्ष का आलोचना करते हुए लिखित रूप में उपरोक्त इतिहास को प्रकाशित एवम् शहीदों के नाम पर राजनीतिक कार्यक्रम देने का सलाह दिया। फलस्वरूप, मेरे लिए ''अनैतिक व्यक्ति'' जैसे शब्द का प्रयोग लिखित रूप में करते हुए विभिन्न मनगढ़न्त आरोपों के साथ स्पष्टीकरण पूछते हुए पार्टी से निलम्बित एवम् अपमानित किया गया। विस्तृत जानकारी के लिए ***''ने. स. पा. नेतृत्त्व विश्वास से अविश्वास, फिर विभाजन की ओर, कब, क्यों और कैसे ?''*** को पढ़ें। अन्ततः ने. स. पा. के संस्थापक सदस्यों के साथ स्वाभिमानी कार्यकर्त्ताओं ने अधिकार का संघर्ष को सही दिशा प्रदान करने हेतु **''नेपाल सद्भावना पार्टी (आर)''** का निर्माण किया।

आदरणीय पाठक वृन्द !

संघर्ष के प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए, शहीदों के द्वारा निर्धारित कठिन मार्ग पर कदम आगे बढ़ाना, पेशेवर राजनीतिज्ञों वा स्वार्थवश अंधेरे में घूम-फिर करने वाले राजनीतिक कार्य-कर्त्ताओं के वश की बात नहीं है। इसके लिए राजनीतिक प्रतिबद्धता, धैर्य और ईमान्दारी की सख्त आवश्यकता है। इसके अभाव में आप देख रहे हैं, इस छोटी सी अवधि में ही वक्त के थपेड़ों ने स्वार्थ भरा ने. स. पा. के तथाकथित त्यागी, संघर्षकारी, क्रान्तिकारी व अवसरवादी नेताओं के चरित्र को नंगा कर दिया है। आज ये लोग ने. कां. के युवा नेता का मासिक तलब और सुविधाभोगी कर्मचारी बनने में गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं तो कुछ कर्मचारी बनने के लिए छटपटाते हुए दिखाई दे रहे होंगे।

दोस्तों !

अमर शहीद 'रघुनाथ ठाकुर 'मधेशी' द्वारा २०१५ साल में लिखित व प्रकाशित ''परतंत्र-मधेश और उसकी संस्कृति'' नामक पुस्तक को आज भी उतना ही सान्दर्भिक समझता हूँ, जितना कल था और उतना ही सान्दर्भिक कल-तक रहेगा, जब तक देश की ८० प्रतिशत उपेक्षित एवम् शोषित मधेशी एवम् पहाड़ी जन-जातियों के साथ भेद-भाव अन्त नहीं हो जाता है।

इस पुस्तक के परिशिष्ट में उपरोक्त शहीदों के नेतृत्व में **मधेश मुक्ति आंदोलन प्रारम्भिक संगठन समिति** (मोरङ्ग) तथा **मधेश जन क्रान्तिकारी दल** के द्वारा वितरित उस वक्त का उपलब्ध पर्चा-पम्पलेट भी आपकी जानकारी एवम् मूल्याङ्कन के लिए प्रकाशित किया गया है साथ ही जन-चाहना अनुरूप ''परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति'' नामक पुस्तक का द्वितीय संस्करण भी इसी के साथ आपकी सुविधा और जानकारी के लिए प्रकाशित किया गया है। विशेषकर ने. क. पा. (एमाले) का सक्रिय कार्यकर्त्ता श्री उपेन्द्र यादव जी के प्रति अपनी कृतज्ञता जाहिर करना चाहूँगा जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर मेरे द्वारा लिखित विषय-वस्तु का गहराई से अध्ययन कर पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने हेतु बौद्धिक सहयोग दिया।

सहमति के दो शब्द

श्री रामजन्म तिवारी
मीना बाजार, गहवा रोड
वीरगंज (नेपाल)

मिति : वि. सं. २०४९-२-२९

स्वर्गीय रघुनाथ ठाकुर ''मधेशी'' को मैं वि. सं. २०१० साल से जानता हूँ। ठाकुर जी तत्कालिन जि० मोरङ्ग फिलहाल जि० सुन्सरी के निवासी थे। ठाकुर जी उसी समय से तराई मधेश के उपेक्षित, शोषित तथा दलित लोगों के अधिकार दिलाने के लिए चिन्तनशील थे। उन्होंने इस कार्य के लिए अपने-आपको उस वक्त समर्पित कर दिये जिस समय राजनीतिक अज्ञानता तथा स्वार्थ के कारण मधेशी समुदाय के लिए किसी भी नेता को कोई परवाह नहीं था। इन्होंने इस कार्य के लिए महान कष्ट झेला। यही वह व्यक्ति थे जो दिल्ली में संसद भवन तथा हर देश के दूतावास के सामने अपने सिर पर दिन में पेट्रोमैक्स जलाकर न्याय की पुकार कर रहे थे। इन्होंने मधेशियों की उपेक्षा और व्यथा के बारे में कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकें भी लिखीं, जिनमें ''परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति'' खास करके मनन करने योग्य है। षडयन्त्र के द्वारा इनकी हत्या की गयी। मेरी पूरी सहानुभूति इनके परिवार के लिए है। इनके निधन से मुझे गहरा धक्का लगा है तथा तराई मधेश के कार्यक्रम को बहुत नुकसान हुआ है। हम लोगों ने मधेशियों के अधिकार के लिए ''नेपाल तराई कांग्रेस पार्टी'' खोला था। मधेशी नेताओं के द्वारा धोखा मिला। लेकिन इन्होंने ''अहिंसात्मक मधेश मुक्ति आन्दोलन'' की शुरूवात करते हुए अन्त में शहीद हो गये। इनके कई समर्थक मारे गये। इनका मानना था कि चुनाव लड़ना अपने-आपको धोखा देना है। इनकी जीवनी लिखनी जरूरी थी। मैं बहुत प्रसन्न हूँ, इनकी जीवनी लिखने वाले व्यक्ति की सराहना करते हुए बधाई देता हूँ, जिन्होंने यह लिखकर नयी पीढ़ियों को प्रेरणा का श्रोत दिया है।

ने. स. पा. (आर.) में (आर.) का अर्थ, रामजन्म तिवारी के बदले मेरे द्वारा पूर्व घोषणानुसार शहीद रघुनाथ ठाकुर ''मधेशी'' के अर्थ में समझे जाने के अनुरोध के साथ नयी पीढ़ी के मधेशी युवाओं को सोचना होगा कि आज आप कुछ बोल लेते हैं—क्योंकि परिस्थिति अनुकूल है। लेकिन वे लोग जो प्रतिकूल अवस्था में आप के राजनीतिक अधिकार के लिए अपने-आप को बलिवेदी पर चढ़ा दिये, क्यों किये ? किसके लिए किये ? इनके प्रति और अपने भविष्य के प्रति भी आपका क्या कर्त्तव्य होना चाहिये ? छल-फल कर कर्म की ओर आगे बढ़ने का दायित्व आपके कंधों पर है।

रामजन्म तिवारी

(रामजन्म तिवारी)
सर्वमान्य नेता, नेपाल सद्भावना पार्टी

विषय-सूची

भूमिका

दो शब्द

सर भी अपना, समस्या भी अपने, धरती भी अपनी, पैर भी अपने,
फिर भी देरी क्यों, बोझ किनारे करने में ?
फिर भी देरी क्यों ?
कल के मासूम बच्चों को अधिकार दिलाने में।

प्रिय पाठक वृन्द !

मधेशीयों के राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवम् शैक्षिक अधिकारों के शोषण के खिलाफ में मधेशी के मसीहा, महामानव, क्रान्तिकारी **अमर शहीद रघुनाथ ठाकुर ''मधेशी''** ने सशक्त रूप से १९५८ ई. से ही, आधुनिक नेपाल के शासक एवम् शोषकों के विरुद्ध आवाज उठाते हुए भारत में २०३८ साल आषाढ़ कृष्ण पक्ष पंचमी तदनुरूप २१-६-८१ ई. की शाम शासक वर्गतंत्र के साजिश के तहत मार दिये गये।

उन्होंने वि. सं. २०१५ साल पौष ३० गते ''परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति'' नामक पुस्तक प्रकाशित कर सशस्त्र क्रान्ति के अग्रदूत स्व० श्री ५ त्रिभुवन के नाम समर्पित करते हुए सम्पूर्ण तराई मधेशीयों को राजनीतिक हक-अधिकार के प्रति चेतना जगाने एवम् सजग करने हेतु उपरोक्त पुस्तक हमारे पूर्व पीढ़ी के समक्ष प्रस्तुत किया था। शासक वर्ग के जातियों का कुदृष्टि के कारण ही ''अहिंसात्मक मधेश मुक्ति आन्दोलन'' का जेहाद छेड़ने का निश्चय कर मोरङ्ग जिला की धरती पर ''प्रारम्भिक संगठन समितियाँ'' खड़ा करते हुए जनमत तैयार करने में जुट गये।

इस आन्दोलन को दबाने के लिए शासकवर्ग तंत्र के राजनीतिक दलों के नेताओं की सहमति से सरकारी षड़यन्त्रों के तहत फर्जी एवम् समानान्तर ''मधेश मुक्ति-परिषद'' व ''मधेश मुक्ति सेना'' नामक संस्था खड़ाकर ''मधेश मुक्ति आन्दोलन'' के समर्थकों को सताना आरम्भ किया, कई अनजान मारे भी गये और इस कुकर्म के लिए रघुनाथ ठाकुरजी को दोषी ठहराते हुए, सरकारी संचार माध्यमों के द्वारा भ्रमात्मक प्रचार करवाकर, पंचायती व्यवस्था काल के शुरूवात में ही इन्हें अराष्ट्रिय तत्त्व घोषित करते हुए देखते ही इन्हें मार देने का आदेश दे दिया गया। ये भूमिगत हो अपना निर्वासित जीवन भारत में बिताने लगे। जहाँ तक मुझे मालुम हुआ है, इस चक्रव्यूह के तहत सर्वप्रथम मोरङ्ग जिला के कटहरी निवासी **श्री शनिश्चर चौधरी** जो तराई कांग्रेस के समर्थक थे, अब पंचायती व्यवस्थाकाल में मधेश मुक्ति आन्दोलन से जुड़ चुके थे। इन्हें जानकारी मिल चुकी थी कि अब ये पकड़ लिये जायेंगे और मार दिये जायेंगे। अत: दूसरे के हाथों मरने के बजाय अपने ही हाथों मर जाना बेहतर समझे होंगे। अन्तत:

(तारीख याद नहीं) ने, उनको साथ देने वाली पत्नी को मध्य रात में बन्दूक की गोली से मार अपने-आपको भी गोली से मार दिया।* इसके बाद इस आन्दोलन के कट्टर समर्थक श्री सत्यदेवमणि त्रिपाठी एवम् रघुनाथ राय के सीने को सरकारी गोली ने छलनी-छलनी कर दिया।

इसी क्रम में झुर्कीया निवासी (जि. मोरङ्ग) श्री रामलाल अमात्य के शब्दों में, ये मधेश मुक्ति आन्दोलन के समर्थक थे, गोप्य रूप से पुस्तकें, पर्चा-पम्पलेट वितरण किया करते थे। एक बार पकड़ लिए गये परन्तु प्रमाण के अभाव में मरते-मरते बच गये। चूँकि, इनके पकड़े जाने का आभास पाते ही इनकी पत्नी घर में रक्खे सारे प्रमाणों को चूल्हे में जला चुकी थी। ये अब तक जीवित हैं और ने. स. पा. के समर्थक हैं।

इस तरह सरकारी आतंक का शृजना ऐसा खड़ा किया गया कि लोग डर के मारे इनका नाम भी जुबान पर लाना छोड़ दिये। इधर निरंकुश पंचायत काल की क्रूर शासन व्यवस्था ने तीस वर्ष के दौरान नयी पीढ़ी के युवाओं को पंचायती व्यवस्था का मंत्र इस तरह पिलाना शुरू कर दिया कि मधेशी वर्ग के अधिकार की प्राप्ति के लिए अपनी जान की कुर्बानी देने वाले अमर शहीदों का परिचय तक भी नहीं जान सका। शासक वर्ग तंत्र का उद्देश्य ही यही था कि ये लोग अपना इतिहास न जाने, अपने अधिकार के प्रति जागरूक न हो सके। इसका दोष विगत के जानकार, स्वार्थी, पदलोलुप, शोषक मधेशी नेताओं पर जाता है।

विगत की निरंकुश निर्दलीय पंचायती व्यवस्था एवम् आज के प्रजातांत्रिक बहुदलीय व्यवस्था में भी उसी तरह के, कोई जानबूझकर निजी स्वार्थ में निर्लिप्त हो, तो कोई अनजाने में अज्ञानतावश कांग्रेस-कम्युनिष्ट-रा. प्र. पा. में लगे मधेशी नेतागण मधेशी कौम की राष्ट्रीय प्रतिष्ठा, अपने आत्मसम्मान के प्रति उदासीन दिखाई दे रहे हैं। उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब कल के युवा वर्ग सच्चाई से अवगत हो, राजनीतिक रूप से चेतनशील होंगे तो ये नेतागण श्रद्धा के पात्र नहीं समझे जायेंगे।

उद्देश्य

अपने संस्मरण, रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" को नजदीक से जानने वालों से साक्षात्कार एवम् सम्वाद तथा स्वयं रघुनाथ ठाकुरजी के द्वारा लिखित पर्चा-पम्पलेट व पुस्तकों के आधार पर उनका संक्षिप्त जीवन वृत्त आपके सामने प्रस्तुत करने का उद्देश्य राज्य संस्था के प्रति अनादर पैदा करवाना या आपसी वैमनष्य को बढ़ावा देना नहीं है। अपितु, सही तथ्यों को समझने-समझाने का प्रयास मात्र है। ताकि, अब भी शासक वर्ग पूर्वाग्रह को भुलाकर यह समझें कि मधेशीयों की समस्या जातीय समस्या नहीं है, बल्कि गम्भीर राष्ट्रीय समस्या है। जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता है। क्योंकि मधेशियों के हक-अधिकार की आवाज उठाने वालों को अज्ञानतावश साम्प्रदायिकता की संज्ञा देते आया है। कइयों ने यहाँ तक कहा है कि बहुदलीय प्रजातंत्र की पुन:स्थापना से पहले यह आवाज कहाँ थी ? मेरा उद्देश्य उन भाइयों को समझाने का है कि मधेशियों की इस शाश्वत आवाज का आभास उसी रोज से होता है, जिस वक्त १८१४ ई. में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सरकार ने नेपाल पर आक्रम किया था। मधेशियों की अपनी शासन व्यवस्था नहीं थी, नेतृत्त्व देने वाला नेता नहीं था। जनता अपने बारे में अनजान

* परिशिष्ट में—३० अगस्त १९६९ ई. की ब्लिट्ज पत्रिका में छपे समाचार को पढ़ें।

एवम् अशिक्षित थी। उस लड़ाई में नेतृत्त्वविहीन, असंगठित, मूक और असहाय अवस्था में, गोरखा शासक वर्ग तंत्र के जुल्म व अत्याचारों से पीड़ित मधेशी जनता अंग्रेजों के अधीन रहना स्वीकार किया और अंग्रेजों का साथ दिया।

गोरखा सरकार के हाथ से तराई मधेश और मधेशी जनता निकल जाने के कारण अपने भारदारों को पालने के लिए याचना करने पर अंग्रेजों से सालाना दो लाख रुपया प्राप्त किया करता था। बाद में अपने-आपको अंग्रेजों का वफादार साबित करने के बाद ही अंग्रेजी शासक खुश होकर तराई मधेश को पुन: गोरखाली सरकार के हवाले करते हुए सलाना देने वाले रकम को बन्द कर दिया। देखिये ८ दिसम्बर १८१६ ई. में महाराजाधिराज गिरवाण युद्ध विक्रम शाहदेव एवम् ब्रिटिश इस्ट इण्डिया कम्पनी सरकार के बीच हुई संधि की धारा (६) और धारा (७)। संधि की धारा (७) के मुताबिक अंग्रेजों ने गोरखाधिश को, तराई मधेश के सुपुर्दगी के बाद बदले की भावना से अभिप्रेरित हो तराई मधेशियों के साथ किसी तरह का अत्याचार नहीं करने के लिए रोक लगाई थी। क्योंकि, पूर्व में मधेशी लोग लड़ाई के वक्त गोरखाली सरकार को साथ न देकर अंग्रेजों के साथ मिल गये थे।

उसी मूक, दबी हुई मधेशियों की शास्वत आवाजों का गहनतम अध्ययन करने के बाद ही १४४ वर्ष बाद प्रमाणिक ऐतिहासिक एवम् प्राचीन दस्तावेजों के आधार पर १९५८ ई. से ही संगठित रूप से अहिंसात्मक आन्दोलन का बिगुल बजाते हुए रघुनाथ ठाकुर ''मधेशी'' २०३८ साल (२१-६-१९८१ ई.) में अमर शहीद हो गये।

राजनीतिक पार्टी बदनाम होता है निम्न स्तर के स्वार्थी एवम् पदलोलुप व्यक्तियों के नेतृत्व के कारण ही। वर्ना, ने. स. पा. या ने. स. पा. (आर) और कुछ नहीं मधेशी कौम की दबी हुई शास्वत आवाज की एक निरन्तर कड़ी है। शहीदों के बलिदानी व खून की पुकार है।

इसके माध्यम से मेरा उद्देश्य, उन नयी पीढ़ी के युवाओं को समझाने का है, जिन्हें ''पंचायती व्यवस्था-कांग्रेस-कम्युनिष्ट'' के सिवाय अपने ही देश के भीतर घटित ऐतिहासिक घटनाओं के बारे में कोई जानकारी नहीं है। आज की अवस्था में, पहाड़ के या यूँ कहें, नेपाल के पहाड़ी ब्राह्मण, क्षेत्री जैसे जातियों के उन युवाओं को मैं दोषी नहीं मानता जो मधेशियों को भारतीय नागरिक समझ, अपने-आप को ही सिर्फ असली नेपाली नागरिक समझने की भूल करते हैं। क्योंकि, उन्हें यह नहीं मालूम कि इनके ही पूर्वज असली भारतीय नागरिक हैं जो प्रवासी के रूप में भारत के कुमायूँ, कन्नौज, कान्यकुब्ज और गढ़वाल क्षेत्र से आये थे। मिथिला के राजा जनक और भगवान बुद्ध से पहले गोरखा के राजा पृथ्वी नारायण शाह भी यहाँ नहीं आये थे।

सही माने में मेरा उद्येश्य इतना ही है कि सही तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर संकीर्णता भरा विचार को त्याग दें। हम सभी निकट भविष्य में बीसवीं सदी को पार कर इक्किसवीं सदी की ओर उन्मुख हैं। अत: आज भी मधेशियों के अधिकार का खिल्ली न उड़ायी जाय। हम सभी सच्चे नेपाली नागरिक की तरह एकजुट होकर राष्ट्रीय विकास एवम् प्रजातंत्र में प्रदत्त जनता के सार्वभौम सत्ता की सुरक्षा करें। प्रजातंत्र की भावना को सुदृढ़ व शक्तिशाली बनावें।

जय मातृ-भूमि !

✍ लेखक

शहीद रघुनाथ ठाकुर "मधेशी"—संक्षिप्त जीवन वृत्त

जन्म, शिक्षा तथा छात्र जीवन

जन्म :—रघुनाथ ठाकुरजी का जन्म ११ जुलाई १९३४ ई. में विगत के भलाभलेनी हरिनगरा जि० मोरङ्ग, वर्तमान में गा. वि. स. हरिनगरा वा. नं.-४, जिला सुन्सरी के मध्यम-वर्गीय किसान स्व० पिता देव सुन्दर ठाकुर के आठ संतानों में तृतीय संतान एवम् पुत्रों में से द्वितीय पुत्र के रूप में हुआ। बचपन से ही ये तेज एवम् चंचल स्वभाव के रहे थे, जो छात्र जीवन में प्रखर रूप से उजागर हुआ।

शिक्षा :—प्रारम्भिक शिक्षा अपने ही गाँव में प्राप्त की। मिड्ल स्कूल की शिक्षा अपने ननिहाल मोतीपुर, जि० सहर्षा (बिहार) तथा हाई स्कूल की शिक्षा हरावतराज उच्च विद्यालय गनपतगंज, जि० सहर्षा (बिहार) में प्राप्त की। मधेशीयों में सम्भवत: प्रथम छात्र के रूप में नेपाल की सरकार से छात्र-वृत्ति प्राप्त कर बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस में आई० ए० के अध्ययनरत छात्र थे।

छात्र जीवन :—इनके तत्कालिन सहपाठी के शब्दों में, ये ऐसे कुशाग्र बुद्धि, तेजस्वी व मेधावी छात्र थे कि वर्ग में विषय-वस्तु को लेकर शिक्षक भी इनसे परेशान हो जाया करते थे। ये शरारती भी वैसे ही थे। छात्रावस्था से ही ये विद्रोही स्वभाव के थे। सच्चाई एवम् उचित न्याय का प्रबल समर्थक तथा अन्याय, शोषण व अत्याचार करने वालों के कट्टर विरोधी के रूप में जाने जाते थे। किसी भी प्रकार के शोषण के खिलाफ चाहे वह शैक्षिक शोषण हो या सामाजिक शोषण, संघर्षशील युवा के रूप में आगे बढ़कर नेतृत्त्व सम्भाल लेना इनकी दिनचर्या सी हो गयी थी। इसके बावजूद परीक्षाफल अति संतोषजनक होने के कारण, शिक्षक वर्गों का असीम अनुकम्पा व प्यार अनवरत रूप में प्राप्त था। छात्र जीवन में उनके द्वारा किया गया संघर्ष का प्रथम चरण का एक प्रमाण इस प्रकार है—

हमारा देश, नेपाल, राणाओं की क्रूर शासन व्यवस्था से मुक्त होकर अभी-अभी तथाकथित प्रजातंत्र की खुली हवा में श्वांस फेर ही रहा था। रघुनाथ ठाकुर जी बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के अन्तर्गत बनारस में ही आई० ए० के छात्र थे। उन्हें यह एहसास हुआ कि गोरखा शासक वर्ग के द्वारा विजित क्षेत्र नेपाल, पहाड़ और मधेश क्षेत्र में से पहाड़ तथा मधेश के छात्र-छात्राओं को प्राप्त होने वाली छात्रवृत्ति की सुविधा का शोषण हो रहा है। यह घटना वि. सं. २०१० साल की है।

अकेले ही इन्होंने, तत्कालीन प्रधानमंत्री जनरल मातृका प्रसाद कोइरालाजी से उक्त सम्बन्ध में ध्यानाकर्षण के लिए आग्रह किया। लेकिन, अनसुनी कर देने पर नारायणहिटी राजदरबार के आगे आमरण अनशन शुरू कर दिया। इस क्रम में इनके स्वास्थ्य की स्थिति बिगड़ते देख (जिनके बारे में ये अनजान थे) किसी महानुभाव................के द्वारा,

महाराजाधिराज श्री ५ त्रिभुवनजी के पास खबर पहुँचने पर श्री ५ त्रिभुवन से दर्शन-भेंट एवम् माँगों की पूर्ति का आश्वासन प्राप्त होने के साथ उनका अनशन तोड़वाया जा सका और उपचारार्थ वीर अस्पताल ले जाया गया था।

† उपरोक्त घटना के सम्बन्ध में नेपाल की सरकार को जानकारी प्राप्त होते ही शिक्षा विभाग द्वारा "पत्र संख्या (ख) १०५०, विषय—रघुनाथ जी को अनशनबारे, सिंह दरबार, १, आषाढ़ २०१० साल" के पत्र के अन्त में "भवदीय—शारदा शम्शेर" द्वारा हस्ताक्षरित पत्र दिखाकर, पत्रानुसार माँगों की पूर्ति का व्योहोरा दिखलाकर, उनका अनशन तोड़वा दिया गया। बाद में उन्हें पता चला कि नेपाल की सरकार द्वारा उन्हें धोखा मिला है। उसी वक्त उन्होंने उस पत्र का हवाला देते हुए "हाम्रो उपेक्षा किन ? हमारी उपेक्षा क्यों ?" शीर्षक अन्तर्गत पर्चा निकालते हुए पहाड़ तथा मधेश के छात्र-छात्राओं को अपने अधिकार के प्रति सजग होने का आह्वान किया था। पर्चा एक तरफ हिन्दी और दूसरी तरफ नेपाली में छापा गया है। इस पर्चे को पढ़ने के बाद सहज ही उनके व्यक्तित्व के बारे में अनुमान किया जा सकता है कि उनके दिल में धोखा तथा शोषण के विरुद्ध कितनी तूफानी हल-चल सी होगी। सत्कर्म के प्रति उनकी आस्था, संघर्ष के लिए प्रतिबद्धता और ईमान्दारी की झलक स्पष्ट दिखाई देती है।

उपरोक्त सम्बन्ध में अपने ही गाँव के श्री सत्यदेव लाल देव जी के प्रश्न पूछने पर, ठाकुर जी के शब्दों में :—

"आमरण अनशन की अवस्था में जब मुझे राजदरबार के भीतर ले जाया गया, भीतर के सजावट को देख मैं आश्चर्यचकित था। उससे भी ज्यादा आश्चर्य तब हुआ जब राजा श्री ५ त्रिभुवन जी से साक्षात्कार हुआ। साधारण भेष-भूषा में सामने बैठे श्री ५ त्रिभुवन ने नम्र, मृदु एवम् स्नेहभरा शब्दों में प्रश्न कर बैठे कि "बाहुन नानी तिमीलाई के चाहियो ? अनशन गरेर किन ज्यान गुमाउन खोजेको ? भन्!" मैं बिल्कुल अस्वस्थ्य एवम् बोलने से लाचार था। कुछ नहीं बोल सका। लेकिन मधेशी-पहाड़ी छात्र-छात्राओं के छात्रवृत्ति के सम्बन्ध में माँगे सहित लिखा पत्र राजा को सौंपते हुए अपनी भावना प्रगट कर सका था।" बीच में ही दुबारा प्रश्न पूछने पर कि ठाकुर जी, क्या राजदरबार ले जाते वक्त आपके मन में किसी अज्ञात भय का विचार नहीं आया ? उनका जवाब था—"बिल्कुल नहीं, बल्कि खुशी के साथ भीतर का साहस और प्रबल हो उठा। डर किस बात की होती। प्राण की आहुति देने वाले को किसी भी प्रकार का भय, उसे भयभीत नहीं कर सकता।"

उनके जीवन की विशेषता यह थी कि बाहर रहने पर वे खुद अपने ही हाथों से खाना बनाकर खाया करते थे। जिन्दगी के सफर में उनको साथ देने वाला एक छाता, एक झोला, कुछ किताबें और झोला में खाने के लिए अमरूद व जौ का सत्तू ही होता था और साथ होता था तो शोषक शासक वर्गतंत्रों द्वारा शोषित, अत्याचारों से पीड़ित पहाड़ी एवम् मधेशी मूक जनता का वास्तविक चेहरा। वे बचपन से सात्विक वैष्णव भोजन किया करते थे।

अपने ही गाँव के शिक्षित युवा श्री सत्यदेव लालदेव जी उत्सुकतावश एक रोज उनसे कुछ प्रश्न कर बैठते हैं :—

---

† परिशिष्ट नं.-१ में पर्चा प्रकाशित हैं, देखें।

ठाकुरजी ! आप मांस-मछली क्यों नहीं खाते ? हर वक्त हाथ में छाता क्यों रखते हैं ? आप इतना मेधावी छात्र होने के बावजूद भी बी० ए० पास क्यों नहीं कर सके ? आप विवाह क्यों नहीं करते ?

उनका सहज शैली में उत्तर होता है :—"देखो, माँस-मछली या मांसाहारी भोजन तामसी भोजन है। इससे मानव स्वभाव में कई प्रकार की विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं। ऐसा मैं मानता हूँ। इसलिए वैसा भोजन मैं नहीं करता, किसी को भी नहीं करना चाहिए। छाता इसलिए रखता हूँ क्योंकि यह एक भले आदमी की निशानी है। मैं जानबूझकर बी० ए० पास नहीं किया क्योंकि मैं छात्रवृत्ति पा रहा था। पास करने पर करार के मुताबिक मुझे नेपाल सरकार की सेवा करना पड़ता, जो मधेशियों की परतंत्रता अवस्था में मुझे स्वीकार्य नहीं है। फेल हो जाने पर बाहरी विषय-वस्तु का विस्तृत रूप से अध्ययन करने का बहुत अवसर मिलता था। मैं छात्र-वृत्ति के पैसों में से अन्य महत्त्वपूर्ण किताबें विस्तृत अध्ययन के लिए खरीद लिया करता था। मैं डिग्री हासिल करने के विचार से नहीं पढ़ रहा था। मैं तो विस्तृत ज्ञान एवम् जानकारी के लिए पढ़ा करता था। विवाह इसलिए नहीं करता कि मेरा क्रान्तिकारी स्वभाव जिस तरह का है, उसी तरह की लड़की हमारे समाज में मिल पाना कठिन है। अत: मैं किसी लड़की की जिन्दगी से खिलवाड़ या बर्बाद नहीं करना चाहता।"

उनको नजदीक से जानने वाले व्यक्ति के शब्दों में, ठाकुर जी प्रजातंत्रवादी, समाजवादी, सैद्धान्तिक व्यक्ति ही नहीं, पूर्ण कुशल, व्यावहारिक व्यक्ति भी थे। वे कहा करते थे—"सत्यं वद, धर्मम् चर!" को आत्मसात करते हुए अपने जीवन पथ पर आगे बढ़ता चला जा रहा हूँ।" ये एक कठोर, सहनशील, धैर्यवान, अदम्य साहसी, कठिन परिश्रमी, समाज एवम् राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ और असाध्य प्रत्युत्पन्नमति (PRESENCE OF MIND) के धनी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे। उनके चेहरे से कभी भी निराशा के भाव नहीं झलकता था। उनके हाई स्कूल के छात्र-जीवनकाल की एक रोचक घटना से उपरोक्त व्यक्तित्व का परिचय भी मिलता है, तो प्रदर्शन भी।

विक्रम सम्वत् २००४-०५ साल की बात है। नेपाली कांग्रेस की तरफ से प्रजातंत्र के लिए राणा शासन व्यवस्था के विरुद्ध पर्चा छिड़कने का अभिभारा उन्होंने ली थी। उस रोज अपने ही गाँव में हटिया-बाजार लगा था। लगभग ४-५ बजे शाम को, बाजार में भीड़ होने के बाद, अचानक बिजली की भाँति एक घर के छत पर चढ़ गये। टीन का भोपूँ (स्पीकर) लेकर भाषण करना शुरू कर दिया और ऊपर से पर्चा भी छिड़कने लगे। लोग भौंचक्का सा हो पर्चा भी लेते और उनका सारा खेल देखते रहे। बाजार में हलचल सी मच गयी। जब तक राणाशाही पुलिस पकड़ने आती कि वे बाजार में आये हुए लोगों के बीच शान्त स्वभाव से इस तरह सामान्य व्यक्ति की तरह घूमने लग गये जैसे उन्होंने कुछ किया ही न हो। पुलिस आयी और संयोगवश उन्हीं से सवाल किया कि वह लड़का कौन है, किधर है ? शान्त स्वभाव की मुद्रा में उन्होंने विपरित दिशा की ओर इशारा करते हुए बताया कि हाँ, रघुनाथ ठाकुर उस तरफ भागा है। इसके तुरन्त बाद वे बाजार से निकल पड़े और गाँव के उत्तर बालू बाँध के निकट सिमल के बड़े पेड़ पर चढ़ गये और देर रात वहीं पर बितायी।

माँ, स्व० मूर्ति देवी ठाकुर, के अनुसार एक बार खून के इल्जाम में एक व्यक्ति के साथ (नाम मुझे याद नहीं है, शायद कोई 'पाठक' थे) रघुनाथ ठाकुर को फँसाकर थाने में नजरबन्द कर रखा था। पुलिस मेरे पिताजी से कहने आई कि पंडित जी कुछ पैसा खर्च कीजिये आपके बेटे को बचा दूँगा। पिताजी का प्रत्युत्तर में जवाब था कि उनका बेटा कोई चोर-डाकू नहीं है, मैं घूस के नाम पर एक पैसा भी खर्च करने वाला नहीं हूँ और न हीं किसी को कहने जाऊँगा। भगवान ही उसकी रक्षा करेगा। वह जमाना ऐसा था कि लोग एक भी पुलिस की वर्दी वाले को देखते ही डर के मारे घर में छिप जाया करते थे। अन्त में उक्त व्यक्ति के साथ रघुनाथ जी को भी गाँव से पुलिस विराटनगर गोश्वारा ले जा रही थी। रास्ते में साथ वाले व्यक्ति के साथ काना-फूसी किया कि अगर वहाँ पहुँचा दिये गये तो हम लोग मार दिए जायेंगे। आप हट्टे-कट्टे और मजबूत भी हैं, इस पुलिस को ही मार दीजिये और भाग जाइये। वह व्यक्ति ठीक वैसा ही कर, वहाँ से फरार हो गया और ये भी फरार हो गये।

भारत के स्वतंत्रता सेनानी, जि० अररिया के जयनगर, विहार के निवासी ७५ वर्षीय श्री अमोघ नारायण झा जी के द्वारा जानकारी प्राप्त अनुसार, विद्यार्थी जीवनकाल से ही रघुनाथ ठाकुर का विद्रोही स्वभाव के चलते अपने बड़े भाई साहब श्री विष्णुकान्त ठाकुर (नेपाल के राज्य सभा का सलाहकार सदस्य) के साथ आपस में कभी नहीं बन पाई। कभी-कभी मार-पीट तक की नौबत आ जाया करती थी। विष्णुकान्त जी नहीं चाहते थे कि रघुनाथ ठाकुर कोई ऐसा उग्र काम करे जिससे उनका जीवन बर्बाद हो। वे नहीं चाहते थे कि रघुनाथ ठाकुर मधेश मुक्ति आन्दोलन का शुरूवात करे। उनका तर्क था कि जिस मधेशी के लिए ऐसा करता है वह राजनीतिक रूप से चेतनशील नहीं है और न हीं शिक्षित है कि इस बात को समझ सके। लेकिन रघुनाथ जी पर तो अधिकार के लिए संघर्ष करने का जुनून सवार हो चुका था। वे किसी की भी एक न सुनी और दीवाने की तरह संघर्ष में जुटे रहे। अमोघ जी के अनुसार रघुनाथ जी किसी भी समस्या से घबड़ा कर निराश नहीं होते थे। इस तरह की अवस्था आने पर कुछ भी परवाह किये बगैर संघर्ष करने के लिए आगे बढ़ जाते थे। अमोघ नारायण जी के अनुसार रघुनाथ ठाकुर जी पहला मधेशी छात्र थे जो आमरण अनशन कर पहाड़ी-मधेशी छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्ति दिलाने के लिए संघर्ष किया। आगे उन्होंने जानकारी दी कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्रावस्था में हिन्दी विभाग के हेड ऑफ दि डिपार्टमेन्ट, प्राध्यापक श्री पद्मनारायण आचार्य के साथ रघुनाथ ठाकुर की नितान्त व्यक्तिगत जीवन को लेकर (आशय है इनके परिवार में ठाकुर जी का विवाह होना) इन्कार किये जाने पर अनबन हो गयी। पीछे चलकर यह दुश्मनी में बदल गयी। अन्तत: अनेक तरह का बाधा-अड़चन करते हुए उनकी छात्रवृत्ति रूकवा दी गयी। इसके चलते उन्होंने लगभग ६० वीं दशक की बात है, दिन के उजाले में पेट्रोमैक्स जला, अपने माथे पर रख, भारत के संसद भवन के आगे चक्कर लगा रहे थे। तभी भारतीय नेता आचार्य कृपलानी एवम् अन्य सांसदों ने प्रश्न पूछा कि यह तुम क्या कर रहे हो ? रघुनाथ जी ने जवाब दिया था—"JUSTICE IS LOST OR VANISHED FROM INDIA AND NEPAL. I AM IN SEARCH OF IT WITH THE HELP OF PETROMAX IN THE BROAD DAY LIGHT."

भारतीय स्वतंत्रता सेनानी श्री अमोघ बाबू अपने याद्दास्त पर बल देते हुए कहते हैं। उपरोक्त जवाब पर, उसी हेडिङ्ग पर, रघुनाथ जी ने अंग्रेजी में एक बुकलेट छापा था, जिसे मैंने पढ़ा तो था लेकिन उसका कन्टेन्ट अभी याद नहीं आ रहा है। शुरू-शुरू में रघुनाथ जी की बात पर ध्यान नहीं दिया उनको गलत ही समझता था। लेकिन बाद में उनके द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तक "परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति" को पढ़ने के बाद यथार्थ विषय-वस्तु को समझ सका और उनके ऊपर विश्वास भी जगा। बहुत ही मेहनत के बाद उन्होंने इस किताब को लिखा है। आज आप लोगों ने नेपाल सद्भावना पार्टी के मार्फत उनकी बात को आगे बढ़ा रहे हैं, लोगों में जानकारी का प्रवाह कर रहे हैं—मुझे खुशी है, इसी बात पर एक दोहा याद आया—

"चले आये हैं, पगडण्डी बनाते इस किनारे तक,
खुशी है, अब उसे चौरस बनाते वाद वाले हैं॥"

इस दोहे के साथ अपनी बात को समाप्त करते हुए, मेरे हौसले को उन्होंने और बढ़ा दिया।

राजनीतिक जीवन

अहिंसात्मक आन्दोलनकारी के रूप में रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" :—स्मरण दिलाना चाहूँगा कि रघुनाथ जी नेपाल में प्रजातंत्र के पक्ष में समाजवादी सिद्धान्त के कट्टर समर्थक थे तो मधेशीयों के प्रति हो रहे भेद-भाव, अन्याय, अत्याचार और राजनीतिक शोषण के विरुद्ध में "शान्तिपूर्ण अहिंसात्मक आन्दोलन" के पक्षधर भी थे। फिर भी उनका मानना था कि अहिंसा की अपनी अलग-अलग परिस्थिति में अलग-अलग भूमिका होती है।

अत: मेरे विचार से अहिंसा का अर्थ डरपोकपना नहीं समझना चाहिए। किसी भी तरह के जुल्म-अत्याचार के विरुद्ध अहिंसात्मक विरोध करते रहने के बावजूद दमन का सिलसिला बढ़ता ही जाय तो उसका मुकाबला शक्ति से करना ही पड़ता है, जिसे हिंसा नहीं माना जाना चाहिए। महापुरुष भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा का अर्थ कुछ ऐसा ही लगता है।

अपने आँखों के सामने अपने ही गाँव तथा जिला में शासक वर्गतंत्र की एक कड़ी के रूप में जमींदारों एवम् प्रशासनिक निकायों के द्वारा मधेशियों के प्रति हो रहे अमानवीय व्यवहार के चलते शासक वर्गों के प्रति विरोध की भावना प्रबल रूप से जाग उठी होगी। विश्लेषण करने पर समझ में आ जाती है कि मधेशी जनता के प्रति शासक वर्गों के द्वारा विसंगतिपूर्ण व्यवहार के चलते ही रघुनाथ जी के मन में आकुलतावश प्रश्न उठा होगा कि :—

(क) हम मधेशी क्यों कहे जाते हैं ?
(ख) मधेशीयों के साथ, पहाड़ी नेपाली नागरिकों के तरह व्यवहार क्यों नहीं किया जाता है ?
(ग) हम परतंत्र नागरिक की तरह क्यों व्यवहारित किये जाते हैं ?
(घ) विश्व की भूगोल की परिभाषा में पहाड़ के निचले समतल भू-भाग को तराई क्षेत्र, अंग्रेजी भाषा में PLAIN LAND कहा जाता है, लेकिन आधुनिक नेपाल के इस भू-भाग को तराई मधेश क्यों कहा जाता है ?

लगा था। लेकिन इस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं कर सका। रघुनाथ ठाकुर जी द्वारा संचालित आन्दोलन और भी सशक्त रूप से आगे बढ़ने लगा।

साप्ताहिक चिराग पत्रिका में रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" को "सरकारी पंडे", नेपाल की सरकार का गुप्तचर, जाली लेखक और अन्य मनगढन्तं, जनता को भ्रम में डालने के लिए समाचार छापा था।

† तभी उपरोक्त समाचार का खण्डन करते हुए "भ्रमात्मक प्रचारों से सावधान" नामक लम्बा सा पर्चा द्वारा प्रारम्भिक संगठन समिति (मधेश मुक्ति आन्दोलन) ने "चिराग" पत्रिका के सम्पादक को फटिचर का संज्ञा देते हुए प्रश्न पूछा था कि—अगर रघुनाथ ठाकुर जाली लेखक हैं तो—(क) परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति, (ख) राद्रोह बनाम वस्तुस्थिति पर पर्दा, (ग) मधेश आन्दोलन के प्रस्ताव और उनकी व्याख्या, (घ) नेपाल में भारत विरोधी भावना का रहस्य, नाम के पुस्तकों का असली लेखक कौन है ? जवाब दो। कौन सी उनकी फर्जी प्रेमिका ने गुप्तचरी का काम किया, उसे सामने क्यों नहीं लाते ? आदि-इत्यादि.....।

विद्रोही व क्रान्तिकारी राजनीतिज्ञ के रूप में :—रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तक "परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति" का गहराई से विश्लेषण करने पर पता चलता है कि सच्चे राष्ट्रभक्त के रूप में मधेशी पहचान के साथ आधुनिक नेपाल राष्ट्र का समष्टिगत विकास एवम् राष्ट्रीयता की भावना को मजबूती प्रदान करवाना ही उनके अहिंसात्मक आन्दोलन का मुख्य लक्ष्य था। उनके वक्तव्य से साफ-साफ पता चलता है कि वे आधुनिक नेपाल राष्ट्र का विखण्डन नहीं चाहते थे। भेदभावों के अन्त के साथ देश के विभिन्न वर्णों के जात-जातियों, भाषा-भाषियों के बीच सामाजिक एवम् राजनीतिक समानता को व्यवहारिक रूप में प्रयोग होते देखना चाहते थे। शासक वर्गों की नीयत स्वच्छ नहीं होने के कारण, समस्या-समाधान करने के विपरीत तथाकथित प्रजातंत्रवादीयों का आक्रामक रवैया के चलते तथाकथित प्रजातांत्रिक अवस्था में ही पत्नी सहित शनिश्चर चौधरी को खुद ही गोली का शिकार होना पड़ा। निरंकुश निर्दलीय पंचायती व्यवस्था के आगमन के साथ शासक वर्गों के आक्रामक रवैया में अत्यधिक तीव्रता आई। परिणामस्वरूप सरकार द्वारा देखते ही इन लोगों को मार देने का आदेश दे दिया गया। इस तरह, प्रकृति के नियमानुसार मानवीय स्वभाव अनुरूप आन्दोलनकारियों की सहनशीलता का सीमा रेखा पार कर गया होगा और विवश हो, ये लोग भी आक्रामक रूख अपनाते हुए विद्रोही व क्रान्तिकारी के रूप में देश के विभिन्न जगहों पर "मधेश जन-क्रान्तिकारी दल", "मधेश मुक्ति मोर्चा", "मधेश सेना" के नाम से संस्था खड़ा कर संघर्ष की तैयारी में जुट गये होंगे। इसी दौरान श्री ५ महेन्द्र द्वारा जिला, अंचल और विकास क्षेत्र के नाम पर आधुनिक नेपाल राष्ट्र का पुनर्गठन किया गया। इसी वक्त रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" ने "मधेश के पुनर्गठन करने का अधिकार मधेशीयों का है" नामक पुस्तक प्रकाशित कर देश के नेता व राजा को सूचित किया होगा। इस पुस्तक का खोज कर रहा हूँ, जो अब तक उपलब्ध नहीं हो सका है।

---

† परिशिष्ट में छपे पर्चे को विस्तृत रूप में देखें।

उपरोक्त सन्दर्भ में बताना चाहूँगा कि यह १९६४-६५ ई. की बात है। मैं बिहार में सहर्षा जिला के उच्च विद्यालय, बलुवा बाजार का दशवीं कक्षा का छात्र था। विद्यालय में अवकाश होने पर गाँव लौटते वक्त नेपाल-भारत की सीमा से जुड़ने वाला गाँव कसानगंज और देवानगंज है, देवानगंज पहुँचने पर एक बूढ़ा सा प्रहरी हवलदार (जिसका नाम मुझे याद नहीं) ने मुझसे कहा "तिम्रो दाजु रघुनाथ ठाकुर हिजो सरकारी गोली खायेर मऱ्यो" नेपाल रेडियोबाट समाचार सुनेको। मुझे विश्वास नहीं हुआ क्योंकि इसके चार-पाँच रोज पहले ही रघुनाथ जी मुझसे मिलने छात्रावास में आये थे और जोगबनी में अपने डेरे का पता देकर लौट आये थे कि घर में किसी तरह की समस्या खड़ी हो तो मुझे खबर करना।

शाम को घर पहुँचते ही मैंने पिताजी से कहा, उन्होंने अगले दिन ही सही जानकारी प्राप्त करने के लिए मुझे जोगबनी जाने को कहा। बड़ी मुश्किल से विश्वस्त होने के बाद ही एक अनजान व्यक्ति ने भाई साहब से मुलाकात करवायी। भाई साहब शोकाकुल अवस्था में बताये कि रघुनाथ राय नाम का व्यक्ति जो मेरा और मेरे आन्दोलन का कट्टर समर्थक था, मेरा दाहिना हाथ था, मारा गया है। उन्होंने कहा रघुनाथ राय जी को मारने के बाद सरकारी संचार माध्यम के द्वारा मेरे मारे जाने का प्रचार करने का अर्थ यही हो सकता है कि "मधेश मुक्ति आन्दोलन" के समर्थक एवम् सहयोगी व्यक्ति हतोत्साहित होकर नेतृत्त्व के अभाव में शान्त हो जाय। उन्होंने रघुनाथ राय के बारे में बताया कि उनमें एक कमी थी कि जिस जगह वह कोई घटना कर बैठता था, दूसरे रोज किसी अप्रिय घटना का परवाह किये बगैर फिर घटनास्थल के इर्द-गिर्द मुआयना के लिए खुद पहुँच जाया करते थे। बाद में सारी कहानी सुना दिया करते थे। मैं बहुत डाँटा किया करता था। मैं समझाया करता था आपका बचना जरूरी है, अगर मारे गये तो मैं बिल्कुल अकेला सा हो जाऊँगा। लेकिन उनका जवाब होता था—ठाकुर जी आप मेरे बारे में चिन्तित न हों, मुझे कुछ नहीं होगा। ऊपर वाले की जो इच्छा है, वही होगा। इनकी मृत्यु की पुष्टि हिन्दुस्तान के महत्त्वपूर्ण समाचार पत्र† "ब्लिट्ज" (३०-८-१९६९ ई.) के बारह नम्बर पेज में छपे समाचार से होती है। जिसमें सत्यदेवमणि त्रिपाठी की भी हत्या का जिक्र है।

एक बार पंचायती काल के दौरान रघुपति जुट मिल के मजदूरों ने अपनी मांग सहित हड़ताल कर दी थी। इस हड़ताल में पहाड़ी एवम् मधेशी मजदूर साथ-साथ थे। विराटनगर के सी. डी. ओ. ने हड़तालियों को रोकते हुए कहा—"तुम मूजी मधेशीया लोग अपनी माँग इन्दिरा के पास रक्खो।"

सी. डी. ओ. द्वारा भाषा प्रयोग की प्रतिक्रिया में निम्न शीर्षक अन्तर्गत पर्चे के मार्फत मधेश जन-क्रान्तिकारी दल ने श्री ५ की सरकार से जवाब-तलब किया था कि "मूजी मधेशीया इन्दिरा के पास अपनी माँग क्यों रखने जायँ ? जवाब दो! अभागे भारतीयों की कहानी कौन जानता है ? कृतघ्न गोरखाली सरकार मधेश छोड़ो। मधेश के मीलों का प्रबन्ध, मधेशी मजदूरों के हाथ सौंपो।"*

† परिशिष्ट में उक्त समाचार को देखें।
* परिशिष्ट में छपे पर्चे को पढ़ें।

उपरोक्त सच्चाई का गहराई से अध्ययन एवम् चिन्तन करने पर अनुमान लगाया जा सकता है कि अहिंसात्मक आन्दोलन की बात को अनसुनी करते हुए गोरखाली सरकारी तंत्र के मार्फत मधेशीयों एवम् उनके हिमायती नेताओं के उपर अत्याचार का सिलसिला बढ़ता ही गया होगा। इसके बाद ही विद्रोहियों का उग्र रूप ने "मधेश जन-क्रान्तिकारी दल" नामक संगठन का जन्म दिया। "मधेशी आवाज" नामक दूसरे हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका का उदय हुआ। सम्पादक स्वयं रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" ही थे। पंचायती काल के आगमन के साथ ही रघुनाथ ठाकुर जी को देखते ही मार देने का आदेश तो दे ही दिया गया था। वे निर्वासित जीवन भारत में भी अपने-आपको असुरक्षित महसूस किया करते थे—अत: सतर्क रहा करते थे। कई बार आक्रमण से बच निकले थे।

अपने निर्वासित जीवन काल में, जान की परवाह किये बिना, विभिन्न रूप बदलकर कभी पंजाबी, मौलवी, अघोरी बाबा तो कभी फकीर के भेष-भूषा में अपने देश के भीतर प्रवेश कर, गोरखाली शासक वर्गतंत्र के द्वारा मधेशीयों के प्रति हो रहे अत्याचार एवम् शोषणों का विवरण संकलन कर "मधेशी आवाज" पत्रिका में उसे प्रकाशित किया करते थे।

(**प्रसंगवश एक रोचक घटना** :—१९६६ ई. में पिताजी के स्वर्गवास होने पर, श्री ५ की सरकार को पूरा विश्वास था कि श्राद्ध कर्म-क्रिया के अवसर पर रघुनाथ ठाकुर जी आयेंगे हीं अत: उनकी गिरफ्तारी की तैयारी गोप्य रूप से की जा चुकी थी। मैं और सबसे बड़े भाई साहब विष्णुकान्त ठाकुरजी श्राद्ध-कर्म पर व्यस्त था। रघुनाथ जी एक फकीर के भेष-भूषा में विभिन्न दरवाजे-दरवाजे भीख माँगते हुए अपने घर के आंगन में सीधे चले आये। घर की महिलाएँ बाहर जाने को कहा तभी उन्होंने माँ का पैर छूकर प्रणाम करते हुए अन्य लोगों को इशारे से चुप रहने को कहा। अपना रश्म अदाकर चले गये पर गिरफ्तार नहीं किये जा सके।)

वि. सं. २०२६ साल श्रावण २१ गते (५अगस्त १९६९ ई.) में प्रकाशित "मधेशी आवाज" पत्रिका में संकलित समाचारों को पढ़ने पर तो दिल दहल जाता है। इस अंक में छपे समाचार का शीर्षक इस प्रकार है—"श्री ५ महेन्द्र के शासन का मखौल या ढोल का पोल" अत्याचारों, बर्बरताओं, पाशविक कुकर्मों का भण्डाफोड़। समाचार में मूक मधेशी जनताओं के साथ लूट, बलात्कार, आगजनी, बेदखली, फर्जी चोरी-डकैती मुकदमों में फँसाकर मधेश से

मधेशी को भगाने का षड़यन्त्र के बारे में छापा गया है। लगभग डेढ़ सौ से भी अधिक आदिवासी मधेशीयों के नाम व पते छापे गये हैं, जिन्हें आतङ्क और मृत्यु के डर से भारत में शरण लेना पड़ा। *नोट* :—"मधेशी आवाज" पत्रिका का उपरोक्त अंक २०५१ साल आषाढ़ महीना तक मेरे पास था। "शहीद स्मृति" दिवस के दिन किसी महानुभाव ने लिया जो अब तक लौटकर मेरे पास नहीं आया, तलाश में लगा हुआ हूँ।

मानवाधिकार के तहत, मधेशियों के प्रति हो रहे अत्याचारों को लेकर रघुनाथ ठाकुर ने दिल्ली में सांसदों के मार्फत संसद में प्रश्न उठवाये थे। इसके लिए भारत की सरकार द्वारा नेपाल में भारतीय राजदूतावास से उपरोक्त अत्याचारों के सम्बन्ध में पूछने पर जवाब मिलता रहा कि नेपाल में भारतीयों के साथ किसी तरह का अत्याचार नहीं हो रहा है और मंत्री लोग सदन को दूतावास के जवाब को प्रस्तुत करते रहे। इसकी पुष्टि के लिए "हिन्दुस्तान" दैनिक ३० नवम्बर १९६७ ई. पृष्ठ-५ कॉलम २, ३, नई दिल्ली "नवभारत टाइम्स" दैनिक, ३० नवम्बर १९६७ ई. पृष्ठ ८ कॉलम १, २ के समाचार को पुनरावलोकन किया जा सकता है।

विश्लेषण करने पर पता चलता है कि भारत के विदेश मंत्री का सदन को जवाब ठीक ही था। क्योंकि वास्तव में अत्याचार तो मधेशियों के साथ हो रहा था, न कि भारतीय नागरिकों के साथ। मधेशी सदियों से शोषित एवम् उपेक्षित था और आज भी है।

गोरखा सरकार द्वारा पूर्व नियोजित षड़यंत्र के तहत, भारतीय सरकार को उल्टी-सीधी पट्टी पढ़ाकर ठाकुर जी को दिल्ली में एक बार नजरबन्द करवा दिया था—यह कहकर कि उक्त व्यक्ति दिल्ली में किसी बड़े राजनयिक का हत्या करने वाला है। इन्हें रूसी दूतावास के आगे गिरफ्तार किया गया था। बाद में असलियत का पता चलने पर भारत की सरकार इन्हें छोड़ दिया।

पटना एवम् दिल्ली में बैठकर मधेशीयों की शास्वत आवाज को विश्व के कोने-कोने में फैलाने के उद्देश्य से तत्कालीन भारत के राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, भारत के जाने-माने विभिन्न राजनीतिक हस्तियाँ, विभिन्न राष्ट्रिय पत्रिकाओं के सम्पादकों और भारत में विदेशी राज-दूतावासों को अपने द्वारा लिखित पुस्तकों की प्रतिलिपि दे देकर प्राप्तकर्ता से हस्ताक्षर करवा लिया करते थे। उस डायरी का कुछ अंश मेरे पास उपलब्ध है। कइयों ने हस्ताक्षर कर पुस्तकें लीं, कइयों ने पुस्तकें तो लीं पर न जाने हस्ताक्षर करने से इन्कार क्यों किये।

उनकी डायरी से :—

	नाम	तारीख	हस्ताक्षर
१.	स्वतंत्र पार्टी के नेता राजा बहादुर श्री कामाख्या ना० सिंह	७-१-'६२ ई.	✓
२.	मुख्यमंत्री पं० विनोदानन्द झा, बिहार	८-१-'६२ ई.	×
३.	डा० राम मनोहर लोहिया	१०-१२-'६४ ई.	✓
४.	मुख्यमंत्री के० बी० सहाय	२४-४-'६५ ई.	×
५.	भारत के राष्ट्रपति	११-४-'६७ ई.	×
६.	भारत के रक्षामंत्री	१४-४-'६७ ई.	×
७.	भारत के संचार तथा संसदीय मंत्री रामसुभग सिंह	११-४-'६७ ई.	✓
८.	औद्योगिक विकास मंत्री श्री फखरूद्दीन अली अहमद	१३-४-'६७ ई.	✓

९. इस्पात खान मंत्री डा० चन्ना रेड्डी	१४-४- '६७ ई.	✓
१०. यातायात मंत्री डा० वी० के० आर० वी० राव	१४-४- '६७ ई.	✓
११. रेलवे मंत्री सी० एम० पूनाथा	१२-४- '६७ ई.	✓
१२. कानून मंत्री गोविन्द मेनन	१२-४- '६७ ई.	✓
१३. उड्डयन मंत्री डा० करण सिंह	१३-४- '६७ ई.	✓
१४. व्यापार मंत्री दिनेश सिंह	१३-४- '६७ ई.	✓
१५. सूचना मंत्री के० के० शाह	१२-४- '६७ ई.	✓
१६. शिक्षा मंत्री डा० त्रिगुण सेन	१८-४- '६७ ई.	✓
१७. योजना मंत्री अशोक मेहता	११-४- '६७ ई.	✓
१८. कृषि मंत्री जगजीवन राम	१२-४- '६७ ई.	✓
१९. श्रम तथा पुनर्वास मंत्री जय सुखलाल हाथी	१२-४- '६७ ई.	✓
२०. गृहमंत्री वाई० बी० चौह्वाण	१२-४- '६७ ई.	✓
२१. उप-प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई	१२-४- '६७ ई.	✓
२२. प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी	१२-४- '६७ ई.	✓
२३. श्री गुलजारी लाल नन्दा, संसद सदस्य	२४-७- '६७ ई.	✓
२४. संस्द सदस्य जे० वी० कृपलानी एवम् श्रीमती सुचेता कृपलानी	२४-७- '६७ ई.	✓

लूटेरों का यह नगर है।

प्रो० भाग्यनाथ प्र० गुप्ता
महामंत्री, ने. स. पा. (आर.)

ईन्साफ का न मन्दिर, न न्याय का डगर है,
वस्ती है सहमा-सहमा, लूटेरों का यह नगर है,
पड़ोसी ने आँखें बन्द, और कान किया बहरा,
आवाज देना व्यर्थ होगा, यह राज बहुत गहरा,
सफर कठिन लम्बा, नाकाम नहीं होगा,
पाँवों तले तुम्हारे, शिखर पर मुकाम होगा,
ईन्साफ का न मन्दिर................ ।
उदर में जोंक भर जाने से, तन बेजान हो गया है,
अपने पुर्खों की वस्ती, अब अंजान हो गया है,
चिड़िया चुग रही है दाना, और बेखबर सियासी,
मोती उगलने वाली, धरती है कब से प्यासी,
पसीना नहीं है काफी, लहु से ईनके सिंचो,
दल-दल में फँसा गाड़ी, खुद कंधों के बल से खींचों,
ईन्साफ का न मन्दिर................ ।

कफन भी उनका रोता, जो जुर्म सहन करता,
चिता भी मुस्कुराता है, जो शहीदों का दहन करता,
जाँगर नहीं है जिसमें, अवसर को वही खोता,
साहस नहीं है जिसमें, किस्मत को वही रोता,
ईन्साफ का न मन्दिर................ ।
अस्मत को बेचकर जो, सियासत का डोली ढ़ोते,
ईमान जिनका तिजारत हो, वे घड़ियाली आँसू रोते,
कितना सही है कहना, कावूल में गधे भी होते,
बेजान सी वस्ती में, एक बूढ़े को लड़ते देखा,
टूटे हुए तलवार ले, डालों पे अड़ते देखा,
जब तलक नहीं जगेगा, युवा पीढ़ी तुम्हारा,
डगमगाते हुए कस्ती को, मिलेगा नहीं किनारा,
ईन्साफ का न मन्दिर................ ।

भारत के जाने माने राजनीतिज्ञ स्व० डा० राममनोहर लोहिया जी ने मधेशियों की बात को सहानुभूतिपूर्वक तो ली पर न जाने कौन सी मजबूरी के कारण उन्होंने ठाकुर जी से कहा— "देखो ! तुमने सही तथ्यों पर आधारित कठिन एवम् गम्भीर समस्या को सामने रखा है। लेकिन, भारत में पथ-भ्रष्ट राजनीतिज्ञ और नौकरशाहों के बीच मेरा बोलना ठीक नहीं होगा। इसलिए मुझे परेशान मत करो।"

वस्तुस्थिति का सिंहावलोकन कर, राणा शासन काल की व्यवस्था से लेकर आज तक की व्यवस्था पर पुनर्विचार करें तो उपरोक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर पुष्टि होती है कि वास्तव में हम कल तक तो गुलाम थे हीं, आज भी हम मानसिक रूप से गुलाम ही हैं। क्योंकि राष्ट्रीय प्रतिष्ठा व सम्मान के बिना, राजनीतिक अधिकार के बिना तो मनुष्य गुलाम ही समझा जाता है। हम मनोवैज्ञानिक रूप से दासत्व की जिन्दगी जी रहे हैं। हम अनजाने में पदलोलुप एवम् व्यक्तिगत स्वार्थ में निर्लिप्त मधेशी नेताओं की बोली में आ-आकर अपने ही उपर शासन करने वाले को वोट देते आ रहे हैं। कभी पंचायती व्यवस्था के नाम पर तो आज प्रजातंत्र-कांग्रेस-कम्युनिष्ट के नाम पर। हम मधेशी जनता एक दूसरे का मुँह देख रहे हैं और शासक वर्ग हमारे अधिकार की उपेक्षा करते हुए अपने ही वर्गहित में लीन हैं।

मेरे साथ ही, व्यक्तिगत और पारिवारिक समस्या को लेकर रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" के साथ हुए वाद-विवाद का चर्चा करना चाहूँगा—यहाँ भी आप उनके अन्दर मधेशियों और राष्ट्र के प्रति का मोह माया झलकता हुआ पायेंगे।

घर की कुछ विशेष परिस्थिति के कारण मेरी पढ़ाई-लिखाई में दिक्कत होने की वजह से भाई साहब रघुनाथ ठाकुर जी के साथ जोरदार बहस हो जाया करता था। मैं बिहार विश्वविद्यालय में आई. एस्-सी. का छात्र था। मैं समझता था कि अगर वे इस रास्ते पर न चले होते तो परिवार के लोगों को मानसिक तनाव में नहीं रहना पड़ता। आर्थिक रूप से परिवार सुदृढ़ होता और मेरी पढ़ाई में बाधा नहीं पहुँचती। गुस्से में, मैं उनसे कह बैठा कि आप पागल की तरह किस धुन में लगे हुए हैं और किसके लिए ? दासत्व की जिन्दगी से मुक्त नहीं होने चाहने वाले मधेशियों के लिए अपनी जिन्दगी क्यों बर्बाद कर रहे हैं ? आज की बदलती परिस्थिति में तराई मधेश के अलग होने पर दोनों और छोटा हो जायेगा। हमारी क्या हस्ती रह जायेगी ? एक बार तो मैंने उनको देश का गद्दार तक कह बैठा था। यह भी कहा था कि आप भारत में रहकर नहीं नेपाल के अन्दर आकर मधेशियों के लिए लड़ाई लड़ें और मुझे भी साथ लें। जाहिर है आक्रोश में हीं, उनको मैंने इतनी बात कही थी।

उनका उत्तर था—देश को टुकड़ा कर अलग करने की बात न तो मैं सोचना चाहता हूँ और नहीं करना चाहता हूँ। सही अर्थ में आधुनिक नेपाल के अन्दर मधेशीयों को राष्ट्रीय प्रतिष्ठा, दूसरे वर्ग के नेपाली नागरिक की तरह राजकीय रूप में समानता का अधिकार देने और दिलाने की बात करता हूँ। मैं राजा का विरोधी नहीं हूँ। राजा को प्रजा के लिए निष्पक्ष एवम् सच्चा न्यायकर्त्ता के रूप में देखना चाहता हूँ। दु:ख की बात तो यह है कि इतना कहने-करने पर भी राजा का ध्यानाकर्षण इस ओर नहीं है। तब तो विद्रोह करने के सिवाय दूसरा रास्ता ही कहाँ रह जाता है। अपने अस्तित्व को मिटाकर नेपाली कहलाना स्वीकार्य कैसे हो सकता है ?

पहले मैं मधेशी हूँ उसके बाद ही गौरव के साथ नेपाली हूँ। अभी तुम परिपक्व नहीं हो सके हो। इन बातों को नहीं समझ पाओगे। इन बातों पर ध्यान मत दो, अपनी पढ़ाई हासिल करो। बाद में अपने-आप समझ लोगे। इसलिए मैं तथ्यों पर आधारित किताबें लिख रहा हूँ जो एक दस्तावेज की तरह बचा रहेगा। कल के युवा जब अपने-आपको जानेंगे-समझेंगे तो अपने अधिकार के लिए खुद ही सजग हो जायेंगे। वक्त आने पर इन प्रमाणों का लोग खोजी करेंगे। प्रमाणों के बिना न तो कुछ कर सकेंगे और न हीं कुछ बोलने की स्थिति में रहेंगे। इसलिए पुस्तक के रूप में इन तथ्यों को आकार दे रहा हूँ।

मैंने प्रश्न किया था—क्या आप सोचते हैं कि आपकी इतनी बड़ी-बड़ी बातें जनता समझ रही है ? मैं देख रहा हूँ, ये लोग पंचायती व्यवस्था के गीत गा रहे हैं, उन्हीं के हाँ-में-हाँ मिला रहे हैं। और आप हैं कि व्यर्थ में अपनी जिन्दगी गवाँ रहे हैं। हमारा परिवार कष्ट में है।

उनका उत्तर था—हमारा ही परिवार कष्ट में नहीं है, सम्पूर्ण तराई मधेशी कष्ट में है। मैं अपनी जिन्दगी के क्षण व्यर्थ में नहीं गवाँ रहा हूँ। जो तुम कह रहे हो सत्य है लेकिन अपने-आप में पूर्ण सत्य नहीं है। क्योंकि ये मधेशी जनता राजनीतिक रूप से चेतनशील नहीं है। शिक्षा एवम् जानकारी के अभाव में यह नहीं समझ पा रहे हैं कि राजनीतिक अधिकार क्या चीज होती है। कुछ मधेशी नेतागण शासक वर्ग का साजिश को समझते हुए भी पद और स्वार्थ के चलते कुछ बोलने या करने से लाचार हैं। मुझे आत्मविश्वास है, मेरे मरने के बाद, कोई न कोई अवश्य पैदा लेगा। उस वक्त तक हो सकता है, तुम भी इसके लिए तैयार हो जाओगे। यही समय था, जब सगे-सम्बन्धियों के दबाव पर १९६८ ई. में इनका विवाह हुआ था।

वि. सं. २०३६ साल में मैं पंजाबी युनिभर्सिटी में एम० बी०, बी० एस० में फाइनल का छात्र था। जनमत संग्रह में अपना देश लौटा—बहुदल के पक्ष में एक सिपाही के रूप में कार्य किया था। राजा के द्वारा आम माफी का ऐलान हो चुका था। उसी दौरान, मैं रघुनाथ ठाकुर जी से मिलकर, नेपाल प्रवेश कराने की बात सोची और गया भी। लेकिन उन्होंने आने से इन्कार कर दिया और बोले—"इस जनमत संग्रह से कुछ होने जाने वाला नहीं है। यह एक धोखा है। अमृत यानि कि बहुदलीय प्रजातंत्र और जहर यानि कि निर्दलीय पंचायती व्यवस्था में से जनता को चुनाव करने के लिए कहा गया है कि जनता क्या चाहती है। क्या राजा इस बात को नहीं समझते हैं कि देश की सम्पूर्ण जनता अशिक्षा, राजनीतिक अचेतनशीलता, गरीबी और भय से मुक्त नहीं हो पायी है ? जनता अबोध बालक की तरह है। क्या राजा यह नहीं समझते कि अमृत प्रजा के लिए एक अच्छी चीज है और जहर तो जहर ही है। फिर, स्वयं अपने ही विवेक से जनता को अमृत क्यों नहीं देना चाहते ? एक तो ऐसा होगा नहीं, फिर भी, अगर प्रजातंत्र आ भी गया तब भी मधेशियों को अपने अधिकार के लिए संघर्ष करना ही होगा। इस प्रजातंत्र से मधेशियों को कुछ मिलने वाला नहीं है। जहाँ तक मेरे स्वदेश लौटने का सवाल है, मुझे राजा में शंका नहीं है, सच्चे वामपंथियों पर भी शंका नहीं है। मुझे हर वक्त शक है शासक वर्गतंत्र पर और तथाकथित प्रजातंत्रवादी नेपाली कांग्रेस पर। ये ही लोग अपने ही घर में हम जैसे को खत्म करवा देगा और जिस मिशन में लगा हूँ, वह अधूरा रह जायेगा। समय से पहले ही सब कुछ खत्म हो जायेगा। इसलिए, मेरे लिए यह उपयुक्त समय नहीं आया है।

उनको क्या पता था कि उनके जीवन लीला को समाप्त करने वाला क्षण, उनकी जिन्दगी के दरवाजा पर खड़ा, दरवाजा खटखटा रहा है और मौके की तलाश में है कि कब उनके जीवन का दरवाजा खुले कि दबोच डालूँ। आखिर, उनकी जिन्दगी का दरवाजा २०३८ साल आषाढ़, कृष्ण पक्ष, पंचमी की शाम खुल ही गया। वे खाना खाने से पहले पानी लेने गये, इसी बीच साजिश के तहत उनके खाना में जहर मिला दिया गया। उनकी जीवन लीला सुबह होने से पहले समाप्त हो गयी। मैं इस वक्त सगरमाथा अंचल अस्पताल में मेडिकल अधिकृत पद पर कार्यरत था। बाढ़ आ जाने से यातायात ठप्प हो चुका था, इसी विवशता के कारण मैं उनका अन्तिम दर्शन पाने से वंचित रहा।

नेपाल के बोर्डर से लगने वाला गाँव, नवाबगंज फुलकाहा बाजार भारत में उनका लाश पड़ा था। भारत के स्थानीय प्रशासन के द्वारा खबर पहुँचने पर सबसे बड़े भाई साहब विष्णुकान्त ठाकुर परिवार के एक-दो अन्य सदस्यों के साथ वहाँ पहुँचे। वारिश छोड़ने का नाम नहीं लेता था। राजनीतिक शरणार्थी होने के नाते, पूरी छान-बीन किये बिना पोस्टमार्टम किये बगैर दाह-संस्कार के लिए लाश मिलने वाला था नहीं। बड़े भाई साहब इतना लम्बा समय देने के लिए राजी नहीं। बड़े भाई साहब के जिद्द करने पर, स्थानीय प्रशासन एवम् ग्राम समिति के सदस्यों के सलाह अनुसार, बिना पोस्टमार्टम किये, दाह संस्कार के लिए लाश देने का एक ही उपाय था कि "रघुनाथ जी की मृत्यु सर्प के काटने से हो गयी" जैसे बयान पर बड़े भाई साहब का दस्तखत हो। भाई साहब ने सोचा, मरने वाला तो मर गया, लाश को चीर-फाड़ करने से क्या मिलने वाला है। इसके पीछे कौन लगेगा, किसको फुर्सत है। यह सोचते हुए लाश का दाह-संस्कार उसी जगह करते हुए वापस घर लौट गये। राजनीतिक सूझ-बूझ नहीं होने के कारण, राजनीति में सक्रिय नहीं होने के कारण, उस वक्त अगर मैं ही होता तो शायद वही करता जो भाई साहब ने किया।

वे अपने पीछे दो पुत्र, एक पुत्री और अपनी विधवा पत्नी को छोड़, अपना नश्वर शरीर को त्याग चले। अन्तिम क्रिया-कर्म के अवसर पर मैंने अपनी भावना व्यक्त की थी कि उनका अन्तिम क्रिया-कर्म सही माने में तब माना जायेगा जब उनकी कल्पना साकार होगी और उनके बच्चों को शिक्षा-दीक्षा मिल जायेगी। अपने कर्त्तव्य का निर्वाह यथासम्भव किया है, जिसमें मेरी धर्मपत्नी श्रीमती मीना ठाकुर का सहयोग सदैव रहा है। इसमें, जिला धनुषा के विन्ही निवासी श्री ओमकुमार झा जी, जिन्होंने अमर शहीद रघुनाथ ठाकुर "मधेशी" के प्रति सच्ची श्रद्धा और सम्मान प्रकट करते हुए, उनकी पुत्री को आदर्श रूप में अपनी पुत्र-वधू स्वीकार कर मेरे कार्य में सराहनीय सहयोग किया है। हमारा परिवार इस उदारता के लिए सदैव उनका आभारी रहेगा। इस कार्य में सूत्रधार के रूप में सहयोग करने वाले महोत्तरी, पीपरा निवासी श्री रामचन्द्र मिश्र जी के प्रति भी हमारा परिवार सदैव आभारी रहेगा।

परतंत्र मधेश
और
उसकी संस्कृति
(हिन्दी आन्दोलन) मध्य मधेश
(दास प्रथा) पश्चिमी मधेश
(झापा) पूर्वी मधेश
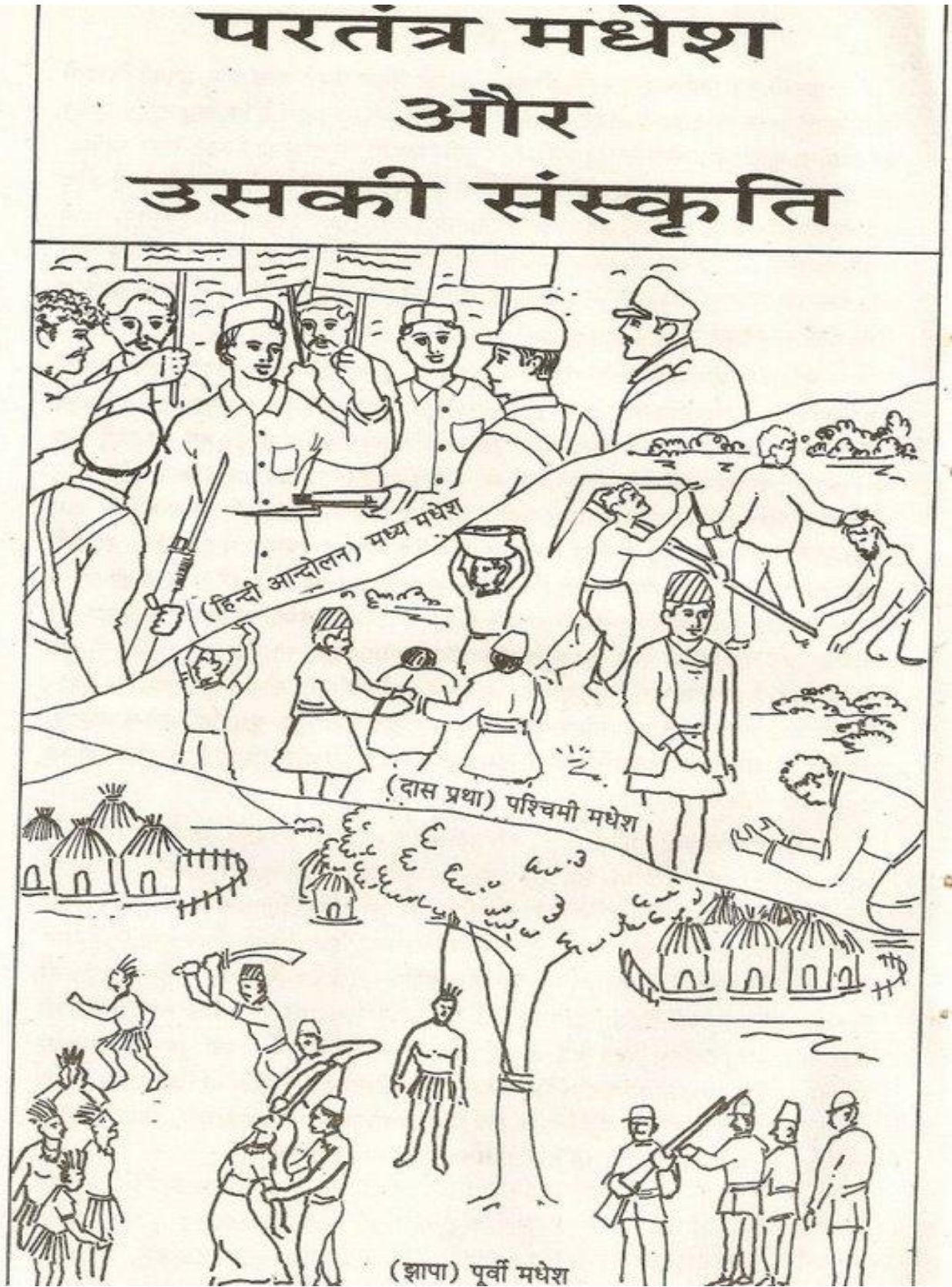
वक्तव्य

नेपाल सम्भवत: भारत भी तथा विदेशियों के लिये तो स्वाभाविक ही है कि नेपाल का 'मधेश-क्षेत्र' सबों के लिए एक रहस्य प्रतीत होता हो। नेपाली-भाषी जनता और नेपाली शासकगण तो इस क्षेत्र के अस्तित्व के ही सम्बन्ध में बिलकुल निराधार भ्रामक प्रचार करते दिखलायी पड़ते हैं। विदेशियों का सम्बन्ध (केवल अंग्रेजों को छोड़कर) तो नेपाल से बिलकुल ही नहीं रहा है। इसलिये वे हमारे बारे में जानकारी अच्छी तरह नहीं कर सके हैं। नेपाली शासकगण के भ्रामक प्रचार के सम्बन्ध में तो हम इतना ही लिख सकते हैं कि उन्हें अध्ययन की कमी हो सकती है। लेकिन भारतवर्ष के विद्वान् यथार्थता को प्रकट करने में क्यों पीछे रहे यह समझ में नहीं आया। विदेश में इस 'परतंत्र मधेश क्षेत्र' के सम्बन्ध में चर्चा नहीं करने में हो सकता है कि या तो अंग्रेजों की तरह भारतीय राजनेताओं ने भी सोचा हो कि वैसा करने में भारत के हित का अनिष्ट हो सकता है या वस्तुत: 'मधेश' के अस्तित्व का ज्ञान ही उन्हें न हो। परन्तु इस बीसवीं सदी में सचाई कब तक छिपी रह सकती है।

भारत संघ-राज्य के बिहार-राज्य तथा उत्तर-प्रदेश राज्य के उत्तरी हिस्से में बसने वाली भारतीय जनता का इस नेपाल अधिकृत 'मधेश-क्षेत्र' की जनता से जीवन-मरण का सम्बन्ध है। फिर भी भारतीय विचारक इस परतन्त्र क्षेत्र की स्थिति के सम्बन्ध में कुछ भी न तो लिख ही सके और न विदेश की अन्य जातियों में इसकी चर्चा ही कर सके। संप्रति एक महान भारतीय विचारक महामहोपाध्याय पंडित राहुल सांकृत्यायन जी ने इस 'परतन्त्र मधेश' क्षेत्र के सम्बन्ध में दो शब्द लिखकर अपने को अपवाद में रख छोड़ा है।

हमें यह लिखते हुए गौरव होता है कि उत्तर भारत की मध्यदेशीय जनता अपने नाम को भले ही भुला दे, लेकिन नेपाल के मधेश अर्थात् मध्यदेश की जनता अपने पूर्वजों के अर्जित संस्कार को भुला नहीं सकती। भारतीयों की संस्कृति मध्यदेशीय संस्कृति ही है इसे भारतीयों को स्वीकार करना ही है। हमें प्रसन्नता है कि मधेश क्षेत्र के प्रति हर तरह की उपेक्षा नीति के रखते हुए भी नेपाली शासकों ने हमारे नाम को अभी तक सुरक्षित रखा है। हाँ, **विक्रम सम्वत् २०१० साल (सन् १९५३) में भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री मातृका प्रसाद कोईराला जी के प्रधानमंत्रित्वकाल में सरकारी प्रकाशन ''नेपाल, पहाड़ और तराई'' नाम की पुस्तिका द्वारा इस मधेश-क्षेत्र के सम्बन्ध में भ्रमात्मक प्रचार करवाने की पूरी चेष्टा की गयी। उपरोक्त पुस्तिका की कुछ पंक्तियों का उल्लेख कर देना अनुपयुक्त न होगा। यथा—''नेपाल का राणा शासन तराईवासी नेपालियों के लिये केवल ''मधेशिया'' शब्द का प्रयोग करता था। यद्यपि ''मधेशिया'' शब्द ''मध्यदेशीय'' का अपभ्रंश है, किन्तु दीर्घकाल से नेपाल देशवासी होने तथा इस देश में ही तराई-निवासियों के समस्त हितों और अधिकारों की निहित के कारण उन्हें स्वयं तथा अन्यों को भी नेपाली कहना ही उचित होगा। नेपाल देश की समूची जनसंख्या के विशिष्ठ**

समुदाय को केवल एक अनुपयुक्त शब्द-प्रयोग के द्वारा, विलग वर्गीयता देने की वृत्ति आज की प्रजातन्त्र सरकार अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखती है। यद्यपि यह ठीक है कि "मधेशिया" शब्द से क्षेत्रगत जातीयता के परिचय का कुछ आभास देने के लिये तथा इस देश के उत्तरी अंश के पहाड़ी प्रदेश और उससे संबद्ध तलहटी के मैदानों को क्रमशः "पहाड़" और "मधेश" कहने के प्रचलन से भी (पहाड़वासियों को) "पहाडिया" तथा मधेश (अर्थात् तराई-निवासियों को) "मधेसिया" कहने की एक प्रथा सी चल पड़ी थी। "किन्तु साधारण जनता इन शब्दों के प्रयोग द्वारा किसी राजनैतिकता की विचारधारा का आभास तक नहीं रखती है..........।"

"मधेसिया" शब्द का विदेशों में कोई अर्थ ही नहीं होगा; क्योंकि "मधेश" नेपाल देश के "तराई" क्षेत्र का नाम है, देश का नहीं; और यदि कोई अपने को भारतीय कहे तो भारत उसका देश नहीं है, वस्तुतः है वह नेपाल राज्य का निवासी ही।

उपरोक्त पुस्तिका की ऊटपटांग बातों को पढ़कर कोई भी विवेकशील मधेशी अवश्य ही दुखी होगा। परन्तु, पुस्तिका का परिचय लिखते हुए श्री मातृका प्रसाद कोईराला जी ने लिखा है कि वह उस पुस्तिका की उपादेयता स्वीकार करते हैं। इसी हेतु हमें यह छोटी पुस्तक लिखनी पड़ी कि कम से कम विदेशी बन्धुओं को हम नेपाल सरकार के ऐसे भ्रमात्मक प्रचार से सतर्क करा सकें। मधेशी राष्ट्रीयता के अधिकारों की उपेक्षा जिस तरह की गयी और इस जातीयता पर जिस तरह के अत्याचार हुए और आये दिन हो रहे हैं इसका विवरण भी संक्षेप में दिया गया ही है। प्रस्तुत पुस्तक **"परतन्त्र मधेश और उसकी संस्कृति"** में **खासकर हमें यही बताना है कि "मधेश" सही माने में वह देश है जिसकी अपनी परम्परा है; जिसकी एक विलग अपनी जातीयता है और सदियों से जो परतन्त्रावस्था में है। फिर भी यहाँ की जनता स्वेच्छा से ही किसी सुव्यवस्था के अन्दर रह सकती है, अगर वहाँ उनके मानवोचित अधिकार की सुरक्षा हो।**

लगभग १६ हजार वर्गमील में फैला हुआ "परतन्त्र मधेश-क्षेत्र" जिसकी जनसंख्या ५० लाख से भी अधिक है, इसकी तुलना संयुक्त राष्ट्र संघ के एक सदस्य देश "ईजराइल" से आसानी से की जा सकती है जो ८०८४ वर्गमील में फैला हुआ है और जहाँ की सम्पूर्ण जनसंख्या लगभग १४ लाख ही है। १६ हजार ६ सौ वर्गमील में फैले हुए संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्य सदस्य देश "डेनमार्क" जिसकी जनसंख्या ४६ लाख है उससे भी इस "परतन्त्र मधेश-क्षेत्र" की तुलना की जा सकती है। जनसंख्या के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्य कतिपय देशों से हमारी तुलना आसानी से की जा सकती है। जैसे—

बोलिभिया	(३०,५४,०००),	इक्वेडोर	(३४,००,०००),
फिनलैण्ड	(४१,००,०००),	इराक	(४७,९९,५००),
आईरीश रिपब्लिक	(२९,८९,७००),	न्यूजीलैण्ड	(२०,००,०००),
नार्वे	(३६,००,०००),	स्वीट्जरलैण्ड	(४७,००,०००),
सिरिया	(३०,००,०००),	और यूरागवे	(२३,५०,०००)।

राणा शासकों के कर्मचारियों के नव विकसित सुन्दर, लेकिन खतरनाक तत्त्व तथा नेपाल-प्रजातन्त्र के तथाकथित चन्द ठेकेदार, राणा शासकों के विरोधी, जिनके स्वार्थ की सिद्धि राणा शासन में नहीं हो पाती थी, और जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही वे स्वर्गीय राष्ट्रपिता श्री ५ महाराजाधिराज त्रिभुवन वीर विक्रम शाहदेव जी का साथ राणा-शासन को खतम करने में दिया, ये सबके सब, मधेश के अधिकार की रक्षा के निमित्त आवाज बुलन्द करने वालों को देश-द्रोही मिस्टर 'जिन्ना' तथा 'जयचन्द' की संज्ञा से विभूषित करते हैं। इसलिए इस छोटी पुस्तक के लेखक को पूरी आशा है कि उपरोक्त तत्वों द्वारा इस लेखक को भी उपरोक्त उपाधियाँ मिलेंगी ही। क्योंकि उनकी पथ-भ्रष्ट बुद्धि कटु सत्य को अंगीकार नहीं कर सकती। परन्तु, यह पुस्तक देश-द्रोह अथवा जनता को उभाड़ने की भावना से नहीं लिखी गयी है, अपितु कटु सत्य को सामने रखा गया है जिस पर राष्ट्र-नायक श्री ५ महेन्द्र को स्वस्थ मन से विचार करना है।

परतन्त्र इलाके की जनता अपने अभिशासक राष्ट्र की सुव्यवस्था के अन्दर समान मानवोचित अधिकार प्राप्त करके रह सकती है। अगर अलस्का, संयुक्त राज्य अमेरिका की सुव्यवस्था के अन्दर ४९ वें राज्य के रूप में रह सकता है तो मधेश को भी नेपाल की सुव्यवस्था के अन्दर रहने में कोई एतराज नहीं होना चाहिये। मध्यदेशीय झंडे को आज संयुक्त राष्ट्र संघ के भवन पर लहराते हुए देखकर आत्मा इस बात को स्वीकार नहीं करती कि मधेशिया नेपाल की नींव को मजबूत बनाने के बजाय कमजोर बनाये। परन्तु, इस पुस्तक्र में वर्णित कुव्यवस्थाओं में मध्यदेशियों के हृदय को आतंकित कर दिया है और यह सही है कि मधेशियों को इसके लिए ठोस कदम उठाना ही है, अगर 'राष्ट्र-नायक' ने परिस्थिति और स्थिति में न्यायोचित परिवर्तन न लाया।

चुनाव होना चाहिये, परन्तु हमें चुनाव का विरोध करना पड़ रहा है। क्यों ? इसका उत्तर प्रस्तुत पुस्तक में ही है। एक को जिलाने के लिये दूसरे को खतम करना सर्वथा अनुचित एवं गलत सिद्ध हुआ है। चुनाव होने के पहले हम श्री ५ से पूछना चाहते हैं कि 'परतन्त्र-मधेश' की पचीसों लाख जनता को उनकी अपनी प्यारी मातृभूमि से हटाकर,किस जगह रखने का इन्तजाम किया गया है ? और वस्तुतः ऐसा करने का अधिकार परन्तत्र इलाके के अभिशासक राष्ट्र की सरकार को है क्या ?

लेखक उन विद्वानों एवं संस्थाओं के प्रति अपना आभार प्रकट करता है, जिनकी कृतियों ने लेखक को प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में अमूल्य सहायता पहुँचायी है।

भलाभलेनी (मधेश), नेपाल।
विजयादशमी, २०१५ वि. सं.

—लेखक

मधेश और उसकी संस्कृति

नेपाल के 'मुलुकी ऐन' का (The law of the land) का अध्ययन बताता है कि नेपाल प्रशासनिक दृष्टि से (१) सदर अर्थात् केन्द्र (काठमांडू घाटी या नेपाल), (२) मधेश अर्थात् तराई मैदानी हिस्सा, (३) पहाड़ (पहाड़ी हिस्सा) इन तीन क्षेत्रों में बटा है। यथा—''हिन्दुस्तान सरकार अथवा किसी अन्य विदेशी सरकार और नेपाल सरकार के बीच मामला मुकदमा पड़ने पर मुन्सीखाना, सदर (केन्द्र) की अमीनी गोश्वारा अदालत, मधेश के जिले की गोश्वारा एवं अमीनी अदालत तथा पहाड़ की अमीनी अदालत द्वारा कार्रवाई करें।''*

इसी सिलसिले में यहाँ यह उल्लेखनीय हो जाता है कि एक सम्पूर्ण राष्ट्र के अर्थ में सम्बोधित होने वाला आज का 'नेपाल' राणा-शासन काल में भी 'गोरखा-साम्राज्य' का अंग एक विजित प्रदेश के रूप में ही माना जाता था। 'मुलुकी ऐन' में तो इसका स्पष्ट उल्लेख है। यथा—''नेपाल से जगह-जगह (मोरंग, परसा, बैतडी इत्यादि जगहें) में डाक के आने-जाने और जगह-जगह से नेपाल में बोझा सहित लेकर आदमी के आने-जाने तथा कागजात तैयार करने सहित का निम्नलिखित मुताबिक की अवधि का कानून।''** इन शब्दों (नेपाल से मोरंग) से तात्पर्य यही निकलता है कि 'नेपाल' का मोरंग से अलग एक स्वतन्त्र अस्तित्व है।

वस्तुतः प्राचीन काल से 'काठमांडू-घाटी अर्थात् सदर' ही नेपाल के अर्थ में सम्बोधित होता रहा है और मधेश एवं पहाड़ की सामान्य जनता अब भी ''काठमांडू-घाटी'' को ही नेपाल के नाम से पुकारती है। **डा० ग्रियर्सन साहब भी इस मत से सहमत दिखलायी पड़ते हैं।† साथ ही 'गोरखा राजभर मुलुक' शब्दों का स्पष्ट उल्लेख 'मुलुकी ऐन' में पाया जाता है जिससे उपरोक्त तथ्य की परिपुष्टि में दृढ़ता आती है।** यथा—''महाकाली से पूरब, मेची से पश्चिम गोरखा राज्यभर मुल्क के मधेश तराई की माफी बिर्ता (बिर्ता, बेख, फिकदार, छाप, सदावर्त, मानाचॉवल इत्यादि विभिन्न बिर्ताएँ) के जङ्गल के वृक्षों को बिना श्री प्रधानमन्त्री के हुकुम कानून के कोई भी व्यक्ति काटकर वा और किसी तरह से नुकसान करके करवाके नहीं ले जा सकता है।''‡ 'गोरखा राजभर' शब्दों के उल्लेख

* हिन्दुस्तान सरकार वा अरू कुनै विदेशी सरकार र नेपाल सरकार सम्बन्धी मुद्दा मामिला परी आएमा मुन्सीखाना, सदर अमीरी गोश्वारा, मधेश जिल्ला का गोश्वारा र मधेश पहाड़ का अमीनीबाट कारवाई गर्नु (देखिये, मुलुकी ऐन, भागं १, अध्याय 'अदालती बन्दोबस्त', कानून नम्बर २, पृष्ठ २, तीसरा संस्करण, विक्रम संवत् २०१२)।

** ''नेपालबाट जग्गा जग्गामा हुलाक आउन जान र जग्गा जग्गाबाट नेपालमा भारी समेत ली मानिस आउन जाना र कागत तयार गर्ना समेत तपसील बमोजिम म्यादको ऐन (मुलुकी ऐन, भाग २, अध्याय 'बही बुझने को', कानून नं० १९, पृष्ठ ४६, तृतीय संस्करण, वि. सं. २०१२)।''

† देखें, "Linguistic Survey of India, Vol. IX., Part IV, Page 15, 18."

‡ ''महाकाली पूर्व मेची पश्चिम गोरखा राजभर मुलुक का मधेश तराई का बिर्ता, बेख, फिकदार, छाप, सदावर्त, मानाचॉवल समेत गैह माफी बिर्ता जङ्गल को रूख बिना श्री प्राइम्मिनिष्टर को हुकुम सनद नभई कसैले काटी वा अरू कुनै किसिमसँग नोक्सान गर्न गराउन लिन समेत हुँदैन (मुलुकी ऐन, भाग ३, अध्याय 'रूख काटने को', कानून नं० ४, पृष्ठ १४, द्वितीय संस्करण वि. सं. २००५ साल।)''

'मुलुकी ऐन' में कितने ही स्थानों में मिलते हैं। **अतः स्मरण रखना चाहिये कि नेपाल, पहाड़ एवं मधेश गोरखा साम्राज्य के विभिन्न विजित प्रदेश ही सम्बोधित होते थे।** इस सम्बन्ध में एक दूसरा उल्लेख भी दे देना अच्छा होगा। यथा—"कोई व्यक्ति अपनी आबादी बिर्ता जमीन सरकार को देकर बदले में आबादी नंबरी जमीन मांगने आया तो सरकार के आदेशानुसार नेपाल, पहाड़ एवं मधेश जिस जगह की जमीन बदले में माँगता हो उसी जगह की जमीन में नदीकाट को छोड़कर रकवा एवं उत्पादन की दृष्टि से सवाई बढ़ता लेकर खेत (धनखेती) के बदले खेत ही, पाखा (भीठा जमीन) के बदले पाखा जमीन ही दें।"* **विक्रम संवत् २००७ साल की सशस्त्र क्रांति के बाद भी नेपाल की प्रजातांत्रिक सरकार ने उपरोक्त तथ्य की घोषणा की है। यथा—"नेपाल, मधेश, पहाड़ सभी जगहों के लिये चाइ, गाधा, कर्कचरे (करकच), साबरी तथा सेंधा नमक में से किस प्रकार का नमक, कहाँ से, किस जगह के लिए, कितना नमक, कितने महीने के भीतर लाकर, किस दर में बिक्री कर सकता है—अपनी शर्त सहित स्पष्ट करके नेपाल के लिये लाने वाले एक महीना के भीतर और मधेश तथा पहाड़ के लिये लाने वाले दो महीने के भीतर इस मंत्रालय (उद्योग तथा वाणिज्य मंत्रालय) में निवेदन पत्र दीजियेगा जो पहुँच जाय।"**** इसलिए उपरोक्त पंक्तियों के द्वारा गोरखा साम्राज्य के विभिन्न अंग नेपाल, पहाड़ एवं मधेश प्रदेशों के स्वतंत्र अस्तित्व का स्पष्ट पता लगने में कोई कठिनाई नहीं रह जाती है। भले यह दूसरी बात हो सकती है कि 'नेपाल' शब्द अपनी प्रशासकीय प्रधानता के कारण 'गोरखा' शब्द पर धीरे-धीरे अपना प्रभुत्व स्थापित करता गया हो और ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी एवं ब्रिटिश भारत सरकार के साथ किये गये संधि-पत्रों में भी अपनी प्रमुखता कायम किया हो। आज भी नेपाल में 'गोरखा-परिषद' नाम की राजनैतिक संस्था गोरखों की जातीयता का ही परिचायक है। यहाँ तक की सरकारी समाचार-पत्र भी 'गोरखा-पत्र' के नाम से ही प्रख्यात है तथा महाराजाधिराज की प्रशस्ति में अभी भी 'अति-प्रबल-गोरखा-दक्षिण-बाहु' शब्द जुड़े हुए हैं।

उपरोक्त तथ्य की परिपुष्टि के सम्बन्ध में एक बात और स्मरण रखनी चाहिए। **गोरखों के राज्य 'गोरखा' प्रदेश में जाने तथा वहाँ से आने के लिए गोरखा साम्राज्य के विजित प्रदेश मधेश, पहाड़ एवं नेपाल के निवासियों के लिए पारपत्र प्रथा** (Passport system) **का भी प्रचलन किया गया। परन्तु, कुछ दिन बाद राज-परिवार का स्थापन निश्चित रूप से नेपाल प्रदेश में ही हो जाने के कारण नेपाल प्रदेश की प्रजा को**

---

* "आफ्नो आबादी बिर्ता सरकार लगाई आबादी रैकर जग्गा सट्टा माग्न आयो भने सरकार साधी नेपाल पहाड़ मधेश जुन ठाउँको जग्गा सट्टा मांगेको हो उसै ठाउँको जग्गामा खोलो पैह्रो नलाग्ने हेरी नापीमा उब्जनीमा पनि सवाई बढ़ता लिई खेतको सट्टा खेतै, पाखाको सट्टा पाखै भर्ना लिई सट्टा दिनू (मुलुकी ऐन, भाग ३, अध्याय 'सट्टा पट्टाको', का० नं० २, पृष्ठ ६८, द्वितीय संस्करण, २००५ साल)।"

** "नेपाल, मधेश, पहाड़ सबै ठाउँको निमित चाहिने चाइ, गाधा, कर्कचरे (करकच) साबरी, सीधे नून मध्ये कुन किसिमको नून कहाँबाट कुन ठाउँका निमित कति नून कति महिनाभीत्र ल्याई के दरमा बिक्री गर्ने हो आफ्नो सर्त समेत खोली नेपालका निमित ल्याउनेले १ महीनाभित्र र मधेश पहाड़का निमित ल्याउनेले २ महिनाभीत्र यस मन्त्रालयमा पुग्ने गरी दर्खास्त गर्नुहोला ('उद्योग र वाणिज्य मन्त्रालयको सूचना'—नेपाल गजेट, भाग ३, भाद्र २५ गते, वि. सं. २००८ साल)।"

स्वाभाविक रूप से पारपत्र प्रथा से मुक्ति मिल गयी। लेकिन पहाड़ एवं मधेश के विजित प्रजाओं को तो राणाशाही के बाद तक नेपाल प्रदेश में जाने तथा वहाँ से आने के लिए पारपत्र लेना पड़ता रहा है। इस सम्बन्ध में इस पंक्ति का लेखक नेपाल सरकार के पारपत्र-विभाग द्वारा मिले स्वयं अपने ही एक पारपत्र का वक्तव्य निम्न प्रकार प्रस्तुत करता है—

"काठमांडू इलाका त्रिपुरेश्वर में डेरा करके बैठनेवाला, वर्ष २३ का, गौर वर्ण श्री रघुनाथ ठाकुर अपने भाई विद्यानन्द के जान-बेपता मुकदमें की कार्रवाई (सर्वोच्च अदालत द्वारा की गयी कार्रवाई) मिसिल का तोक आदेश (स० अ० द्वारा दिये गये आदेश का नकल) लेने के लिये आया और अब अपना घर भलाभलेनी हरिनगरा (मोरंग) उस गढ़ी (चीसापानी गढ़ी) होकर जाने के लिए पारपत्र लिया है। उनके वर्ण वर्ष की परीक्षा कर ऐन कानून मुताबिक बेरोकटोक जाने देंगे। संवत् २०१३ साल तारीख २७ मार्ग।"*

इस प्रथा से फिलहाल ही मुक्ति मिली है। नेपाल की **पारपत्र प्रथा के सम्बन्ध में उपरोक्त तथ्य के अलावे किसी अन्य तथ्य का प्रतिपादन करना निश्चित रूप से एक बहानेबाजी के सिवा और कुछ नहीं है।****

इस प्रकार नेपाल प्रदेश को गोरखा राज्य द्वारा विजित उसके साम्राज्य का एक अंग के रूप में दिखलाने पर **यहाँ एक प्रश्न उठ खड़ा होता है कि उपरोक्त तथ्यों के बावजूद भी 'गोरखा राज्य' के बदले 'नेपाल प्रदेश' को ही सम्पूर्ण राष्ट्र के रूप में सम्बोधित होने का सौभाग्य कैसे प्राप्त होता गया और गोरखा के शासकों ने भी प्राचीन नेपाल को ही धीरे-धीरे सम्पूर्ण राष्ट्र के अर्थ में नामकरण करने पर क्यों जोर दिया? इसका स्पष्ट उत्तर होगा—राजनैतिक एवं प्रशासकीय दृष्टि से नेपाल (सदर वा केन्द्र) प्रदेश की अपनी प्राचीनतम विशिष्टता।** अगर आर्यों का 'सिन्धु' देश अपनी प्राचीनतम राजनैतिक एवं प्रशासकीय विशिष्टताओं के कारण ही आज एक बहुत बड़े भू-भाग को अपने में आत्मसात करते हुए 'हिन्दुस्तान या इण्डिया' राष्ट्र के अर्थ में सम्बोधित हो सकता है जिसमें अन्य कई उपराष्ट्र (बंगाल, महाराष्ट्र, मद्रास, गुजरात इत्यादि) अपने जातीय अधिकार की रक्षा करते हुए समन्वित हैं तो क्यों नहीं कहा जा सकता कि नेपाल भी इसी तरह का दूसरा उदाहरण है जिसमें प्राचीन 'नेपाल' एवं 'पहाड़' प्रदेशों के निवासियों को तो अपने जातीय अधिकार प्राय: प्राप्त हो चुके हैं, परन्तु 'मधेश प्रदेश' एवं 'मधेशिया' अब तक परतन्त्रावस्था में है

श्री

* राहदानी विभाग चिसापानी गढ़ी
नं० १५४४१ के पुर्जि
उप्रांत का० ई० त्रिपुरेश्वर डेरा गरी बस्ने वर्ष २३ को गेहूँ गोरो श्री रघुनाथ ठाकुर आफ्नो भाई विद्यानन्द को ज्यान बेपताबारे मुकदमाको कार्रवाई मिसिलको तोक आदेश लीन आएको र अब आफ्नो घर भलाभलेनी हरिनगरा (मोरंग) जान भनी त्यस गढ़ीको बाटो गरी आएको छ निजको वर्ण वर्ष जांची ऐन सवाल बमोजिम गरी सरासर जान दीनु रोक टोक नगर्नु होला इति सम्वत् ०१३ साल मार्ग २७ गते ४ रोज शुभम्।

** यहाँ यह भी स्मरणीय रहे कि जहाँ नेपाल प्रदेश में जाने तथा वहाँ से आने के लिए मधेशियों को पारपत्र लेना पड़ता था वहाँ ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सीमा भारत में जाने तथा वहाँ से आने के लिये मधेशियों को किसी प्रकार की दिक्कत नहीं उठानी पड़ती थी।

और जिसकी राष्ट्रीयता के सम्पूर्ण अधिकार छिने हुए हैं। **फिर भी इस बीसवीं सदी तक 'मधेश प्रदेश' का सांस्कृतिक अस्तित्व अर्थात् उसका नाम 'मधेश' शब्द सुरक्षित है। राणाशाहों के बाद भी फिलहाल ही वि. सं. २०१२ साल में "मधेश गोस्वारा ऐन अर्थात् मधेश के जिलों के गोस्वारे (जिलाधीश की अदालतें) का कानून" एवं "मधेश जिल्ला-जिल्ला को जिमिदार पटुवारी का नाउँ को सवाल अर्थात् मधेश के जिले-जिले के जमिंदार पटवारियों के नाम का कानून" बनाये गये हैं।** फिर भी राणाशाही का अन्त होने के बाद नेपाली बुद्धिजीवी वर्ग इस 'मधेश' क्षेत्र के अस्तित्व को ही खतम करने के उद्देश्य से इसके सम्बन्ध में विभिन्न मनगढ़न्त बातों का सृजन कर भ्रमात्मक प्रचार करते दिख पड़े हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण "नेपाल, पहाड़ और तराई" नामक पुस्तिका है। इस पुस्तिका का सरकारी प्रकाशन भी एक जिम्मेदार प्रधानमंत्री के शासनकाल में ही हुआ है। इन पंक्तियों के लेखक को ऐसा अनुमान लगता है कि इस क्षेत्र की जनता के भविष्य की जागरुकता के भय ने ही इस सरकारी प्रकाशन को जन्म दिया जिससे मधेशी जनता अन्धकार में रखी जा सके। अस्तु।

'मधेश' शब्द संस्कृत के 'मध्यदेश' शब्द का अपभ्रंश है जिसका अर्थ ही है 'बीच का देश'। 'बीच का देश' से तात्पर्य आर्यों से बसे भूमि भाग अर्थात् आर्यावर्त के बीच के देश से है। जिस प्रकार यवनानी-अंग्रेजों ने 'सिंधु' शब्द को 'इन्डस' शब्द से 'इण्डिया' शब्द के रूप में परिणत किया एवं मुसलमान-तुर्क मुगलों ने 'सिन्धु' शब्द को 'हिंदु' शब्द में परिणत किया जिससे 'हिन्दुस्तान'* शब्द का निर्माण हुआ ठीक उसी प्रकार नेपाल वालों ने 'मध्यदेशीय' शब्द को 'मधेसिया' वा 'मधेशिया' शब्दों में तथा 'मध्यदेश' शब्द को 'मधेस' वा 'मधेश' शब्दों में परिणत किया है। इस मध्यदेश का इतिहास गौरवमय परम्परा से पूर्ण है। **वैदिक संस्कृति के सृजन का स्थल भी एक प्रकार से मध्यदेश को ही माना जा सकता है। डा० मैकडानेल का कथन है कि 'वरुण एवं ऊषा' के केवल पुराने ऋग्वैदिक सूक्त पंजाब में रचे गये, बाकी आधुनिक अम्बाला के दक्षिण सरस्वती (नदी) के पवित्र क्षेत्र में रचे गये।† सरस्वती नदी का भू-भाग मध्यदेश कहलाया है। अतः वैदिक संस्कृति के सृजन का स्थल भी मध्यदेश ही माना जायेगा।** डा० धीरेन्द्र वर्मा का कथन है कि वैदिक संहिताओं में 'मध्यदेश' शब्द का उल्लेख कहीं

---

* "The Sindhu (now Sindh) which in Sanskrit simply means the "river" as the western boundary of the Aryan settlement, suggested to the nations of antiquity which first came into contact with them in that quarter a name for the whole peninsula. Adopted in the form of Indos, the word gave rise to the Greek appelation India as the country of the Indus. It was borrowed by the ancient Persians as Hindu, which is used in the Avesta as a name of the country itself. More accurate is the modern Persian designation Hindustan. "the land of the Indus" a name properly applying only to that part of the Peninsula which lies between the Himalayas and Vindhya ranges (Arthur A. Macdonell M.A., Ph.D.—A History of Sanskrit Literature, Page 140)."

† ".....only the older hymns, such as those to Varuna and Usha, were composed in the Punjab itself, while the rest arose in the sacred region near the Sarasvati, south of the modern Ambala, where all the conditions required by the Rigveda are found. This is more likely than the assumption that the climate of the Punjab has radically changed since the age of the Vedic Peots (A History of Sanskrit Literature, Page 145)."

नहीं मिलता है।* इसके निम्न कारण हो सकते हैं। ऋग्वेद काल में मध्यदेश के भू-भाग पर समुद्र लहरा रहा था।† अत: ज्यों-ज्यों मध्यदेश के भू-भाग पर से समुद्र का पानी हटता गया होगा आर्य लोग नवीन स्थल पर बसते गये होंगे। उनकी सभ्यता एवं संस्कृति श्रेष्ठ थी ही। उनकी भावनाएँ उदात्त थीं। ऐसी स्थिति में उन लोगों के बीच विलग वर्गीयता की भावनाओं का सामञ्जस्य कैसे हो सकता था। तब ऐसी बात हो सकती है कि कालान्तर में पूर्वागत आर्यों की सन्तान को नवागत आर्य एवं दक्षिण के द्रविड़ों से भिन्नता बरतने की परिस्थिति आई होगी। क्योंकि हम देखते हैं कि नवागत खस एवं गूजर आर्यों को पूर्वागत आर्यों ने पिशाच (cannibals) अर्थात् असभ्य कहा है जिसके कारण नवागत आर्यों की भाषा को पिशाची या दरदी भाषा भी कही गयी है। अत: इस आधार पर कहा जा सकता है कि मध्यदेशीय आर्य कहलाने की परिस्थिति बाद में ही आयी होगी। इसके साथ-साथ ही यह भी सम्भव है कि पूर्वागत आर्यों का एक निश्चित भू-भाग पर बस जाने से तथा कुछ दिन के बाद स्थानीय प्राकृतिक वातावरण के प्रभाव से उनकी सभ्यता एवं संस्कृति में स्थानीय भिन्नताएँ दिखलायी देने पर उन लोगों में भी आपस में विलग वर्गीयता देने की प्रवृत्ति आ गई होगी जैसा कि आजकल भी बहुधा समाज के एक ही वर्ग के लोगों में ऐसी भावना दिखलायी पड़ती है। यही कारण भी हो सकता है कि विभिन्न कालों में मध्यदेश का विभिन्न वर्णन मिलता है। **राईज् डेविड्ज महोदय का मत भी ऐसा ही लगता है।‡ वृहत् मध्यदेश का वर्णन बौद्धों के धर्म ग्रन्थ 'विनय-पिटक' में ही मिलता है। अन्य ग्रंथों में इसके संकुचित होने का वर्णन है।** यथा—मनुस्मृति, त्रिकांडशेष, अभिधान चिन्तामणि, अमरकोष, मारकण्डेयपुराण, वाराहमिहिर की बृहत्संहिता, महाभारत, कथासरितसागर, राजतरंगिणी, फाहियान तथा अलबेरूनी का भारत। इस सम्बन्ध में **डा० धीरेन्द्र वर्मा द्वारा लिखित 'मध्यदेश का विकास'** शीर्षक निबंध पठनीय है। विद्वान् लेखक ने लगभग १९२१ ई. में अपने कठिन अनुसंधान के बाद ही यह निबन्ध मध्यदेश की जनता के समक्ष प्रस्तुत किया है। भगवान बुद्ध के मध्यदेश में निम्नलिखित जनपद थे—**

---

* देखिए "नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ३, अंक १, पृष्ठ ३१ (नवीन संस्करण)।"

† ".....the Rig-Vedic Aryans were not acquainted with the Eastern Provinces for no other reason than because they did not really exist during Rig-Vedic times—a long strech of sea having been in existence in the Miocene Epoch from the Eastern shores of Sapta Sindhu upto the confines of Assam, into which the Gangage and the Yamuna, after running their short courses, poured their waters; and the Deccan, having been completely cut off and seperated from Sapta Sinddhu by the Rajputana sea and the Sea lying between Central and Eastern Himalaya and the Vindhya ranges, it was not at all easily accessible to them (Dr. A. C. Das—Rig-Vedic India, Chap. I., Page 10.")

‡ "......what we find is that when the laws of Manu were put into the present form—that is, under Guptas, when the Brahmins were attaining the supremacy they have ever since retained—the idea of the Middle Country was restricted to that portion of the larger territory formerly included under the term in which the brahmins felt they had the greater influence (the Middle Country of Ancient India—by T. W. Phys Davids, F. B. A., Journal of the Royal Asiatic Society, London, 1904, Page 92)"

** देखें, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ३, अंक १, पृष्ठ ३१ (नवीन संस्करण)।
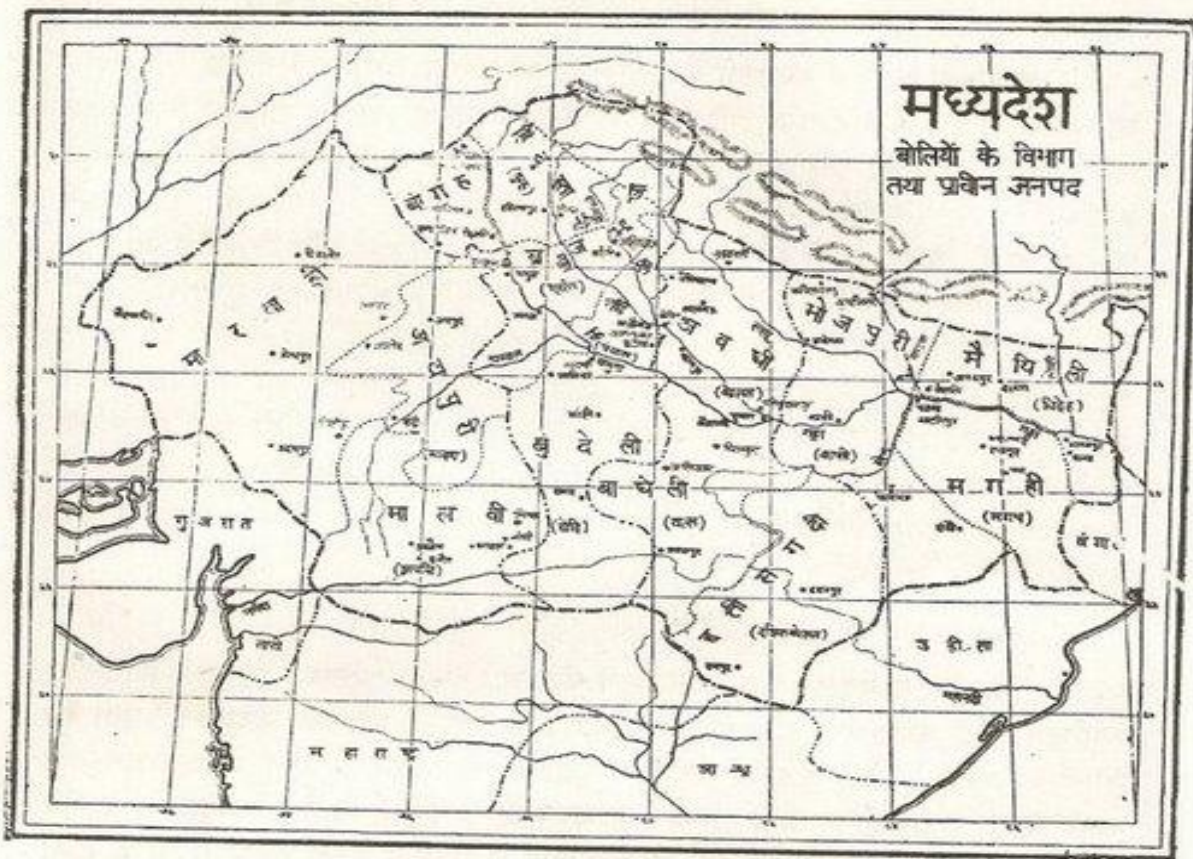
डा० धीरेन्द्र वर्मा द्वारा लिखित 'मध्यदेश' नामक पुस्तक से यह मानचित्र लिया गया है।

मज्झिम देश अर्थात् मध्यदेश (वर्तमान मधेश) के लुम्बिनी अंचल के लुम्बिनी ग्राम में जन्म लेने वाले भगवान बुद्ध द्वारा निर्धारित मध्यदेश का यह मानचित्र है। भगवान बुद्ध का वचन निम्न प्रकार है :—

अथ खो भगवा एतस्मिं निदाने एतस्मिं पकरणे धम्मिं कथं कत्वा भिक्खू आमन्तेसि—

"अवन्ति दक्खिणापथो, भिक्खवे, अप्पभिक्खुको। अनुजानामि, भिक्खवे, सब्बपच्चन्तिमेसु जनपदेसु विनयधरपञ्चमेन गणेन उपसम्पदं। तत्रिमे पच्चन्तिमा जनपदा—पुरत्थिमाय दिसाय कजङ्गलं नाम निगमो, तस्स परेन महासाला, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे; पुरत्थिमदक्खिणाय दिसाय सल्लवती नाम नदी, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे; दक्खिणाय दिसाय सेतकण्णिकं नाम निगमो, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा; ओरतो मज्झे; पच्छिमाय दिसाय थूणं नाम ब्राह्मणगामो, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे; उत्तराय दिसाय उसीरद्धजो नाम पब्बतो, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे।

[महाबग्ग :५—चम्मक्खन्धकं, परिच्छेद १३ महाकच्चानस्स पञ्चवरपरिदस्तना : २६]

मध्यदेश नामक अपनी पुस्तक में डा० वर्मा जी लिखते हैं :—

आधुनिक काल में मध्यदेश के स्थान पर कोई नवीन नाम प्रचलित नहीं हो सका। आजकल इसे हम साधारणतया 'हिंदी प्रदेश' कह सकते हैं। अंग्रेजी शासकों ने मध्यदेश अथवा हिंदी प्रदेश को धीरे-धीरे जीता था और उसी क्रम से वे इसके अनेक छोटे-बड़े प्रांत बनाते गये थे जिनके पीछे कोई प्राचीन सांस्कृतिक परंपरा अथवा तर्क नहीं था। ये शासन-संबंधी विभाग अभी भी लगभग उसी रूप में चल रहे हैं और निम्नलिखित हैं— बिहार, उत्तरप्रदेश, विंध्यप्रदेश, मध्यप्रदेश, मध्यभारत, भूपाल, राजस्थान, अजमेर, दिल्ली, पूर्वी पंजाब और हिमांचल-प्रदेश। मध्यदेश के इन राज्यों की जनसंख्या लगभग १५ करोड़ है। विधान के अनुसार इन सब राज्यों की राजभाषा हिंदी मानी गई है। मध्यदेश अथवा वर्तमान हिंदी प्रदेश के इन लगभग एक दर्जन राज्यों को अधिक स्वाभाविक रूप में संगठित करने के संबंध में अभी तक गंभीर विचार नहीं हुआ है, यद्यपि भारतवर्ष की अन्य भाषाओं के प्रदेशों के स्वाभाविक राज्यों के निर्माण की चर्चा निरंतर होती है और उनमें से कुछ के पृथक राज्य बन भी चुके हैं।''
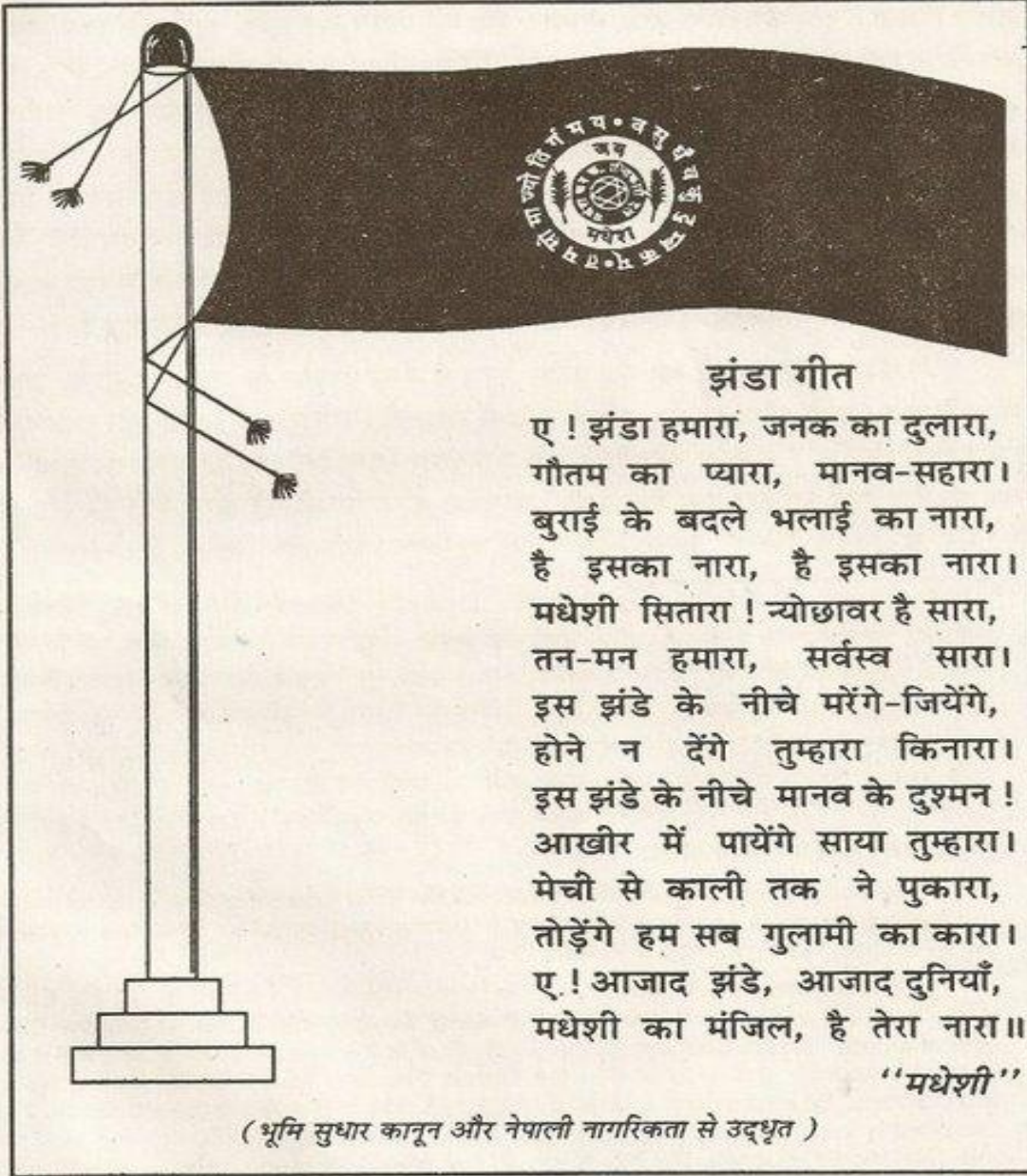
डा० साहब आगे लिखते हैं :—

''प्राचीन मध्यदेश अनेक जनपदों में बँटा था। इनका अस्तित्व आज भी है। इनका व्यक्तित्व हिंदी की प्रधान बोलियों की सीमाओं के रूप में स्पष्टतया दिखलाई पड़ता है। बोली के अतिरिक्त ये विशेषताएँ प्रादेशिक जातियों, रस्म-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान आदि में भी दिखलाई पड़ता है। इनका अध्ययन अभी नहीं हुआ है। मध्यदेश के प्राचीन जनपद निम्नलिखित थे। प्रत्येक के आगे कोष्ठक में वर्तमान बोली का नाम भी दे दिया गया है—१. कुरु (खड़ी बोली), २. पंचाल (कन्नौजी), ३. शूरसेन (ब्रजभाषा), ४. कोसल (अवधी), ५. काशी (भोजपुरी), ६. विदेह (मैथिली), ७. मगध (मगही), ८. अंग, ९. दक्षिण कोसल (छत्तीसगढ़ी), १०. वत्स (बघेली), ११. चेदि (बुंदेली), १२. अवंति (मालवी), १३. मत्स्य (जयपुरी)। पहाड़ी भाषाओं तथा मारवाड़ी और मेवाती बोलियों के प्राचीन जनपदों के नाम कुछ संदिग्ध हैं। अत: वर्तमान समय में हिंदी की बोलियों के क्षेत्रों में जो प्रादेशिक भावना जाग्रत हो रही है उसके पीछे कुछ ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक कारण भी हैं। मध्यदेश के प्राचीन इतिहास को समझकर इस भावना को ठीक दिशा में अग्रसर करने की आवश्यकता है।''

इस प्रकार इतिहास का भूला-भटका कोई भी पाठक इसे आसानी से समझ सकता है कि प्राचीन मध्यदेश के कोसल, काशी तथा विदेह जनपदों के उत्तरी हिस्से वर्तमान मधेश किस तरह अब तक साम्राज्यवादी साजिश के शिकार हैं। दिल्ली और काठमांडू इस पर पर्दा नहीं डाल सकते। यह उनके वश के बाहर की बात है। मानव अधिकार की उपेक्षा करने पर जन-विद्रोह होगा। यह अवश्यम्भावी है।

''कुरु, 'पांचाल', 'शूरसेन', 'मत्स्य', 'कोशल', 'काशी', 'विदेह या मिथिला (बज्जि, मल्ला)', 'मगध', 'अंग', 'वत्स', 'चेदि' और 'अवन्ति'।''†

झंडा गीत

ए ! झंडा हमारा, जनक का दुलारा,
गौतम का प्यारा, मानव-सहारा।
बुराई के बदले भलाई का नारा,
है इसका नारा, है इसका नारा।
मधेशी सितारा ! न्योछावर है सारा,
तन-मन हमारा, सर्वस्व सारा।
इस झंडे के नीचे मरेंगे-जियेंगे,
होने न देंगे तुम्हारा किनारा।
इस झंडे के नीचे मानव के दुश्मन !
आखीर में पायेंगे साया तुम्हारा।
मेची से काली तक ने पुकारा,
तोड़ेंगे हम सब गुलामी का कारा।
ए ! आजाद झंडे, आजाद दुनियाँ,
मधेशी का मंजिल, है तेरा नारा॥

''मधेशी''

(भूमि सुधार कानून और नेपाली नागरिकता से उद्धृत)

---

† देखें, नागरी.प्रचारिणी पत्रिका (नवीन संस्करण), भाग ३, अंक ४, पृष्ठ ३९२ का परिशिष्ट (१) का कोष्ठक 'ख'। इसमें भगवान् बुद्ध के मध्यदेश के जनपदों के नाम लिखे गये हैं। कोष्ठक में 'दक्षिण कोशल' का नाम नहीं लिखा गया है। लेकिन 'उक्कल (उत्कल)' के मध्यदेश से बाहर गिने जाने के कारण 'दक्षिण कोशल' मध्यदेश के अन्दर स्वाभाविक रूप से आ जाता है। **दो व्यापारियों के उक्कल (उत्कल) से मज्झिम देश (मध्यदेश) की ओर आने का वर्णन जातक में मिलता है** (J. R. A. S., London, 1904, Page 86).

भगवान् 'बुद्ध' एवं राजा 'विदेह' दोनों मध्यदेशियों की संतान हैं। नेपाल के मधेश क्षेत्र (जो मध्यदेश के प्राचीन जनपद 'पांचाल', 'कोशल', 'काशी', एवं 'मिथिला' (विदेह) का उत्तरी हिस्सा है) में ही विश्व-वंद्य भगवान् बुद्ध की पावन जन्मभूमि 'लुम्बिनी' तथा जगत जननी जानकी की पवित्र जन्मभूमि 'जनकपुर' भी है। बौद्धों के धर्म ग्रन्थ 'विनय-पिटक' में भगवान् बुद्ध ने मध्यदेश की सीमा बतलायी है। भगवान् बुद्ध के मध्यदेश की सीमा का निर्धारण करने का कारण यह था कि दक्षिण अवंति में भिक्षुओं की कमी के कारण बौद्ध धर्म के प्रचार में बाधा पड़ती थी। प्रसिद्ध बौद्ध धर्मोपदेशक महाकाञ्चायन ने इस कठिनाई के सम्बन्ध में बुद्ध भगवान् के पास संवाद भेजवाया। तब बुद्ध भगवान् ने नियम में इतना परिवर्तन कर दिया कि मध्यदेश को छोड़कर बाहर के देशों में केवल चार भिक्षुओं की उपस्थिति पर्याप्त समझी जावे। इसी स्थान पर भगवान् बुद्ध ने मध्यदेश की सीमाएँ भी बतला दीं जो निम्न प्रकार है :—

"पश्चिम में ब्राह्मणों का थून प्रदेश, पूरब में कजंगलनगर के आगे महासाला, उत्तर में उसीरद्धज (उसीरध्वज) पर्वत, दक्षिण पूरब में सल्लवती (सलिलवती) नदी और दक्षिण में सेतकन्निक नगर।"* प्रोफेसर ओल्डेनवर्ग के मतानुसार 'मध्यदेश' का यह वर्णन ई. पू. ४०० वर्ष का है।† बुद्ध भगवान् द्वारा गिनाई गयी मध्यदेश की सीमाओं की खोज होने पर विद्वानों की राय से 'विनय-पिटक' के मध्यदेश की सीमा निम्न प्रकार निर्धारित हुई है :—

---

* "अवन्तिदक्खिणापथो, भिक्खवे, अप्पभिक्खुको। अनुजानामि, भिक्खवे, सब्बपच्चन्तिमेसु जनपदेसु विनयधर-पञ्चमेन गणेन उपसम्पदं। तत्रिमे पच्चन्तिमा जनपदा—पुरत्थिमाय दिसाय कजङ्गल नाम निगमो, तस्स परेन महासाला, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, आरतो मज्झे; पुरत्थिमदक्खिणाय दिसाय सल्लवती नाम नदी, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे; दक्खिणाय दिसाय सेतकण्णिकं नाम निगमो, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे; पच्छिमाय दिसाय थूणं नाम ब्राह्मणगामो, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे; उत्तराय दिसाय उसीरद्धजो नाम पब्बतो, ततो परा पच्चन्तिमा जनपदा, ओरतो मज्झे (महावग्ग, ५.२३.२६, पृष्ठ १९९—प्रो० भिक्षु जगदीश कश्यप एम० ए० द्वारा सम्पादित)।" डा० मैक्समूलर ने उपरोक्त पालि उद्धरण का निम्न प्रकार अनुवाद किया है—

"The Southern country and Avanti has but few Bhikhhus. I allow the Upasampada (ordination) in border countries to be held in a meeting of only four Bhikhhus, beside the Chairman, who must be a Vinaya-Dhar."

In this passage the following are the border countries referred to. To the East is the town Kajangala, and beyond it Mahasala. Beyond that is border country; this side of it is the Middle Country. To the South-East is the river Salalavati. Beyond that is border country; this side of it is the Middle Country. To the South is, the town Setakannika. Beyond that is border country this side of it is the Middle Country. To the West is the Brahmin district of Thuna. Beyond that is border country; this side of it is the Middle Country. To the North is the Mountain range called Usiradhaga. Beyond that is border country; this side of it is the Middle Country (The Sacred Books of the East, Vol. XVII, Mahavagga V page 38)" इसके और अनुवाद के लिये देखिये (J. R. A. S., London, 1904, Page 84) तथा (Sacred Books of the Buddhists, Vol. XIV., Mahavagga V. Page 265—by I. B. Horner, M. A.)

† "The document in which this statement occurs was considered by Professor Oldenberg, in the introduction to his edition of the text (dated May, 1879), as being about 400 B.C., and probably a little earlier (J. R. A. S., London, 1904, Page 85)"

"पूरब में भागलपुर से ७० मील से भी पूर्व,* पश्चिम में स्थानेश्वर † ('कुरु' जनपद का पश्चिमी हिस्सा), उत्तर में हिमालय के नीचे का हिस्सा ‡ तथा दक्षिण में विन्ध्य-पर्वत।** आज भी नेपाल के 'मधेश क्षेत्र' की पूर्वी सीमा मेची नदी है जो पश्चिम बंगाल की पश्चिमी सीमा से जा मिली है। साथ ही प्राचीन विदेह अर्थात् मिथिला जनपद के निवासियों की आधुनिक ग्रामीण बोली 'मैथिली' मोरंग†† जिले की जनता द्वारा बोली जाने के कारण मेची तक का भू-भाग 'विदेह' जनपद का ही भूमि-भाग माना जायेगा। उपरोक्त आधार पर भी 'विनय-पिटक' के मध्यदेश की उपरोक्त पूर्वी सीमा (भागलपुर अर्थात् चम्पा से ७० मील से भी पूर्व) की सत्यता

---

* "Yuan Chwang locates this place at about 400 li, that is, about 65-70 miles, east of Champa, whose capital is known to have been close to where the modern Bhagalpur now stands. This would fix that Kajangala at about 98° E, by 25° N. (J. R. A. S., London, 1904, Page 87.")

† "Thuna has not been identified by any scholar. As Y. Ch's (Yuan Chwang's) account makes Thaneswar the westernmost country of the Buddhist Middle Country, I propose to identify. Thuna (of Sthuna of Divyavadan) with Sthanvisvara. Sthuna and Sthanu seem to be different forms of the same word; such metathisis of vowels being found in Pali and Prakrit. Iswara the second part of Sthanvisvara (Mod. Thaneswar is redundant, it being identical in meaning with Sthanu (=Shiva)—The Ancient Geography of India—by S. M. Shastri, M.A. in the Indian Antiquary, 1921, foot note 26, Page 121."

‡ "In Buddhist works the eastern boundary of the Middle Country is placed much further east at a town called Kajangala, and the northern boundary at the mountain called Usiraddhaja or 'Usiragiri'. Kajangala is of course quite distinct from Kankhala, but the Usiragiri looks like a corruption of Usinaragiri, which the Kathasaritsagara mentions in connection with Kankhala. Usinara occurs already in the Aitariya. Brahmana (viii. 14) and in the Sutras of Panini (II. 4, 20, and IV 2, 118) as the name of the country; it was properly converted into Usira because it remained theh Buddhist monks of the familiar 'Khaskas' (The Poet Rajasekhara—by E. Hultzsch, Ph.D. in the Indian Antiquary, 1905, Page 179)."

उत्तर में हिमालय के निचले हिस्से तक ही मध्यदेश की उत्तरी सीमा थी' यह बात सही है। क्योंकि जातक में लिखा है कि बौद्ध सन्यासी लोग हिमालय से नीचे मध्यदेश में जाने से डरते थे। क्योंकि वहाँ के लोग बहुत विद्वान् होते थे (देखें, नागरी प्रचारिणी पत्रिका (नवीन संस्करण), भाग ३, अंक १, पृष्ठ ३८ की याद टिप्पणी २; J. R. A. S. London, 1904, Page 86.

** मध्यदेश की दक्षिणी सीमा विन्ध्यपर्वत का ही होना निश्चित है। क्योंकि दक्षिण अवंति को बुद्ध ने मध्यदेश के बाहर बतलाया है। हॉर्नर महोदय का अनुवाद इसे स्पष्ट करता है—"Monks, the Southern region of Avanti is short of monks. I allow, monks, in all border districts ordination by a group (usually two to four monks) with, as fifth, an expert on discipline (Sacred Books of the Buddhists, Vol. XIV, Mahavagg V Page 265—I B. Horner)"

†† नेपाल के मधेश-क्षेत्र के पूर्वी हिस्से का अन्तिम जिला 'मोरंग' है जिसमें मेची नदी तक का भू-भाग सामिल है। इसका विस्तार पूरब में उतना ही है जहाँ तक बिहार प्रदेश के पूर्णियाँ जिले की पूर्वी सीमा का विस्तार है। प्रशासनिक सुविधा के हेतु फिलहाल ही 'मोरंग' जिले के भू-भाग में से ही 'झापा' जिले का निर्माण किया गया है।

स्वत: सिद्ध हो जाती है। क्योंकि 'विदेह' मध्यदेश के ही अन्तर्गत लिखा गया है।‡ इसी 'विदेह' जनपद के राजा जनक के भ्राता कुशध्वज ने धर्मपाल वंश के बौद्ध नेपाली राजा सुधन्वा को जो मर्यादा पुरुषोतम राम का समकालीन था और जिसने विदेह आकर जानकी जी के स्वयम्बर में भाग लिया था, लड़ाई में परास्त कर उसके नेपाल राज्य पर अपना अधिकार जमाया और सहस्रों वर्ष तक उसके वंशज ने वहाँ का शासन चलाया। आज प्राचीन आर्यावर्त्त के हृदय प्रदेश 'मध्यदेश' के प्राचीन भू-भागों के नाम विदेशियों के आधिपत्य से बदल गये हैं। फिर भी मध्यदेश के प्राचीन जनपद दूसरे नाम से भी अपने क्षेत्रगत आत्म-निर्णय के अधिकार की रक्षा करते हुए विद्यमान हैं। परन्तु नेपाल के मधेशियों ने यद्यपि अपने क्षेत्र का नाम 'मधेश' शब्द को सुरक्षित रक्खा है, फिर भी ऐतिहासिक काया-पलट के कारण अपने सांस्कृतिक एवं आत्म-निर्णय के अधिकार को खोकर अब तक परतन्त्र हैं।

सम्प्रति नेपाल अधिकृत यह 'मधेश-क्षेत्र' दो हिस्सों में विभाजित है—(१) भीतरी मधेश तथा (२) खास मधेश। दोनों हिस्सों में कुल इक्कीस जिले हैं। भीतरी मधेश के जिले हैं—'उदयपुर', 'सिन्धुली', 'मकवानपुर', 'नवलपुर', 'चितौन', 'दाङ्ग', 'देउखुरी', 'सुनार' और 'सुर्खेत' तथा खास मधेश के जिले हैं—'मोरङ्ग', 'सप्तरी', 'महोत्तरी', 'सर्लाही', 'रौतहट', 'बारा', 'परसा', 'बुटवल', 'बाँके', 'बर्दिया', 'कैलाली' और 'कंचनपुर'। इसकी जनसंख्या समूचे नेपाल देश (आधुनिक नेपाल राष्ट्र) की जनसंख्या की आधी से अधिक है।* इसका भौगोलिक मूल कारण है—मधेश (तराई) क्षेत्र की उपजाऊ भूमि।†

इस प्रकार बौद्धों के बृहत मध्यदेश के वर्णन द्वारा हमने नेपाल के 'मधेश' के अस्तित्व की वास्तविकता का यह रूप दुनियाँ के सामने रखा है और 'मधेसिया' शब्द का विदेशों में कोई अर्थ ही नहीं होगा; क्योंकि ''मधेस'' नेपाल देश के ''तराई-क्षेत्र'' का नाम है, देश का नहीं कहने वाली सरकार को हमने इतना उत्तर देना चाहा है कि ऐसी गैरजिम्मेदार सरकार की पैदाइश होने के बहुत वर्ष पहले ही विदेशियों ने भी 'मध्यदेश' की पूरी जानकारी कर ली है। इसलिए अनुचित तर्क द्वारा मध्यदेश अथवा मधेश के अस्तित्व एवं उसके मानसिक तथा आत्मिक पहलुओं (संस्कृति) को खतम करने के उनके प्रयास बिलकुल निरर्थक सिद्ध होंगे।

यहीं एक प्रश्न उठता है कि मधेशियों की संस्कृति क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर देने के पहले हमें इस पर विचार करना होगा कि आखिर संस्कृति (मानसिक तथा आत्मिक पहलू) के अंग की वस्तुएँ कौन-कौन सी हो सकती हैं। मानव जीवन का भौतिक पहलू सभ्यता कहलाती है जिसका सम्बन्ध मानव के शारीरिक अंगों से ही होता है। दूसरा आध्यात्मिक पहलू है जो संस्कृति कहलाती है जिसका सम्बन्ध मानव के मन एवं उसकी आत्मा से रहता है। किसी

‡ "We are elsewhere told in the Jataka (1·80) of two merchants travelling on the road from Ukkala to the Majjhima Desa; of hermits fearing to descend from the Himalaya to go into Majjhima Desa because the people there are too learned (3·115, 116); of a mountain Aranjaragiri in the Majjhima Desa (3·463; 5·134), and of Videha being situated within it (3·364)—J. R. A. S., London, 1904, Page 86." डा० ग्रियर्सन साहब मिथिला (विदेह) के सम्बन्ध में लिखते हैं कि उसकी उत्तरी सीमा हिमालय है (Linguistic Survey of India, Vol. V., Part II, Page 13).

* देखिए ''नेपाल की कहानी—काशीप्रसाद श्रीवास्तव, एम० ए०, पृष्ठ ८६।''

† Density of Population depends on fertility of the land.

समाज की सभ्यता से जहाँ हमें यह पता चलता है कि मानव किस प्रकार शारीरिक सुविधाओं की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हैं, वहाँ उसकी संस्कृति से यह पता चलता है कि मानव जीवन की अनुभूतियाँ एवं उसके विचार अर्थात् उद्देश्य क्या हैं। मानव की आत्मा मानव को अनुभूतियाँ प्रदान करती है और उसका मन उन्हें विचारों के रूप में व्यक्त करता है। मानव, विचारों अर्थात् उद्देश्यों की अभिव्यक्ति अपनी अनुभूतियों के आधार पर भाषा के माध्यम से करता है जिसे हम साहित्य—विस्तृत रूप में—कला-साहित्य, विज्ञान-साहित्य, दर्शन-साहित्य, इतिहास-साहित्य, नीति-साहित्य, समाज-साहित्य, राजनीति-साहित्य इत्यादि न मालूम कितने साहित्य के नामों से पुकारते हैं और पुकारेंगे। अत: जब मानव की अनुभूतियाँ एवं उसकी विचारधाराएँ ही संस्कृति कहलाती हैं, तब धर्म एवं साहित्य स्थूल रूप में संस्कृति के अंग माने जा सकते हैं। धर्म (अर्थात् दर्शन) जहाँ मानव की अनुभूतियों से सम्पर्क रखता है, वहाँ साहित्य (अर्थात् भाषा) उसकी विचारधाराओं को प्रस्तुत करने में समर्थ होता है और अनुभूतियों एवं विचारधाराओं के अनुकूल ही मानव का सामाजिक संगठन (शिक्षा, कला, जाति-व्यवस्था इत्यादि विविध व्यवस्थाओं का संगठन) होता है जिस पर समाज की राजनैतिक स्थिति निर्भर करती है। **सांस्कृतिक अंगों के समुचित विकास पर ही समाज की राजनैतिक स्थिति निर्भर करती है, इसे राज्यशास्त्र के विद्वान् भी स्वीकार करते हैं। विश्व के मानव-समुदाय की जिस जाति का धर्म, साहित्य, सामाजिक संगठन जितनी उन्नत अवस्था में रहेंगे उतनी ही उन्नत अवस्था में उस जाति की राजनैतिक स्थिति भी रहेगी।**

हमारी सभ्यता एवं संस्कृति दोनों हीनावस्था में है। इसका मूल कारण है—''सदियों से 'मधेशक्षेत्र' की परतन्त्रावस्था।'' **शासक अपने शासितों की विकासोन्मुख अनुभूतियों एवं विचारों को कभी भी पनपने देना नहीं चाहता है। गुलामी का इतिहास इस बात का साक्षी रहा है।** किसी भी संस्कृति का मानव-समुदाय तभी ही दूसरी संस्कृति के मानव-समुदाय पर शासन कर पाता है जब कि वह या तो उस मानव-समुदाय के सांस्कृतिक अंगों (खासकर उसके साहित्य अर्थात् भाषा) को प्राय: नष्ट कर देता है या कुछ काल के लिए दबा डालता है। दूसरी संस्कृति के मानव समुदाय पर हावी होने के लिये सबसे पहले हर प्रकार से वह अपनी भाषा को ही उस समुदाय पर लादता है। अपने ही संस्कार का, अपनी ही जातीयता का पक्का दुश्मन, राणाओं ने यद्यपि ऐसा तो नहीं कर पाया जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य 'नेपाल' आज व्याकुल दिखलायी पड़ता है, जिसे हम बीसवीं सदी में अनधिकार चेष्टा ही कही जायेगी, परन्तु राणाओं ने मधेश के जन-समुदाय की विकासोन्मुख अनुभूतियों एवं विचारों को कभी पनपने नहीं दिया।

वैदिक काल से लेकर पौराणिक काल तक की अनुभूतियों एवं विचारों से नेपाल का सारा मधेश-क्षेत्र अनुप्राणित है। सर्वत्र इन्द्र, वरुण, वायु, सूर्य, चन्द्र, अग्नि, राम, कृष्ण, काली, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, नारायण, विष्णु, महेश, ब्रह्मा इत्यादि देवी-देवताओं की पूजा होती देख कोई भी कह सकता है कि मधेश क्षेत्र में सनातन संस्कृति का ही प्रधान्य है। फिर भी यहाँ का जन-समुदाय पुरानी लकीर का फकीर ही बना हुआ है। इसका मूल कारण है—''साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति द्वारा शासकों का सदा से पतनोन्मुख पुरानी अनुभूतियों एवं धारणाओं पर अशिक्षित जनता की आस्था को बनवाये रखना।'' मधेश में कहीं-कहीं अरबी संस्कृति के

माननेवाले की संख्या भी है। उनके तथा मधेशी हिन्दुओं के परस्पर के प्रेम-व्यवहार बहुत ही प्रशंसनीय हैं। परन्तु नेपाली तथाकथित नेताओं द्वारा अवश्य ही परस्पर के इस प्रेम-व्यवहार में साम्प्रदायिकता का जहर उड़ेला जाता है। खूबी यह है कि समझदार मुस्लिम इस भ्रम में नहीं पड़ते हैं। इसका कारण पड़ोसी हिन्दुस्तान के हिन्दू-मुसलमानों के परस्पर के प्रेम-व्यवहार का असर पड़ना ही समझना चाहिए।

साहित्य अर्थात् भाषा के क्षेत्र में हम संक्षेप में कह सकते हैं कि संसार के भाषा-समूहों में 'इण्डो-यूरोपियन' कुल के 'इण्डो-ईरानियन' उपकुल की तीन शाखाओं (ईरानी, दरदी तथा भारतीय आर्य-भाषा) में से हमारी भाषा मध्यदेशीय आर्यभाषा है। भारत के मध्यदेश की आधुनिक साहित्यिक भाषा हिन्दी है। लेकिन ग्रामीण बोलियाँ मैथिली, भोजपुरी, मगही, अवधी, कन्नौजी, ब्रज, खड़ी बोली, बाँगरू, मारवाड़ी, जयपुरी, मालवी, बुन्देली, बघेली तथा छत्तीसगढ़ी हैं।)*

डा० ग्रियर्सन द्वारा सम्पादित 'भाषा सर्वे' में 'मैथिली', 'भोजपुरी' एवं 'मगही' को बिहारी भाषा कही गयी है तथा जयपुरी, मालवी और मारवाड़ी को राजस्थानी भाषा। भारत के मध्यदेश का आधुनिक राजनैतिक विभाजन ही इसका कारण माना जा सकता है। परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि डा० ग्रियर्सन महोदय के 'भाषा सर्वे' तथा डा० चैटर्जी महोदय के 'बंगाली लैंग्वेज' के आधार पर डा० वर्मा महोदय ने 'विहारी' तथा 'राजस्थानी' भाषाओं को मध्यदेशी भाषाएँ ही कहा है।† अतः प्राचीन मध्यदेशीय स्थिति ही इसका मूल कारण कहा जा सकता है। हिन्दी के 'अपभ्रंश काल' से लेकर 'रीतिकाल' तक मध्यदेशीय ग्रामीण बोलियाँ ही साहित्यिक भाषा के पद पर आसीन थीं और अभी भी इन बोलियों में साहित्य का सृजन होता है। भारत में मैथिली बोली का साहित्य अभी भी उन्नत अवस्था में है यद्यपि यहाँ के निवासियों की साहित्यिक भाषा हिन्दी भी है। नेपाल के 'मधेश क्षेत्र' की ग्रामीण बोलियाँ मुख्यतः पूर्व में 'मैथिली', मध्य में 'भोजपुरी' एवं पश्चिम में 'अवधी', 'कन्नौजी' 'ब्रज' तथा गढ़वाली-कुमाउँनी से मिलती-जुलती बोलियाँ हैं।‡ **स्मरण रखना चाहिये कि गढ़वाल-कुमायूँ के लोगों की साहित्यिक भाषा हिन्दी ही है।** नेपाल के सम्पूर्ण 'मधेश क्षेत्र' की साहित्यिक भाषा हिन्दी है और साथ ही यहाँ के शिष्ट लोग अपने विचारों की अभिव्यक्ति हिन्दी

* देखें, नागरी प्रचारिणी पत्रिका (नवीन संस्करण) भाग ३, अंक ४, पृष्ठ ३९२ का परिशिष्ट (२) का मानचित्र। मानचित्र में प्राचीन मध्यदेश के प्राचीन जनपदों के विभाजन के साथ-साथ जनपदों के आधुनिक मध्यदेशीय आर्य भाषाओं का भी विभाजन दिखलाया गया है।

† "हिन्दी, भाषा और लिपि"—धीरेन्द्र वर्मा, एम० ए०, डी० लिट्, पृष्ठ २९-३१।

‡ 'भाषा सर्वे' में ग्रियर्सन साहब ने भी 'मैथिली', 'भोजपुरी', 'अवधी', 'ब्रज' इत्यादि भाषाओं की सीमा निम्न प्रकार दी है :—

मैथिली की सीमा के संबंध में वह लिखते हैं—"Maithili or Tirhutia is properly speaking, the Language of Mithila, or Taira bhukti (the ancient name of Tirhut). According to Mithila-Mahatmya a Sanskrit work of considerable repute in the territory which it describes, Mithila is the country bounded on the north by the Himalaya Mountain, on the south by the Ganges, on the west by the River Gandak and on the east by the River Kosi. It thus includes the British districts of Champaran, Mazaffarpur, and Darbhanga, as well as the strip of the Nepal Tarai which runs between these districts and the lower ranges of the Himalayas........................it has also extended east of the river Kosi, and occupies the

में ही करते हैं तथा 'मधेशक्षेत्र' में सभी राजनैतिक पार्टियों के अपने प्रचार कार्य हिन्दी में ही हुआ करते हैं। एक विशिष्ट बात तो यह है कि **जहाँ हिन्दी भाषा में अन्तर्प्रान्तीय उपयोगिता मौजूद है वहाँ नेपाली भाषा 'राज-भाषा' मात्र है जिसे नेपाली अधिकारी वर्ग तक ठीक से नहीं समझ पा रहे हैं।**

greater part of the District of Purnea, and has moreover crossed the Ganges, and is now spoken over the whole of the South-Gangetic portion of the Bhagalpur District, over the eastern portion of the South-Gangetic portion of the Monghyr District, and in the north and west of the Sonthal Parganas (L. S. I., Vol. V., Part II., Page 13)"

ग्रियर्सन साहब के मत से 'मैथिली' तो गोरखा शासकों के पूर्व नेपाल की राजभाषा थी—".......it appears that even about the year 1650 (i. e., a Century before the Gorkhas conquered Nepal) the court language of Patan, near Kathmandu, was not Khasa, but was closely allied to the Maithili dialect of Behari spoken immediately to its South" पाद टिप्पणी तीसरी में वह यह प्रमाण देते हैं—"A Drama in the Language of those days called the 'Harischandra-nritya' is still in existence, and has been edited by Professor A. Conrady, Leipzig, 1891 (L. S. I., Vol. IX., Part IV., Page 17)"

डा० सुनीति कुमार चैटर्जी भी उपरोक्त तथ्य को स्वीकार करते हैं—"Maithili seems to have been current in south-eastern of Nepal before the advent of Khasa-Kura; in any case, Awadhi, Maithili and Bengali were used as Languages of Culture in thet court of the (Tibeto-Burman speaking) Newari Kings, who ruled before the Gurkhas, as is evidenced by a number of dramas written in the above Languages in Nepal right down to middle of the 18th Century (e. g., A. Conrdy, 'Hariscandra-nrtyam', Leipzig, 1891);.......(The origin and development of the Bengal Language, 1926, Part I., Page 10)."

'भोजपुरी' की सीमा के संबंध में ग्रियर्सन साहब निम्न प्रकार लिखते हैं :—

'It Bhojpuri reaches, on the north, across the Ganges, and even beyond the Nepal frontier, up to the lower ranges of the Himalayas, from Champaran to Basti. On the south, it has crossed the Sone, and covers the great Ranchi Plateau of Chota Nagpur, where it ultimately finds itself in contact with the Bengali of Manbhum, and with the Oriya of Singhbhum (L. S. I., Vol. V., Part II, Page 40)."

डा० चैटर्जी महोदय ने जहाँ 'अवधी' को नेपाल के राज-प्रासाद की भाषा बताया वहाँ ग्रियर्सन साहब ने 'कन्नौजी' मिश्रित 'अवधी' को थारुओं की भाषा बताया है—

"......the 3,000 Tharus of Kheri, who are settled in the north and west of the district have been locally reported to speak a Corrupt Gorkhali. An examination of the specimen of their dialect received from the district shows that it is neither more nor less than the local Awadhi, mixed with Kanauji, with a few ignorant corruptions (L. S. I., Vol. VI., Page 121)."

ग्रियर्सन महोदय ने 'ब्रजभाषा' का प्रसार उत्तर में नैनीताल तराई परगने तक बताया है—

"To the North it (Braj Bhakha) is spoken in the eastern part of Gurgaon. To the north-east, in the Doab, in the Bulandshahar, Aligrah, Etah and Mainpuri and across the Ganges, in Budaon, Bareilly, and the Tarai Parganas of Naini Tal (L. S. I., Vol. IX., Part I, Page 69)."

डा० ग्रियर्सन महोदय के 'भाषा सर्वे' से उपरोक्त उद्धरण प्रस्तुत करने का तात्पर्य यह है कि सभी जान सकें कि नेपाल के 'मधेश-क्षेत्र' की भाषाओं की खोज हो चुकी है और इस क्षेत्र की भाषाएँ मध्यदेशीय आर्य-भाषाएँ ही हैं। मधेशियों में फूट डालकर शासन करने के उद्देश्य से 'थारू-भाषा' नामक शब्दों का प्रचार जो नेपाली शासकगण करने लगे हैं उस सम्बन्ध में भी डा० ग्रियर्सन महोदय का निश्चित मत हम नीचे देते हैं—

"Whatever doubts may exist concerning the origin of this curious race, there can be no doubt that the languages spoken by those members of the tribe who are accessible to students in India are Aryan. There is, however, no such thing as a 'Tharu

डा० धीरेन्द्र वर्मा ने मध्यदेश के हिन्दुओं की वर्तमान साहित्यिक भाषा के अर्थ में ही हिन्दी भाषा की सीमा निम्न प्रकार दी है :—

''पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर-पश्चिम में अम्बाला, उत्तर में शिमला से लेकर नेपाल के पूर्वी छोर तक के पहाड़ी प्रदेश का दक्षिणी भाग, पूर्व में भागलपुर, दक्षिण-पूर्व में रायपुर तथा दक्षिण-पश्चिम में खंडवा।''* इस भूमि-भाग की ग्रामीण बोलियों के साहित्य को हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत ही रखे गये हैं। वस्तुत: इस सच्चाई पर पर्दा डालना एक महान पाप एवं सरासर अन्याय है कि इस भूमि-भाग में हिन्दुओं के आधुनिक साहित्य, पत्र-पत्रिकाओं, शिष्ट बोल-चाल तथा स्कूली शिक्षा की भाषा एकमात्र खड़ी बोली हिन्दी ही है।

इसी जगह नेपाली मधेशियों से एक प्रश्न पूछा जा सकता है कि अपनी संस्कृति के उत्थान के लिये लिखे गये मध्यदेशियों के अपने आधुनिक मालिक ग्रन्थ कौन-कौन से हैं ? चूँकि राजदंड ही संस्कृति का नियामक होता है इसलिये उपरोक्त प्रश्न का एक ही उत्तर दो शब्दों में है—''हमारी परतन्त्रता''। चौहान (पृथ्वीराज) तथा राठौर (जयचन्द) राजाओं के आपसी द्वेष से भारत के हृदय-प्रदेश (मध्यदेश) पर मुसलमान शासकों का अधिकार हो गया। मध्यकालीन मुसलमान-तुर्क-मुगल शासकों का कार्य ही था—''हिन्दुओं की संस्कृति को नष्ट करके उन पर हावी हो जाना।'' परन्तु हिन्दू गोरखा-शासकों की सरकार के भी अकुशल व्यवहार से मधेशी जनता चिढ़ी हुई थी और उनके चंगुल से छुटकारा पाने के लिए आतुर थी। इसलिये देखा जाता है कि मुगल शासकों का पतन एवं अंग्रेजों के अभ्युदय काल में जब अंगरेज-नेपालियों के बीच युद्ध छिड़ा तो मध्यदेशियों ने खुलकर अंग्रेजों का साथ दे दिया। परिणाम यह निकला कि नेपालियों द्वारा विजित सम्पूर्ण 'मधेश-क्षेत्र' पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया और नेपाली शासकों ने भी स्वयं इस क्षेत्र पर से अपना प्रभुत्व सदा के लिये त्याग दिया। परन्तु मधेशियों को लेने के देने ही पड़े। उन्हें फिर से गोरखा-शासकों के अधीन में ही जाना पड़ा। क्योंकि चतुर व्यवहार-कुशल राजनीतिज्ञ अंग्रेजों ने लड़ाई के बाद संधि के दूसरे वर्ष से ही विजित मधेश-क्षेत्र के हिस्से गोरखा शासकों को लौटाना शुरू कर दिया। ऐसा करने के पीछे उनके राजनैतिक उद्देश्य थे—भारत में अंग्रेजी राज्य की नींव को सुदृढ़ करने के लिए पथ को निष्कंटक रखना तथा नेपाली शासकों की मित्रता प्राप्त करके उनपर अपना प्रभुत्व सदा के लिये कायम रखना। साथ ही मधेशियों को खुश रखने के लिये अंग्रेजों ने नेपाल के राजा पर यह शर्त लगाया कि वह तराई-निवासियों को दण्ड नहीं देंगे जब तराई-प्रदेश पर उनका प्रभुत्व हो जायेगा। क्योंकि तराई-निवासियों ने युद्ध के समय

Language'. Every-where the Tharu speak more or less correctly, the language of the Aryan races with whom they are immediately in contact. For instance the Tharu of the north of Purnea appear to speak a corrupt form of the Eastern Maithili spoken in that Districts, those of Champaran and Gorakhpur, a corrupt Bhojpuri, and those of the Naini Tal Tarai the oridinary Western Hindi of the locality (L. S. I., Vol. V., Part II, Page 311)."

अत: स्मरण रखना चाहिए कि थारुओं की भाषा मध्यदेशीय आर्य-भाषा है। वैसे तो चार कोस के अन्तर में ही जब एक ही भाषा के उच्चारण में फर्क पाया जाता है तो न मालूम एक ही भाषा की कितनी ही उप-बोलियाँ हो सकती हैं।

* देखें ''हिन्दी भाषा और लिपि—धीरेन्द्र बर्मा, पृष्ठ ४०।''

में अंग्रेजों की मदद की थी और राजा ने इसे स्वीकार भी कर लिया। १८५७ ई. के भारत का सिपाही-विद्रोह को दबाने में राणा शासकों ने अंग्रेजों का साथ दिया जिसके लिये पुरस्कार के रूप में नेपाली शासकों को मधेश के पश्चिमी हिस्से भी अंग्रेजों द्वारा प्राप्त हो गये।

ब्रिटिश समर्थक एकतंत्री क्रूर राणाशाही का प्रादुर्भाव जबसे नेपाल में हुआ जो केवल अंग्रेजों के लिये ही वरदान स्वरूप सिद्ध हुआ तबसे मधेश के जन-समुदाय का तो कौन कहे, सम्पूर्ण पर्वत-प्रदेशों के जन-समुदायों का सांस्कृतिक जीवन छिन्न-भिन्न हो गया। केवल 'राजभाषा' के रूप में गोरखा-शासकों की दरबारी-भाषा नेपाली (खसकुरा) की उन्नति को छोड़कर पहाड़ी प्रदेश की अन्य भाषायें जिन्हें भाषा-शास्त्री 'चीनी-तिब्बती' कुल की भाषायें मानते हैं उनके विकास को एकदम ही अवरुद्ध कर दिया गया। स्वयं नेपाली भाषा जिसकी उत्पत्ति 'पिशाच वा दरद' अथवा 'खस' से है* और जिसपर प्राचीन सपादलक्ष में आकर बसे हुये राजस्थानी गूजर राजपूतों की बोलियों का प्रभाव है,† अभी तक समृद्ध एवं सम्पन्न

* "The Pahari or Khasa dialects present a linguistic complication. According to Grierson, the original speech of the Khasa tribes, who spread from Western Himalayas into the eastern montane tracts, was of Dardic Origin, and like Dards, Khasa were Aryans outside the pale of Hindu Society. Indo-Aryan speakers from the plains, mostly from Rajputana, migrated north into the Himalayas among the Khasas, and Hinduised them, from the early centuries of the Chrishan era; and the Indo-Aryan dialects they brought completely killed off the original speeches of the Khasa, and become transformed into the present day Pahari dialects; which are thus forms of South-Western (Rajasthani) Indo-Aryan, carraid to the Himalayas at a late period, and modified more or less by Dardic whose place they took, the traces of Dardic being stronger in the west. (The origin and development of the Bengal language—by Dr. S. K. Chatterjee, Vol. I., P. 9)."

† उपरोक्त खश् गूजर राजपूतों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में डा० ग्रियर्सन महोदय निम्न प्रकार लिखते हैं :—

"The earliest immigrants of whom we have any historical information were the Khasas, a race probably hailing from Central Asia and originally speaking an Aryan, but not necessarily an Indo-Aryan, language. They were followed by the Gurjaras, a Tribe who invaded India about the Sixth Century A. D. and occupied the same tract, then known as Sapadalaksha. At that time, they also spoke an Aryan, but not necessarily an Indo-Aryan, language. Of these Gurjaras the bulk followed pastoral pursuits and became merged in and identified with the preceding Khasas population. Others were fighting men, and were identified by the Brahmins with Kshatriyas. In this guise they invaded Estern Rajputana from Sapadalaksha, and, possibly, Western Rajputana from Sindh, and founded, as Rajputs, the great Rajput States of Rajputana (L. S. I., Vol. IX., P. IV., Page 14)."

".....The Gurjaras settled among a people speaking an Indo-Aryan language of the Inner Group akin to Western Hindi. They adopted this language, retaining at the same time many forms of their own speech. The result was Rajasthani....(L. S. I., Vol. IX., P. IV., Page 15)."

ये ही सुसंस्कृत गूजर राजपूत भारतीय मध्यदेशीय आर्य-भाषा 'राजस्थानी' को साथ लेकर फिर सपादलक्ष पहुँचे जबकि मुसलमान आक्रमणकारियों ने इन्हें परेशान किया, जहाँ से इन्होंने नेपाल पर आक्रमण किया। डा० राईट हेनरी के कथन को डा० ग्रियर्सन साहब निम्न प्रकार लिखते हैं :—

"Certain Rajputs of Udaipur, being oppressed by the Musalmans, fled to the north, and in the part of the 16th Century settled in the country of the lower Himalayas, including Grahwal, Kumaun, and Western Nepal. In 1559 A. D. a party of these conquered the town or Gorkha (say 70 miles to the north-west of Kathmandu). In 1768 Prithvi →

नहीं हो पायी है। स्मरणीय रहे कि डा० ग्रियर्सन महोदय नेपाली अर्थात् खशकुरा को नेपाल की भाषा मानने के लिये तैयार नहीं हैं। 'नेवारी' को ही वह नेपाल की भाषा मानते हैं।* वस्तुत: यह सत्य भी है। क्योंकि नेपाल (सदर अथवा केन्द्र वा काठमांडू-घाटी) में नेवारी-भाषी जनता का ही प्राधान्य है। अन्य भाषा-भाषी बहुत कम संख्या में दिखलायी पड़ते हैं।

सशस्त्र क्रांति के बाद स्वर्गीय श्री ५ महाराजाधिराज त्रिभुवन वीर विक्रम शाहदेव की शाही घोषणा से मधेशी जनता में नये उमंग एवं नई आशाओं का संचार अवश्य ही हुआ था। परन्तु उनके परोक्ष हो जाने के बाद राज्य की व्यवस्था एवं नीति से मधेशी जन-समुदाय की संस्कृति तो खतरे में पड़ गयी है। क्योंकि श्री ५ की सरकार मनमाने ढंग के कानून बनाकर जिनमें हमारी सहमति ही नहीं रहती है, हम पर तरह-तरह के जुल्म ढाती जा रही है। इस प्रकार ऐसी हालत में जबकि हम सदियों से परतंत्र थे और हैं ही, अपने सांस्कृतिक अंगों (धर्म, साहित्य, सामाजिक संगठन एवं राजनैतिक स्थिति) के परिष्कार के सम्बन्ध में हम क्या कर सकते थे और क्या कर सकते हैं, इसका अन्दाजा सहज में ही लगाया जा सकता है।

आश्चर्य तो इस बात का है कि अंग्रेजों ने कम से कम मधेशियों पर अत्याचार न हो इसकी दिखावटी चिन्ता तो अवश्य की थी, परन्तु स्वतन्त्र भारत एवं नेपाल के बीच हुए समझौते में इसका कुछ भी उल्लेख नहीं है। परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि सुगौली की संधि या बाद की संधियाँ ब्रिटिश-भारतीय शासन की ओर से ही नेपाल के साथ की गई थीं। अत: विदेशी बन्धुओं को जानना चाहिये कि **१६००० वर्गमील में फैला हुआ 'मधेश' जिसकी जनसंख्या,** सम्पूर्ण आधुनिक नेपाल राष्ट्र की जनसंख्या की आधी से अधिक है अर्थात् **६० प्रतिशत है, बिलकुल परतंत्रावस्था में है, जिस पर अंकुशहीन एकवर्गीय शासन के कर्मचारी तरह-तरह के जुल्म ढा रहे हैं।** देखना है कि परतन्त्रता राक्षसी कब तक हम लोगों को सताती है ?

→ Narayan Shah of Gorakha made himself master of the whole. Nepal and founded the present Gorkhali dynesty. It will thus be seen that the ruling classes of Nepal maintain that they are of Rajput origin and their language which is lingua franca of the country, is still closely connected with Mewari-Marwari dialect of Rajasthani spoken in the Udaipur which they claim as their original home (L. S. I., Vol. IX., Part IV., Page 17-18)."

इस प्रकार नेपाल का वर्तमान शासक-वंश मध्यदेशीय भारतीय आर्य-वंश ही साबित होता है। इसी उपरोक्त अर्थ में सम्भवत: श्री राहुल सांकृत्यायन जी ने भी नेपाल को भारत का सहोदर बताया है।

* "The language passes under various names. Europeans call it 'Nepali', or 'Naipali', i. e., the language of Nepal. This is a misnomer, for it is not the language of Nepal, but only that of the Aryan rulers of the country. The inhabitants of Nepal itself give this name (in a slightly corrupted form) to the principal Tibeto-Burman language of the country, Newari, and call the Aryaan language 'Khas-Kura', or 'Khasa-Speech'. In other words, the Khasas, who have abandoned their own language, and adopted that of their Rajput conquerors, have given the adopted language their own name (L. S. I., Vol. IX., P. IV., Page 18)."

"The bulk of the population of Nepal is Tibeto-Burman and the Khasa conquerors have ever been in a minority (L. S. I., Vol. IX., P. IV., Page 15)".

सबसे बढ़कर दु:ख तो हमें इस बात का है कि भारतीय विचारकों ने भी 'मधेश-क्षेत्र' की चर्चा नहीं की। "मध्यदेश का विकास" शीर्षक निबन्ध में डा० धीरेन्द्र वर्मा लिखते हैं— "विदेशियों के आधिपत्य के कारण 'मध्यदेश' शब्द को यद्यपि मध्यदेश वालों ने बिलकुल भुला दिया किन्तु उसका पुराना रूप पूर्णतया लुप्त नहीं हो गया है। पिता हिमालय ने उसको भी शरण दी है। काठमांडू के बाजार में यदि कोई हिन्दुस्तानी निकलता हो तो नेपाली लोग अब भी कहते हैं कि 'मदेसिया' जा रहा है अर्थात् मध्यदेशीय या मध्यदेश का रहनेवाला जा रहा है।*

वर्मा साहब के उपर्युक्त कथन से तो यही पता चलता है कि इस निबन्ध के लिखने के समय तक सम्भवत: उन्हें यह ज्ञात नहीं हो कि नेपाल में प्राचीन मध्यदेश का भूमि-भाग 'मधेश' अभी तक अपना पुराना नाम ही ग्रहण करता हुआ जीता-जागता है जो अभी भी परतन्त्रावस्था में है।

एक दूसरे भारतीय महान् विचारक महामहोपाध्याय पंडित राहुल सांकृत्यायन जी भी 'मधेशियों' को तराईवासी के ही नाम से जानते हैं। काशीप्रसाद श्रीवास्तव जी द्वारा लिखित 'नेपाल की कहानी' नामक पुस्तक का प्राक्कथन लिखते हुए सांकृत्यायन जी कहते हैं—"**यह भी स्मरण रखने की बात है, कि नेपाल के नागरिकों में सबसे अधिक संख्यक हिन्दी वाले तराई प्रदेश के हैं, जो ही नेपाल सरकार को राजस्व सबसे अधिक देने के लिये मजबूर हैं। तराई की हिन्दी-भाषी जनता नेपाल की एक अत्यन्त जटिल समस्या हो सकती है, यदि नेपाल के वर्तमान शासकों ने भी उसके साथ वही बर्ताव रक्खा, जिसे गोरखा-शासक अपने शासन के आरम्भ से करते आ रहे हैं। पाकिस्तान में जैसा पूर्वी पाकिस्तान के साथ बर्ताव करने की प्रवृत्ति देखी जाती है, उससे भी कहीं अधिक हीन मनोवृत्ति नेपाली शासकों की तराई के प्रति मालूम होती है। वह नहीं चाहते कि तराई की जनता कभी भी अपनी संख्याबल के अनुसार शासन में अधिकार पाये। यह निश्चय ही है, कि स्वाभाविक बहुमत रखने वाले इतने नागरिकों को उनके उचित अधिकार से वंचित नहीं रखा जा सकता न उनके ऊपर सबसे अधिक कर-भार लादा जा सकता है। नेपाल के हर हितैषी की यही कामना होगी कि अब से तराई-निवासियों को विजित प्रजा नहीं, बल्कि स्वतन्त्र नागरिक माना जाये। शासन और प्रशासन केवल पर्वतवासियों की इजारेदारी न मानी जाये, और तराईवासियों को दब्बू-गुलाम समझने की प्रवृत्ति को जल्दी से जल्दी छोड़ दिया जाये। इतिहास ने यदि हमारे इन लाखों भाइयों को नेपाल के भीतर रहने के लिये मजबूर किया, तो उससे सदा लाभ उठाने की कोशिश करना आज बुद्धिमानी नहीं मानी जा सकती। आखिर मोरंग से लेकर काली शारदा के किनारे तक बसे ये हिन्दी-भाषी तराई-निवासी उन्हीं लोगों के रक्त और मांस हैं जो उनके दक्षिण में पूर्णिमा† से पीलीभीत तक के जिलों में बसते हैं। तराई-निवासी नेपाल में होकर किसी विदेशी शक्ति के गुलाम नहीं है, नेपाल भारत का सहोदर है, उसके भीतर रहने में उन्हें अरुचि नहीं हो सकती, यदि वह वहाँ का समान नागरिक माना जाये। यदि ऐसा करने में नेपाल के आज के तथा भविष्य के शासक अपने प्रभुत्व को खतरे में समझें, तो यह उनकी अत्यन्त अदूरदर्शिता होगी।**"

* दे० "नागरी प्रचारिणी पत्रिका (नवीन संस्करण), भाग ३, अंक १, पृ० ४३।"

† 'पूर्णिमा' शब्द गलत छपा हुआ प्रतीत होता है। इसे 'पूर्णियाँ' शब्द समझना चाहिए। क्योंकि मोरंग जिले के दक्षिण में ही पूर्णियाँ जिला पड़ता है।

स्वतन्त्र भारत की सरकार एवं नेपाल सरकार के बीच की संधि की बातें तथा सांकृत्यायन जी के उद्‌गार तो परस्पर एकदम विरोध रखते हैं। परन्तु इसमें शक नहीं कि सांकृत्यायन जी हमारी श्रद्धा के पात्र हैं जिन्हें 'तराई-वासी' शब्द के बदले 'मधेशी' शब्द का प्रयोग करना चाहिये जो वस्तुतः हमारे अस्तित्व का प्रतीक है। अन्तर्राष्ट्रीय जगत के पीड़ित मानव-समुदाय हर राष्ट्र-विशेष के सांकृत्यायन जैसे महान् व्यक्तित्व से बड़ी आशा रखते रहे हैं। क्या 'परतन्त्र मधेश' की जन-आत्माभिव्यक्ति को सांकृत्यायन जी विश्व की विभिन्न उन्नत मानव-जातियों में पहुँचा सकते हैं ?

हमें दुख तो तब होता है जब हम देखते हैं कि स्वयं मधेशिया ही अपने को तराई-वासी होने का डंका संसार में पीट-पीट कर अपनी विलक्षण बुद्धि का परिचय देता है जिससे हमको समझने में विदेशी बन्धुओं को भ्रम हो जाता है। कम से कम हमारी दृष्टि से तो 'तराई' शब्द का बहिष्कार पूर्णरूप से होना चाहिये और उसके बदले 'मध्यदेश' वा 'मधेश' शब्द का प्रयोग होना चाहिये। जैसे—"नेपाल मध्यदेशीय वा मधेशी संघ अथवा संस्था" इत्यादि। वैसे तो नेपाल-ब्रिटिश भारत की संधियों में 'तराई' शब्द का ही प्रयोग किया गया है। परन्तु वह प्रयोग सांस्कृतिक दृष्टि से सर्वथा अनुचित है। कम से कम गलतियाँ दुहरायी न जायँ इस पर तो अवश्य ही हमारा ध्यान जाना चाहिये।

स्वयं "नेपाल की कहानी" के लेखक के लिए "मधेश क्षेत्र" एवं "मधेशिया" शब्द भ्रमपूर्ण प्रतीत होते हैं, जैसा लगता है। उन्होंने लिखा है—"नेपाल की तराई अथवा 'मधेश' में प्रायः हिन्दू ही पाये जाते हैं। ये सनातन धर्मावलम्बी हैं। नेपाल में इन्हें 'मधेशिया' कहा जाता है। ये उत्तर-प्रदेश तथा बिहार से आकर अरसे से नेपाल में बस गये हैं। इनकी बोली भी वही है जो बिहार तथा उत्तर-प्रदेश के गाँववाले बोलते हैं। नेपाल में मधेशियों और भारतीयों की संख्या पचास लाख से भी अधिक है।

तराई में एक थारू जाति भी बसती है। "थारू" शब्द 'स्थविर' का अपभ्रंश है। इस जाति के लोग कृषि करते हैं। ये कभी बौद्ध भले ही हों परन्तु अब तो ये अपने को हिन्दू ही कहते हैं।*

उपरोक्त प्रकार के गोलमटोल वाक्य ही विदेशों में भ्रम फैलाने के मुख्य कारण बनते हैं। इसलिए अच्छा तो यही होता कि किसी भी तथ्य को प्रकाश में लाने के पहले उसकी वास्तविकता पर हमें अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिये। अपने ही मध्यदेशीय पूर्वजों की ही वास-भूमि में बसे मध्यदेशीय संतान 'मधेशियों' के सम्बन्ध में यह लिखना कहाँ तक न्यायसंगत हुआ कि 'मधेशिया' बिहार एवं उत्तर-प्रदेश से आकर अरसे से मधेश-क्षेत्र में बसे हैं। कहानीकार की यह अपनी विलक्षण विशेषता ही कही जायेगी। **अगर मध्यदेश के प्राचीन जनपद 'विदेह (मिथिला)', 'काशी', 'कोशल' एवं 'पांचाल' की जनता भारतीय हैं तो नेपाल अधिकृत 'मधेश-क्षेत्र' जो उपरोक्त प्राचीन जनपदों का ही हिस्सा है, यहाँ की जनता को भी अपने को भारतीय समझना होगा। वस्तुतः जो मध्यदेशीय है वह निश्चित अर्थ में अवश्य ही भारतीय है। मध्यदेशीय होकर अपने को भारतीय**

* देखें 'नेपाल की कहानी' पृष्ठ ७।

नहीं समझना, यह तो हमारी सरासर कमजोरी है। साथ ही मध्यदेशीय होकर जो अपने को भारतीय नहीं समझता, वह वस्तुतः मध्यदेशीय है ही नहीं। और मध्यदेशीय होने की उसकी भावना तो एक ढोंग है ही साथ ही मध्यदेशीय जातीयता के प्रति उसका द्रोह रखना भी सिद्ध होता है। इस बीसवीं सदी की सभ्यता एवं संस्कृति के अनुसार नेपाल देश के एक नागरिक नेपाली की हैसियत से विश्व में उन्नत मस्तक लेकर खड़े होने में किसी प्रकार की ग्लानि का अनुभव हमें स्वप्न में भी नहीं होगा, परन्तु मधेशीपने को खोकर नहीं। एक बंगाली व महाराष्ट्री अपने बंगालीपन अथवा महाराष्ट्रीपन को तिलाञ्जलि देकर भारतीय कहलाने के लिये किसी भी शर्त पर तैयार नहीं हो सकता। वह अपने बंगालीपन वा महाराष्ट्रीपन में ही भारतीयत्व की भावना को आत्मसात करके विश्वबन्धुत्व की भावना की ओर अग्रसर होगा, जो मानवता के लिए अधिक हितकर ही सिद्ध होगा, न कि अनिष्टकर, जैसा कि कोरे खोखले भारतीयपन में विश्वास रखने वाले समझा करते हैं। श्री रवीन्द्र द्वारा बंगाली में लिखी गीताञ्जलि, श्री तिलक द्वारा मराठी में लिखा 'गीता-रहस्य', गांधी जी द्वारा गुजराती में लिखी गयी उनकी 'आत्म-कहानी' इत्यादि ग्रन्थ आज विश्व में निश्चित रूप से भारतीय प्रतिभा के ही मापदण्ड माने जाते हैं, जिनको सारा विश्व अपनी सम्पत्ति समझता है और जो सही अर्थ में व्याकुल मानव की आत्मा को शान्ति प्रदान करते हैं। 'राष्ट्रीयता' के सही अर्थ को छोड़कर उसके भ्रमात्मक अर्थ पर जोर देने वालों को स्मरण रखना चाहिये कि 'स्वीट्जरलैण्ड' देश के 'स्वीस-नागरिक' जर्मनी, फ्रेंच तथा इटालियन जातियों के नाम से पुकारे जाने पर भी स्वीट्जरलैण्ड देश के अस्तित्व पर किसी प्रकार का खतरा नहीं पहुँचता है। इसलिये मधेशियों को अपनी बुद्धि पर कम से कम तरस तो जरूर आनी चाहिये। लन्दन को दिल्ली समझना, कलकत्ते को काशी कहना, काठमांडू को विराटनगर के नाम से पुकारना, पहाड़ को मैदान की संज्ञा देना इत्यादि हमारी कल्पनायें तो हमारी प्रखर प्रतिभा की अनुपम देन ही विश्व में सिद्ध होंगी। बहुत ही अच्छा होता अगर हम सँभल-सँभल कर ही बातें कहा करते। कहानीकार श्रीवास्तव जी के शब्दों से तो यही पता चलता है कि हिन्दी में पुस्तक लिखना उन्होंने अपने लिये एक जुर्म समझा है।*

नेपाल देश का जो सच्चा हित-चिन्तक, सच्चा सपूत होगा वह उपरोक्त वस्तुस्थिति की उपेक्षा भूलकर भी नहीं करेगा। क्योंकि देश की विभिन्न राष्ट्रीयताओं के अपने-अपने अधिकार देश की सुव्यवस्था द्वारा सुरक्षित रहने से देश का विनाश नहीं होता है, बल्कि देश में एकता की भावना ही प्रबल हो उठती है। देश के प्रत्येक नागरिक देश की सुरक्षा के लिये संगठित रूप से सतर्क रहते हैं। स्वयं पड़ोसी भारत इसका उदाहरण हो सकता है। भारत की विभिन्न राष्ट्रीयताओं ने एक साथ मिलकर भारत देश की रक्षा की है और परतन्त्र रहने पर भी उन्होंने विदेशियों के चंगुल से भारत देश को मुक्त किया है। ठीक इसके विपरीत 'जर्मनी' देश का नक्शा बटा हुआ है, जहाँ की एक राष्ट्रीयता ने दूसरी राष्ट्रीयता के अधिकारों को अवहेलना की दृष्टि से देखा।

---

* "एक नेपाली होते हुए भी लेखक ने यह पुस्तक हिन्दी भाषा में लिखी है।"—काशीप्रसाद श्रीवास्तव, 'नेपाल की कहानी', शीर्षक 'दो शब्द' पृष्ठ 'ख'।

इसलिये जो उपरोक्त वस्तुस्थिति की उपेक्षा करता है, निःसंदेह 'नेपाल' देश के प्रति द्रोह रखता है और वह नेपाल देश के हर राष्ट्रीयता विशेष का दुश्मन है। वह पक्का देश-द्रोही, स्वार्थी है जो अपने स्वार्थ-साधन के हेतु ही नेपाल देश को रसातल में ले जाने के लिये तैयार है जिससे नेपाल की हर जातीयता के नागरिकों को सावधान रहना ही होगा। कम से कम राष्ट्रनायक श्री ५ को तो इस पर गम्भीर रूप से विचार करना ही होगा। नेपाली मधेशी भारतीय के नाम पर, प्रभुता का भय दिखलाकर, मधेशी जातीयता के अधिकारों के पक्के दुश्मन तथाकथित नेपाली मधेशी भारतीयों का प्रतिनिधित्व होना मधेशियों के लिये खतरे से खाली नहीं होगा, इस पर श्री ५ को अवश्य ही हमेशा ध्यान रखना चाहिये।

●

सदियों का मधेशी जीवन

परतन्त्र मधेश के जीवन का इतिहास वैसा ही है, जैसा एक परतन्त्र इलाके का इतिहास होता है। मधेश और उसके अभिशासक (Ruler) के सम्बन्ध में तो आगे बहुत कुछ कहा जा चुका है। यहाँ कुछ विशिष्ट बातों को दुहराते हुये संक्षेप में आज के भी मधेशी-जीवन को हमें प्रकाश में लाना है। प्रसंग के सिलसिले में सबसे पहले 'परतन्त्र इलाका' इन शब्दों की व्याख्या कर देना जरूरी जान पड़ता है जिन्हें हम शुरू से प्रयोग करते आ रहे हैं।

'परतन्त्र इलाका (Non-Self-Governing-Territory)' संयुक्त राष्ट्र संघीय पारिभाषिक शब्द हैं जो ऐसे प्रदेशों के लिये प्रयोग किये गये हैं जहाँ के निवासी परतन्त्र (Dependent) हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 'परतन्त्र इलाके' की परिभाषा निम्न प्रकार दी है :—

''संसार के 'परतन्त्र इलाकों' की जातियाँ इस माने में परतन्त्र हैं कि वे अन्ततः एक अभिशासक राष्ट्र के अधीन हैं।''*

इसे ही दूसरे शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि उन्हें 'आत्म-निर्णय' के अधिकार नहीं हैं। इसी उपरोक्त अर्थ में कि—''गोरखा अभिशासक राष्ट्र जिसका बदला हुआ नाम नेपाल है, उसके अधीन 'परतन्त्र मधेश' की मध्यदेशी जाति है''—से हमारा तात्पर्य है।

उल्लेख किया जा चुका है कि चौहान एवं राठौर राजपूतों के आपसी द्वेष के कारण मुसलमान शासकों ने सम्पूर्ण मध्यदेश को परतन्त्र बनाया। मध्यदेश ही नहीं नेपाल को भी उन्होंने लूटा। परन्तु, मुगल शासकों को कमजोर पाकर गोरखा के महाराजा पृथ्वीनारायण शाह ने गोरखा राज्य की सीमा विस्तार की। फिर भी गोरखा के शासकगण परतन्त्र मधेश की विजित प्रजा जिनकी राष्ट्रीयता के सम्पूर्ण अधिकार आज तक छिने हुये हैं, जिनकी न तो आज भी अपनी पुलिस ही है न अपनी फौज, न उनके न्यायकर्ता हैं न उनके अपने कानून के विधाता, उनके साथ कठोरतापूर्वक व्यवहार करते रहे होंगे जिसका परिणाम यह निकला कि १८१४ ई. के नेपाल-ब्रिटिश युद्ध में मधेसियों ने अंग्रेजों का साथ दे दिया। फलस्वरूप समस्त 'मधेश क्षेत्र' पर

---

* "The peoples of the world's dependent areas are non-self-governing in the sense that they are ultimately under the control of an administering authority (United Nations Publications-Non-Self-Governing-Territories, 1949, PP. 2)."

अंग्रेजों का अधिकार हो गया और स्वयं गोरखा-शासकों को भी इस क्षेत्र पर से अपना प्रभुत्व सदा के लिये त्याग देना पड़ा।*

तत्पश्चात चतुर अंग्रेज नेपाल पर अपना प्रभुत्व रखने के लिये चालाकी से काम लिया। एक ओर तो अंग्रेजों ने मधेशी जनता के भविष्य की परवाह किये बिना नेपाली शासकों को प्रसन्न रखने के उद्देश्य से विजित मधेश-क्षेत्र के पूर्वी हिस्से को नेपाली शासकों को देकर उनसे मित्रता प्राप्त कर ली और दूसरी ओर मधेशियों के संतोष के हेतु नेपाल के राजा पर एक जिम्मेदारी उन्होंने रख दी कि नेपाल के राजा ने स्वीकार किया है कि वह तराई-निवासियों को दण्ड नहीं देंगे जब तराई पर राजा का अधिकार हो जायेगा; क्योंकि युद्ध के समय तराईवासियों ने ब्रिटिश राज्य की सहायता की थी।** और उपरोक्त शर्त को राजा ने स्वीकार भी कर लिया। उस दिन से तराई-निवासियों के हर हित की रक्षा करने की जिम्मेदारी नेपाल के राजा पर आई। परन्तु कथन और कार्य में फर्क होता है। मधेशियों पर प्रतिदिन अत्याचार बढ़ता ही गया। ब्रिटिश भारत सरकार को जहाँ मधेशियों की देखभाल करनी चाहिये थी वहाँ उलटे उसने नेपाली शासकों को पश्चिमी 'मधेश-क्षेत्र' भी लौटा दिया।† क्योंकि राणा-शासकों की फौज ने भारत के सिपाही-विद्रोह को दबाने में अंग्रेजों की सहायता की थी। फिर भी १८६० ई. की सन्धि के बावजूद भी मधेशियों पर अत्याचार न करने की शर्त नेपाल के राजा पर कायम ही रही। लेकिन राणाओं के एकतन्त्री शासन ने मधेशियों को मिट्टी में मिला दिया। पहाड़ियों, नेपालियों एवं मधेशियों के लिये अलग-अलग कानून बनें।‡ खून-पसीना को एक करके मधेशियों ने जो जंगल तोड़-तोड़कर अपनी जीविका को चलाने के लिये खेती के लायक जमीनें बनायीं उन पर शासकवर्ग के चन्द व्यक्तियों ने अधिकार कर लिया। इसमें विर्ता, नापी, दौड़हा इत्यादि प्रथाओं ने विशेष मदद पहुँचायी। इन प्रथाओं के द्वारा मधेशी किसानों की जमीनें छीन ली गयीं और उन्हें निर्धन बना दिया गया। बिर्ता अर्थात् 'वीरता' शब्द से ही प्रकट होता है कि किसी महत्त्वपूर्ण कार्य के लिये जिसमें वीरता दिखलाई गई हो, उसके हेतु ही राजा की ओर से ऐसे कार्य करने वालों को पुरस्कार के रूप में बिर्ता (जगह-जमीन, सम्पत्ति का पुरस्कार) दी जाय। परन्तु राणा शासक वीरता के नाम पर अपने दलालों को जीविका के लिये जगह जमीन देने लगा। मधेश की आधी से अधिक भूमि पर इस प्रथा के द्वारा ही राणा के कर्मचारियों का अधिकार

* देखिए 'ईस्ट इंडिया कंपनी तथा महाराजाधिराज ग्रीर्वाण युद्ध विक्रम शाह के बीच में हुई संधि, २ दिसम्बर १८१५ ई. अभिधारा ३।'

(नोट :—संधियों की सारी बातें 'नेपाल की कहानी' नामक पुस्तक के परिशिष्ट में दी गयी है।)

** "इसके अतिरिक्त नेपाल के राजा ने स्वीकार किया है कि तराई के निवासी को दंड न दें, जब उस पर उनका प्रभुत्व न हो जाय; क्योंकि इन्होंने युद्ध के समय ब्रिटिश राज्य की सहायता दी थी। और काश्तकारों को छोड़कर यदि कोई कम्पनी की सीमा में आना चाहे तो उसे रोका न जाय (देखें, अंग्रेजों द्वारा दिया गया नेपाल के महाराजा को स्मरण-पत्र, ८ दिसम्बर, १८१६ ई. सातवाँ नम्बर)।" 'नेपाल की कहानी' पुस्तक से उद्धत, पृष्ठ २४७।

† देखें 'ब्रिटिश भारत सरकार और नेपाल के महाराजा के बीच में हुई संधि, १८६० ई. धारा २।'

‡ उदाहरण के लिए 'मुलुकी ऐन' (The law of the land) के 'अदालती बन्दोबस्त' शीर्षक अध्याय के कानून नं. १५२ को देखिए। इस कानून नम्बर के दफा (१) के उपदफा १, २, ३ और ४ में देखेंगे कि खूनी मुकदमें में जहाँ नेपाल, पहाड़ प्रदेशों के वादी से १० या १५ रुपये तथा प्रतिवादी से २५ रुपये जमानत् के रूप में लेने का आदेश है वहाँ मधेश प्रदेश के वादी-प्रतिवादी दोनों से सौ-सौ रुपये जमानत के रूप में लेने का आदेश है। सम्भवत: यह कानून अब भी प्रचलित ही है। क्योंकि अब भी मधेश के लिए जो कानून बनते हैं वे पहाड़ के लिये लागू नहीं होते। परिस्थितिनुकूल ही लागू किये जाते हैं।

हुआ। बिर्ता, बेख, फिकदार, मानाचाँवल, छाप, सदावर्त इत्यादि अनेक प्रकार की बिर्ताएँ कहलाती हैं। 'नापी' शब्द से तात्पर्य है जमीन की पैमाइश (Survey) से। 'सर्वे' के समय राणाओं के कर्मचारी घूस लेकर मधेशी किसानों की जमीन को दूसरों के नाम से लिख दिये। दौड़ाहा अदालत जब मुकदमें की जाँच के लिये आई तो घूस लेकर किसानों की जमीन पर जमिंदारों के हक कायम करके चली गई। इस प्रकार से मधेश की भूमि पर राणाओं के दलालों का अधिकार हुआ। मधेश की धरती पर आज जितने नेपाली पहाड़ी पूँजीपति दिखलाई देते हैं, सबके सब, एक समय राणा के कर्मचारी (तालुकदार, जिमिदार, लफ्टेन, जनरल, कर्नल, बड़ाहाकिम, हाकिम, सुब्बा, असिस्टेंट, तहरीर, डीट्ठा, विचारी, मुखिया, सुबेदार, हवलदार इत्यादि) एवं सेवक होकर आये और जब मधेश की भूमि पर इनकी आँखें लगीं तो मधेश की धरती पर अधिकार करने लगे, चाहे जिस तरह भी हो सका। सरकारी कर्मचारी ने मार-मारकर किसानों की भूमि को अपनी भूमि में जबरदस्ती मिला लिया। चूँकि राणा-शासन पुलिस का राज्य था,* इसलिए भयंकर फौजदारी कानूनों में मधेशियों को फंसाया जाना तो एक महज मामूली काम था। इस तरह "मधेशियों पर अत्याचार न किया जायेगा" शर्त को नेपाली शासकों ने अच्छी तरह निभाया।

सन् १९४७ ई. में ब्रिटिश भारत सरकार की सारी जिम्मेदारी भारतीयों के हाथ में आयी। अंग्रेजों ने भारतीय शासक की हैसियत से ही भारत की ओर से नेपाल के साथ सन् १८१५-१६ ई. की संधि की थी। इसलिये उपरोक्त सन्धि के अनुसार 'मधेश-क्षेत्र' की जनता के साथ नेपाल सरकार का न्यायोचित व्यवहार हो रहा है या नहीं, जिसके लिये नेपाल के राजा ने जिम्मेदारी स्वीकार की थी, इसकी देखभाल के लिये वैधानिक तौर से (अगर गौर करके देखा जाय तो) भारत ही जिम्मेदार था। परन्तु भारत-सरकार ने १९५० ई. की नेपाल-भारत सन्धि के अनुसार इस जिम्मेदारी को एकदम खतम कर दिया।** हालांकि नेपाल की राजनैतिक पार्टी ने नेपाल के 'संयुक्त-राष्ट्र-संघ' की सदस्यता प्राप्त करने के पूर्व नेपाल में प्रजातंत्रात्मक प्रणाली का प्रसार करने वाला संरक्षक भारत को ही बताया है और किसी भी तरह की अव्यवस्था होने पर भारत सरकार के ऊपर ही दोष मढ़ा है।† जो कुछ भी हो।

---

* आज भी तो प्रजातंत्र के नाम पर पुलिस-शासन का ही बोलबाला है। नागरिक अधिकार तो फांसी पर लटके हुए हैं। पुलिस चाहे जितनी भी ज्यादती कर दे, अदालत मौन रहेगी। क्योंकि मधेशी गुलामों के अधिकार तो अधिकार नहीं कहलाते हैं न!

** देखें 'नेपाल-भारत संधि' धारा ८, ३१ जुलाई, १९५०।

† "We are particulary surprised and sorry for India Government's indifferent attitude towards Sri Regmi's conviction. It is hard to believe that those who conspired to throw Regmiji behind the prison bars kept their Kathmandu representative of the Government of India in dark while this nasty game was played or that they could not interfere because of the case being strictly within purview of internal responsibility of a foreign Government, yet nothing was done from their side to correct the misdoing of the Chief Judge. Is it that they themselves are interested in seeing Sri Regmi disappearing from the scene now that a big change was contemplated in the administration and they want to accomplish this objective without him. It is really unfortunate that the Government of India who time and often professed to act in furtherance of democracy in Nepal as its custodian would not show any signs of disapproval of the way Kathmandu intriguers are behaving in Nepal (A booklet entitled 'Vagaries of A Nepal Chief Judge; Regmi Arbitrarily Convicted of Contempt of Court Offence'—issued by the Publicity Department, Nepali National Congress, Banaras, dated 3rd November, 1951, Pages 15-16)."

अब तो अंकुशहीन नेपाल के कर्मचारी आए दिन 'मधेश-क्षेत्र' जो लावारिस है, यहाँ के निवासियों पर तरह-तरह के जुल्म ढा रहे हैं। जबसे नेपाल संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य हुआ है तब से इस क्षेत्र पर श्री ५ की सरकार का मनमाना जुल्म और बढ़ता ही जा रहा है, जिसकी आवाज श्री ५ के कानों तक पहुँचायी जाती है, परन्तु, न मालूम श्री ५ भी क्यों अनसुनी कर देते हैं। हमारी जातीयता (nationality) के अधिकारों का आदर नहीं है। पहाड़ियों एवं मधेशियों के लिए अलग-अलग कानून तो बनते ही हैं। परन्तु एक गुलाम के प्रति मालिकों का जैसा व्यवहार होना चाहिए ठीक वही व्यवहार अदालतों में अब तक है। हमारे मानवोचित मौलिक अधिकारों की सुरक्षा तो एकदम नहीं है। मौलिक अधिकारों के साथ जैसा मजाक होता है वह तो देखते ही बनता है। विदेशी गुंडों की मदद से राज-कर्मचारियों द्वारा हमारे घर में चोरी-डकैतियाँ करवायी जाती हैं। तरह-तरह के खतरनाक फौजदारी कानूनों के अन्तर्गत हमें फँसाया जाता है। इनमें चोरी कानून बहुत सस्ता है। किसी भी चोर-डाकू से पैसे वाले मधेशी भले इंसान का नाम चोरी-डकैती के मुकदमों में प्रतिवादी के रूप में कहलवा देना तो एक महज मामूली सी बात हो गयी है। अगर किसी चोर-डाकू ने ऐसा कहने से इन्कार किया तो उसकी हिफाजत पुलिस द्वारा अच्छी तरह होती है और लाचार होकर उसे पुलिस की कही बात कहनी पड़ती है। जाली केश चलाकर भले आदमी को दंडित किया जाता है। खूबी यह है कि दंडित होने योग्य अभियुक्त बरी हो जाते हैं। क्योंकि चोर पुलिस का कमाने वाला पुत्र है। पुलिस-अत्याचार तो पराकाष्ठा पर है। क्योंकि पुलिस को अपनी रिपोर्ट के लिए प्रमाण देना नहीं पड़ता है। पुलिस जो कुछ भी लिख दे, वह अदालत में सत्य माना जाता है। अदालतों में खुलेआम वर्गगत पक्षपात हो रहा है। मधेशियों के लिए बिना कानून के कानून भी हैं, परन्तु नेपाली वर्ग के लिए नहीं। क्योंकि वे लोग शासकवर्ग के हैं। हमारी इज्जत-आबरू पर दखल दिया जा रहा है। और तो और गुप्त रूप से मधेशी की जान तक लापता करवाने में सरकारी कर्मचारी अपना हाथ रखते हैं। अदालतों में मधेशियों से प्रश्न हिंदी में ही पूछे जाते हैं और उत्तर भी मधेशिया हिन्दी में ही देता है। परन्तु राजभाषा नेपाली के होने से बयान नेपाली भाषा में ही लिखा जाता है। लिखते समय कर्मचारी व्यक्ति विशेष की अवस्था देख तथा परिस्थितिनुकूल भी मौका देखकर बयान में फर्क कर देता है। मधेशिया, नेपाली भाषा नहीं जानने के कारण तथा भविष्य के भय की चिंता से भी अपने बयान कागज पर दस्तखत कर देता है। बयान में फर्क हो जाने से फल यह होता है कि मधेशियों पर कर्मचारी रोब जमाते हैं जिससे उनके स्वार्थ-साधन में सहायता मिलती है और मधेशियों को दण्ड-सजाय भी होता है। अदालत में जाली कागज तक भी बनाया जाता है। अपने स्वार्थ-साधन के हेतु मधेशियों पर ऐसा कौन-सा जुल्म नहीं है, जिसे कर्मचारी नहीं करते हैं। छोटे-छोटे मुकदमों में वर्षों तक परेशान करते हैं। वैधानिक परेशानी (legal harassment) में डालने के पीछे कर्मचारीगण के स्वार्थ छिपे रहते हैं। प्रगति के पथ पर अग्रसर परिवार में मनमाना हस्तक्षेप करना तो इनका एक अभ्यास-सा बन गया है। संक्षेप में 'मधेश-क्षेत्र' के निवासियों के जीवन की यही कथा है। संयुक्त राष्ट्रसंघ का एक सदस्य देश नेपाल में कानून द्वारा स्थापित श्री ५ के शासन में ऐसा अत्याचार व्याप्त है! ऐसा लगता है कि नेपाल अभी भी बर्बरता के युग से गुजर रहा है। इन राजनैतिक कुकर्मों के करने में जो राजनैतिक इच्छा

निहित है वह तो प्रकट होती ही जा रही है और होती ही जायेगी, अगर यही रवैया रही। इस बीसवीं सदी में भी महान् पड़ोसी चीन तथा भारत के बीच में रहते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ का एक सदस्य होकर नेपाल की सरकार अपने आश्रित प्रदेश पर इस तरह का अत्याचार क्या सोचकर कर रही है, इसे तो नेपाल के शासक श्री ५ महेन्द्र ही जानें। परन्तु इसे तो स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है कि इस अत्याचार से एकवर्गीय शासन का प्रभुत्व रह सकेगा, मधेशी जनता त्रस्त एवं आतंकित होकर कब्जे में रह सकेगी, ऐसा सोचना अन्ततः एक महान् राजनैतिक भूल सिद्ध होगी। इसका परिणाम भयंकर एवं बहुत बुरा अवश्य ही होगा, इस तथ्य को भूल जाना शासकों की एक जबर्दस्त अदूरदर्शिता ही कहलायेगी। क्योंकि संयुक्त राष्ट्रसंघ जैसी महान् संस्था के रहते हुए अब मधेशी किसी भी शक्ति के गुलाम कैसे रह सकते हैं ? साथ ही यह भी स्पष्ट शब्दों में कह देना अनुपयुक्त न होगा कि अगर हमारे साथ हो रहे अन्याय के लिए जिम्मेदार नेपाल के शासक महाराजाधिराज श्री ५ महेन्द्र की सरकार है, तो साथ-साथ भारतीय गणतंत्र राज्य के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद की सरकार भी है और इस बात को संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्यों खासकर ब्रिटिश संयुक्त राज्य की सरकार तक पहुँचाना हमारा कर्तव्य है। क्योंकि ब्रिटिश सरकार को 'मधेश क्षेत्र' से सम्बन्ध रखने वाले मामलों में नेपाल की सरकार के साथ-साथ भारत की सरकार से भी जनरल असेम्बली में प्रश्नोत्तर लेने का पूरा अधिकार हो सकता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ में प्रवेश करने के बाद नेपाल की सरकार को प्रत्येक वर्ष के ३० जून को 'मधेश' आश्रित प्रदेश की सही खबर संयुक्त राष्ट्रसंघ की जनरल असेम्बली को देनी चाहिए जिस पर ब्रिटिश प्रतिनिधि का ध्यान जाना चाहिए। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' ने जब किसी भी आश्रित प्रदेश के मानव-समुदाय के सांस्कृतिक अधिकार का हनन करने का अधिकार किसी भी अभिशासक राष्ट्र (Administering Power) को नहीं दिया है, तब फिर नेपाल को कौन-सा अधिकार रह गया है कि उसने कानून बनाकर हमारी शिक्षा के माध्यम, हमारी भाषा को बदला है ?* हमारे सांस्कृतिक पिछड़ेपन से इतना नाजायज फायदा उठाना तो बुद्धिमानी नहीं मानी जा सकती। संयुक्त राष्ट्र संघीय प्रस्ताव निम्नलिखित है :—

''संयुक्त राष्ट्र संघ की सामान्य सभा ने अपने १९४९ ई. के सत्र में विशिष्ट निर्णयों को स्वीकार किया कि आश्रित प्रदेशों की जातियों को उन्हें अपनी सरकार बनाने की प्रगति में मदद की जाय।' ऐसी उन्नति के प्राणदायी तत्व उन जातियों की स्वदेशी भाषाओं के विकास हैं' इसे स्वीकार करते हुए 'सामान्य सभा' ने अभिशासक राष्ट्रों का ध्यान उनकी भाषाओं के विकास करने की ओर दिलाया और सिफारिश की कि जहाँ और जब कभी सम्भव हो उनकी भाषाएँ उनके शिक्षण के हेतु प्रयोग हों।''†

---

* देखें 'नेपाल गजट, भाग ४, दफा ६, माघ २८, विक्रम संवत् २०१४।'

† "In 1949, the Assembly (The General Assembly of the U. N. O.), during this session, adopted specific resolutions designed to aid the peoples of dependent territories to their progress towards self-government. Recognising that the development of indigenous languages was a vital element of such progress, it invited the administering powers to promote the development of indigenous languages, recommending their use of instructions where and whenever possible—Non-Self-Governing-Territories Page 23)."

उपरोक्त अन्तर्राष्ट्रिय निर्णय की मर्यादा की एकदम अवहेलना कर सरकारी शिक्षा-आदेश (शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी वा नेपाली भाषा ही होगी तथा विद्यार्थियों को नेपाली वा अंग्रेजी में ही प्रश्नोत्तर देने होंगे, हिन्दी में नहीं) के प्रतिकूल प्रचंड रूप से प्रदर्शित मधेशियों की प्रबल विरोधी भावना को उदण्ड अनैतिक शक्ति-प्रयोग के द्वारा दबाकर नेपाल की सरकार ने जिस मनोवृत्ति का परिचय दिया है, इस पर पड़ोसी राष्ट्रों को गंभीर रूप से विचारना ही होगा। उपरोक्त कानून तो एक अत्याचार है जिसे कैसे बर्दाश्त किया जा सकता है ? यह कहाँ का इंसाफ है कि मधेशी अपने बच्चों को स्वदेशी भाषा के जरिये शिक्षा न दें ? इस गैरजिम्मेदार सरकारी कदम को तो अन्तर्राष्ट्रीय शांति को भंग करवाने का ही कदम कहा जा सकता है। वर्षों से हमारी शिक्षा का माध्यम हमारी हिन्दी भाषा रही है। इस पर प्रहार करना तो हमारी आत्मा पर खुलेआम प्रहार करना है। इस प्रहार से बचने के लिए हमें जो भी कीमत चुकानी होगी, हमें चुकाना ही है। सत्यता तो यह है कि नेपाली 'राज-भाषा' है, न कि 'राष्ट्र-भाषा'। और जिस भाषा को स्वयं नेपाली राज्य-कर्मचारी तक ठीक से नहीं समझ पा रहे हैं, उसे इस आश्रित प्रदेश पर 'राष्ट्र-भाषा' के रूप में लादने का कौन-सा अधिकार श्री ५ की सरकार को है ? नेपाली, पहाड़ी राष्ट्रीयताओं की 'राष्ट्र-भाषा' 'नेपाली-भाषा' हो सकती है, न कि मध्यदेशीय राष्ट्रीयता की 'राष्ट्र-भाषा'। 'राष्ट्र-भाषा' तो अन्तर्प्रान्तीय उपयोगिता की भाषा होती है। केवल सरकारी अदालतों में प्रयोग होने-मात्र से ही नेपाली सम्पूर्ण राष्ट्र की 'राष्ट्र-भाषा' नहीं हो सकती। अगर अदालती भाषा राष्ट्र-भाषा हो सकती है तो आज हिन्दुस्तान की राष्ट्र-भाषा अंग्रेजी होती। लेकिन दुःख की बात तो यह है कि हिन्दुस्तान में न तो मुसलमान शासकों की फारसी भाषा ही राष्ट्र-भाषा हो सकी और न अंग्रेज शासकों की भाषा अंग्रेजी ही। यहाँ की राष्ट्र-भाषा हिन्दी है जिसमें अन्तर्प्रान्तीय उपयोगिता मौजूद है। **स्पष्ट एवं नम्रतापूर्ण शब्दों में श्री ५ से अनुरोध करना हमारा कर्त्तव्य है कि "हम अपनी जान से भी बढ़कर प्यारी अपनी स्वतंत्रता को मानते हैं और इसके लिए जो भी कीमत हमें चुकानी होगी, हम चुकाने के लिए तैयार हैं।"** राष्ट्र-भाषा ही शिक्षा का माध्यम हो, यह तो सरकार की अपनी अयोग्यता का ही प्रमाण है। भारत की सरकार ऐसा कानून कभी न बनायेगी कि बंगाल वालों को बंगाली भाषा के बदले राष्ट्र-भाषा हिन्दी को ही शिक्षा का माध्यम बनाना होगा, नहीं तो बंगाल की शिक्षण संस्थाओं को मिलने वाली आर्थिक सहायता बन्द कर दी जायेगी।

भाषा सम्बन्धी हमारे शान्तिपूर्ण प्रबल विरोध-प्रदर्शन कर वर्गगत पक्षपात करते हुए पुलिस ने लाठी-डंडे से प्रहार किया, गैरकानूनी ढंग से हमको जेल में डलवाया गया, गुण्डों द्वारा हमारे धन लुटवाये गये, हमारी इज्जत-आबरू पर दखल दिलवाया गया और इस चीज की आवाज श्री ५ के कानों तक पहुँचायी जाने पर भी श्री ५ ने अनसुनी कर दी। क्यों ? श्री ५ का यह रुख किसी गंभीर खतरे का सूचक तो नहीं है !* आश्चर्य है कि शुद्धात्मा नेपाली भाषी जनता

* स्मरण रखना चाहिए कि वर्तमान श्री ५ महाराजाधिराज का उपरोक्त मनोवैज्ञानिक रूप एक बार और अच्छी तरह से प्रकट हो चुका है। भारत-संघ सरकार द्वारा निमंत्रित होकर श्री ५ भारत-भ्रमण के लिये भारत गये। परन्तु, वहाँ से लौटने पर 'काठमांडू-स्वागत-समिति' के समारोह का उत्तर देते हुए उन्होंने यह वक्तव्य दिया—

तक को भ्रम में डालकर भाषा-काण्ड के उपरोक्त कुकर्मों के करवाने में राज-कर्मचारियों ने खुल कर हाथ बटाया और नेपाली-भाषी पढ़े-लिखे नवयुवकों को भी ऐसा करने के लिए मैदान में उतरवा दिया। लेकिन इन सरकारी कर्मचारियों के विरुद्ध किसी प्रकार की कार्रवाई नहीं की गयी। फिर ऐसी दशा में 'संयुक्त राष्ट्र संघ' के नाम को कलंकित करने वाली कानून द्वारा स्थापित श्री ५ की सरकार को उस संघ में मुँह दिखलाने का कौन-सा अधिकार रह जाता है ?

एक समय था जबकि सारे कुकर्मों के लिए भारत सरकार दोषी मानी जाती थी। परन्तु, वर्तमान मंत्रिमण्डल के गृहमंत्री (श्री दिल्लीरमण रेग्मी) से अब यह नहीं पूछा जा रहा है कि अब इन कुकर्मों के लिए जिम्मेदार कौन है—नेपाल की सरकार कि संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्य सदस्य देश ? कहाँ गयी प्रजातांत्रिक पद्धति ? इतने बड़े अन्याय के होते हुए नेपाली भाषी नेताओं की जबान पर ताले क्यों लग गये ? इसलिए कि अब मनमाना जुल्म करने को मिला है। शिक्षा के माध्यम सम्बन्धी कानून प्रबल विरोध के बावजूद भी सरकार ने पास कर दिये जिससे मधेशियों के अपहरण न करने योग्य मानवीय मौलिक अधिकारों का अपहरण हुआ है, परन्तु ये नेता चूँ शब्द तक नहीं निकाल सके।* आश्चर्य है कि फिर भी अपने को मध्यदेशियों के नेता होने की डींग ये विदेशों में हाँकते हैं ! **कैसे यह कहा जाय कि जातीयताओं के अधिकार की रक्षा करने वाली नेपाल में साम्यवादी पार्टी भी है ?** खूबी तो यह है कि मध्यदेशियों के अधिकार की रक्षा करने वाले मधेशी नेता भी हिम्मतपस्त होकर चुप हो बैठे। याद रखना चाहिए कि **अत्याचार का मुकाबला संतोष, धैर्य, त्याग, सहन एवं साहस के साथ ही किया जा सकता है।**

"भारत का विभिन्न स्थानहरूमा भ्रमण गर्दा स्थानस्थानमा प्रवासी नेपालीहरू संग पनि भेट्यौं, तर ती प्रवासी नेपालीहरूको अवस्था दयनीय रहेछ, अर्थात् भारत के विभिन्न स्थानों में भ्रमण करते हुए जगह-जगह में प्रवासी नेपालियों से भी मुलाकात हुई, लेकिन उन प्रवासी नेपालियों की अवस्था दयनीय है।"

देखिये 'दैनिक नेपाल-समाचार, वर्ष १, अंक १३४, १९ दिसम्बर, १९५५ ई.।'

इस उपरोक्त वक्तव्य से साम्प्रदायिकता को बल मिलेगा ही, जिससे देश में अशांति फैलेगी और जिसमें राष्ट्र के जन-धन एवं राष्ट्रीय शक्ति का ह्रास होना निश्चित है। मैं श्री ५ से विनम्र यह पूछता हूँ कि वे यह सफाई दे सकते हैं कि नेपाल में ही पर्वतवासियों की दशा अच्छी है ?

आज मधेश के राज-कर्मचारी आज्ञा, आदेश एवं कानून की कुछ भी परवाह नहीं करते हुए मधेशियों को जिस तरह से परेशान कर रहे हैं, उससे तो यही पता चलता है कि कर्मचारीगण किसी खतरनाक शक्ति द्वारा संचालित हैं। चाहे वह शक्ति स्वदेशी हो या विदेशी। परन्तु, मधेश तो परतंत्र इलाका है। मधेशियों को तो कुछ भी पता नहीं है कि नेपाल-सरकार किधर जा रही है और क्या करना चाह रही है। इसलिये इस क्षेत्र पर किसी खतरनाक स्थिति का प्रादुर्भाव होना निश्चित रूप से श्री ५ की ही गैरजिम्मेदारी समझी जायेगी। साथ ही मधेशियों को मधेश-क्षेत्र पर होने वाले किसी भी षड्यन्त्र के प्रति सावधान रहना चाहिए। इस क्षेत्र पर किसी भी गुटबन्दी को बर्दास्त नहीं किया जा सकता।

* नेपाली नेताओं के मौन धारण का कारण यह भी हो सकता है कि ये नेता मधेशियों को धीरे-धीरे संगठित होते देख घबड़ा-सा गये हों। इसलिए हिन्दी भाषा जो महाकाली से मेची तक की जनता को एकसूत्र में बाँधकर रखी है, उसे ही खतम कर देने के प्रयास को अच्छा समझकर, इस अनैतिक सरकारी नीति का विरोध वे लोग नहीं कर सके। क्योंकि हिन्दी भाषा के अभाव में प्रत्येक मधेश निवासी अपनी-अपनी भाषाओं की प्रमुखता के लिए आपस में लड़ेंगे ही जिससे मधेश में एकता का अभाव रहेगा। तब ऐसी फूट से फायदा उठाकर नेपाली नेता अपना उल्लू सीधा करेंगे। इन पंक्तियों के लेखक का तो अलग अनुमान यही है।

यह स्मरण कर लेखक को वस्तुतः दुःख होता है कि नेपाल के राजवंश ने इस चीज को बिलकुल भुला दिया कि राणाशाही के फौलादी पंजे से राजतंत्र की मुक्ति के लिये मधेशियों ने तन-मन-धन-इज्जत-आबरू तक की परवाह नहीं की थी। सशस्त्र-क्रांति के अग्रदूत, प्रजा का प्रियपात्र, पारस हृदयालु दिवंगत राष्ट्रपिता की अमरवाणी—"देश किसी खास व्यक्ति, दल या वर्ग का नहीं, देश सबका है और इसकी अवनति-उन्नति का फल हम सबों को भुगतना है, इसमें संदेह नहीं"—को एकदम भुलाकर अगर श्री ५ महेन्द्र की सरकार यह सोचती है कि मधेशियों को उनकी मर्जी के मुताबिक ही चलना होगा, तो निःसन्देह यह उनकी बिलकुल गलत धारणा है। स्पष्ट शब्दों में बता देना हमारा कर्तव्य होता है कि मधेशिया किसी की मर्जी के मुताबिक जीना चाहता है और भविष्य में जीना चाहेगा, इस भ्रम को तो अपनी बुद्धि से अवश्य ही निकाल देना चाहिए और निम्नलिखित जिम्मेदारी को तत्परता के साथ संभालने के लिये पूरा प्रयास करना चाहिए :—

"संयुक्त राष्ट्रसंघ के वे सदस्य जिन पर उन इलाकों के अभिशासन (Administration) की जिम्मेदारियाँ हैं या होंगी, जहाँ लोगों ने पूर्णरूप से स्वतंत्रता नहीं पाई है, यह स्वीकार करते हैं कि उन इलाकों के निवासियों के हितों की रक्षा सबसे पहले होनी चाहिये और वे एक पुण्य न्यास (Sacred Trust) के रूप में अपना यह दायित्व मानते हैं कि वर्तमान चार्टर से स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा-प्रणाली के अधीन, अधिक से अधिक, इन देशों के निवासियों की भलाई करनी है और इसके लिये उन्हें :—

(क) इन इलाकों के लोगों की संस्कृति का पूरा ध्यान रखते हुए, उनकी राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और शिक्षा की उन्नति, उनके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार और उन्हें अत्याचारों से बचाने का पूरा प्रबन्ध करना होगा।

(ख) हर इलाके और उसके लोगों की अपनी-अपनी परिस्थितियों के और उनके विकास की अवस्था के अनुसार, उनमें स्व-शासन को बढ़ावा देने का, उनकी राजनैतिक आकांक्षाओं का उचित ध्यान रखने का, और उनकी आजाद राजनीतिक संस्थाओं के अधिकाधिक विकास में सहायता देने का पूरा प्रबन्ध करना होगा।

(ग) अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बढ़ानी होगी।*

स्पष्ट शब्दों में यह कहना हमारा कर्त्तव्य है कि **स्वार्थ की आड़ में राजतंत्र की झूठी दुहाई देने वालों से सावधान होकर इस बीसवीं सदी में जनता की उचित मनोवैज्ञानिक इच्छा की कदर करना अगर श्री ५ नहीं जानते, तो स्पष्टता के साथ कहा जा सकता है कि राजतंत्र हर हमेशा रात-दिन खतरे में ही रहेगा। झूठी दुहाई देने के लिये न तो हमारे पास शब्द ही हैं और न हम आत्मा की सच्ची आवाज को दबा ही सकते। चरित्रवान सुयोग्य राज्य-कर्मचारी के अभाव में तो अच्छा यही होता कि परतंत्र मधेश क्षेत्र को ही इसकी सुव्यवस्था के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ की न्यास-परिषद (Trusteeship Council) के हवाले कर देने का प्रस्ताव श्री ५ अपनी तथा-कथित प्रजातांत्रिक सरकार के समक्ष अवश्य रख देते।**

* "संयुक्त राष्ट्र संघ का चार्टर, अध्याय ग्यारह, अनुच्छेद ७३।"

विवेकशील मधेशियों से

विवेकशील मधेशियों से हमारा इतना ही नम्र निवेदन है कि किसी कार्य के करने पर उतारू होने के पूर्व उन्हें उसकी गहराई तक गंभीरता से विचार करना चाहिये। उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि हमारे क्षणिक स्वार्थ (जिन्हें हम दूसरे शब्दों में अपनी भूल कह सकते हैं) हमारे जातीय जीवन के भविष्य को अन्धकारमय बना सकते हैं। क्योंकि आज अगर हम बीसवीं सदी में हैं तो कल की हमारी सन्तान इक्कीसवीं सदी में जायेगी ही। और आप प्रत्यक्ष देखते हैं कि हमारी सभ्यता एवं संस्कृति में युगानुकूल क्रान्तिकारी मानवीय पहलुओं का समावेश हो रहा है। इसलिये हमें तो फूँक-फूँककर अपने कदम आगे रखने होंगे ही। हमारा क्षणिक स्वार्थ (भूल) कहीं हमारे भविष्य के जातीय जीवन को छिन्न-भिन्न न कर दे और इस छिन्न-भिन्नता को देखकर भविष्य की हमारी सन्तान आत्म-विद्रोही होकर कहीं खून की धारा बहाने के लिये न उतारू हो जाय, इस पर प्रत्येक विवेकशील मध्यदेशियों को ठंढे दिमाग से विचारना ही है। हमें कमाने, खाने, तथाकथित प्रजातांत्रिक सरकार की मर्जी के मुताबिक नौकरी एवं जबरदस्ती रूप से प्रतिनिधित्व तक करने का अधिकार तो है, परन्तु जातीयता के अधिकारों को बेचने का हमें कोई अधिकार नहीं है। इस तरह की भयंकर भूल क्षम्य नहीं हो सकती और न भविष्य की आपकी सन्तान आपको क्षमा-प्रदान ही करेगी। पदलोलुप, पथभ्रष्ट मधेशी नेताओं का यह सोचना कितना गलत है मध्यदेशीय जातीयता के सृष्टि-कर्ता तथा हर्ता वे ही हैं। आत्म-ज्ञान से वंचित इन नेताओं को समझना चाहिये कि समाज के महान् दिव्य पुरुषों के स्वच्छ आत्म-चिन्तन के द्वारा ही विभिन्न मानव-समुदायों में विभिन्न जातीयताओं का सृजन हुआ है। अतः मुट्ठी भर पथभ्रष्ट मधेशी राजनैतिक नेता अपने जातीय जीवन को छिन्न-भिन्न नहीं कर सकते। ऐसा अपराध क्षम्य भी नहीं होगा।

अर्थ तथा पद के लोभी मधेशी नेता इसे अच्छी तरह जानते हैं कि नेपाल में 'मधेश' स्वाभाविक रूप से अपना बहुमत रखता है। परन्तु 'मधेश-क्षेत्र' स्वयं शासित क्षेत्र (Self-Governing-Territory) नहीं होने के कारण, अत्याचार के भय से ये सरकारी गलत नीति का समर्थन करने जा रहे हैं कि 'मधेश' क्षेत्र की जनसंख्या अट्ठाइस लाख पैंतालिस हजार तीन सौ उनहत्तर ही है। जब मधेशी नेताओं की यह हालत है तब एकवर्गीय सरकार की मर्जी पर ही टिके नगण्य मधेशी कर्मचारियों से कुछ उम्मीद रखना तो बिलकुल ही व्यर्थ बात है। यह सब परतन्त्रता के सुन्दर परिणाम हैं तथा अपने पापकर्म का फल है। और यह बिलकुल स्वाभाविक ही है! क्योंकि परतन्त्र इलाके के इतिहास इस बात के साक्षी रहे हैं कि उपरोक्त प्रकार के व्यक्ति हर परतन्त्र इलाके में रहते ही हैं। परतन्त्र भारत में ब्रिटिश नीति के समर्थक कुछ भारतीय भी तो थे ही और अमेरिकी स्वतन्त्रता के बाधक भी स्वयं कुछ अमेरिकन ही थे। परन्तु उन्हीं परतन्त्र इलाकों में 'तिलक', 'वाशिंगटन' सरीखे अपनी धुन के पक्के पुरुषों का होना हमें स्मरण हो आता है। कम से कम इन महापुरुषों के चरित्र से सबक सीखना हमारा कर्तव्य होता है।

स्वार्थी तत्वों के विरुद्ध हम अपनी आवाज बुलन्द कर सकते हैं जो व्यक्तिगत स्वार्थ (पद-लोलुपता) के कारण ५० लाख से अधिक मधेशी जनता के संगठित जीवन को छिन्न-

की तैयारी में हैं। इसलिये इन नेताओं को हमें स्पष्ट शब्दों में बता देना है कि मधेशियों को मर्जी पर चुनाव लड़ना नहीं है। अधिकार के लिये ही हमें चुनाव लड़ना है, भिक्षा के लिये नहीं। हम किसी से भिक्षा नहीं मांगते, अपना अधिकार मांगते हैं। संतोषपूर्वक हम कुछ रोज तक अत्याचार को और सहन करके परतन्त्र रह सकते हैं, लेकिन मधेश की हत्या हमें स्वीकार नहीं।

चुनाव में मधेशियों के भाग लेने का तात्पर्य तो यही होगा न कि मधेशियों की जनसंख्या अठाईस लाख पैंतालीस हजार ही है! इस भयंकर भूल एवं महान् अपराध के लिये जिम्मेदार कौन होगा ? इस गैरजिम्मेदारी के लिये दोषी नेपाल के शासक होंगे कि मधेशी नेतागण ? क्या आम चुनाव के बाद नेपाल के एकवर्गीय सरकार को विदेशों में इस बात का प्रचार करने का मौका नहीं मिलेगा कि वस्तुतः मधेशी नेता किसी राजनैतिक शक्ति के द्वारा प्रेरित होकर ही मधेश

→ चितवन	इस जिले का भी स्वतंत्र निर्वाचन-क्षेत्र नहीं है। इसकी जनसंख्या किस निर्वाचन-क्षेत्र में जोड़ दी गयी है, पता नहीं चलता है।	४०,९५४	(चितवन)
नवलपुर	इस जिले की जनसंख्या बुटवल जिले के पाल्ही तहसील में जोड़ दी गई है। इसका स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र नहीं है।	१६,३९२	(नवलपुर)
दाङ्ग }	६२	५०,५१२	(दाङ्ग)
देउखुरी }		३८,८५५	(देउखुरी)
सुनार	जनगणना रिपोर्ट में इसकी जनसंख्या का पता नहीं चला। परन्तु 'नेपाली भाषा प्रकाशिनि समिति' द्वारा प्रकाशित 'नेपालको भूगोल अर्थात् नेपाल का भूगोल' (नौवाँ संस्करण, २०१३ साल) में नेपाल के हर जिले की जनसंख्या दी गयी है जिसका आधार २०११ साल की जनगणना रिपोर्ट ही है। इस पुस्तक में 'सुनार' जिले की जनसंख्या ४१,८८१ दी गयी है। इसका स्वतंत्र निर्वाचन-क्षेत्र नहीं है। इसकी जनसंख्या किस निर्वाचन-क्षेत्र में जोड़ दी गयी है, यह भी पता नहीं चलता है।	४१,८८१	(सुनार)
सुर्खेत	इसका भी स्वतंत्र निर्वाचन-क्षेत्र नहीं है। इसकी जनसंख्या किस निर्वाचन-क्षेत्र में जोड़ दी गयी है, पता नहीं चलता है।	३४,९३९	(सुर्खेत)

मधेश के कुल निर्वाचन-क्षेत्र ३४ **कुल जनसंख्या २८,४५,३६९**

आधुनिक नेपाल का क्षेत्रफल ५४,००० वर्गमील है और मधेश का क्षेत्रफल लगभग १६,००० वर्गमील है। इसलिए समझना चाहिए कि निर्वाचन-क्षेत्र का बटवारा भौगोलिक मान्यता के आधार पर न होकर, क्षेत्रफल के आधार पर ही किया गया है। जहाँ मधेश (तराई) क्षेत्र के लिए ३४ निर्वाचन-क्षेत्र बनाए गये हैं, वहाँ पहाड़ी क्षेत्रों के लिए ७५ निर्वाचन-क्षेत्र बने हैं। जमीन के उपजाऊपन पर ही जनसंख्या निर्भर करती है। (Density of population depends on fertility of the land), इस तथ्य का गला घोंट दिया गया है। यह इसलिए कि मधेश पर एक वर्ग की प्रभुता सदा के लिए कायम रहे। यह सब कुछ मालूम होते हुए भी कि पहाड़ में न तो उपजाऊ भूमि की अधिकता है, न उद्योग-धंधे ही हैं। ठीक इसके विपरीत मधेश में कल-कारखाने के साथ ही उपजाऊ भूमि की ही अधिकता है। फिर भी मधेश जिसकी जलवायु भी गर्म है, वहाँ की अपेक्षा पहाड़ में ही जनसंख्या का घनत्व प्रबल हो गया है। इन पंक्तियों के लेखक को ऐसा लगता है कि नेपाल ने अपनी नई खोज के जरिए भूगोल शास्त्र में भौगोलिक सत्यता का एक नया अध्याय जोड़ा है। ठीक ही है। आखिर नेपाल का प्रजातन्त्र ही तो है न! यहाँ तो क्या-क्या नहीं देखने को मिलेगा। केवल दुनियाँ को धैर्य धारण करना चाहिए।

की जनसंख्या ५० लाख से अधिक बतलाते थे जबकि सच्चाई पर चुनाव हो जाने के कारण एक वैधानिक पर्दा पड़ा रहेगा ? सबसे बढ़कर इस पाप का भागी कौन होगा जबकि पचीसों लाख से ज्यादे मधेशी जनता अधिकार-वंचित बे-घरबार होंगी जिन्होंने खून-पसीने को एक करके जंगलों को तोड़कर जमीन आबाद किया और जिनकी गाढ़ी कमाई पर ही हम जिन्दे हैं। दूसरी बड़ी बात तो यह है कि जब मधेशी नेता चुनाव लड़ने के लिये तैयार हो ही गये हैं तो मानना ही पड़ेगा कि मधेश की जनसंख्या अठाईस लाख पैंतालीस हजार ही है। तब फिर इन दुभाषिये मधेशी नेताओं को कैसे मतदान दिये जायँ जिन्होंने शुरू से मधेश का बहुमत बतलाकर हमें धोखे में डाला है ? क्या यह नहीं कहा जा सकता है कि नेता वस्तुतः अपने स्वार्थ-साधन में तल्लीन हैं, न कि जनता के हित के लिये व्यग्र हैं ? चुनाव का बहिष्कार करना हमारा कर्तव्य हो जाता है या नहीं, इस पर विवेकशील मधेशियों को ठंडे दिमाग से गम्भीरता के साथ विचार करना है। क्यों नहीं कहा जा सकता है कि मधेशी नेता पथ-भ्रष्ट एवं स्वार्थान्ध होकर सच्चाई की गर्दन पर छूरे तक चलाने के लिये कटिबद्ध हो चुके हैं ? क्या इन नेताओं द्वारा हमारे अधिकार सुरक्षित रह सकते ? मधेशी विवेकशील नवजवानों पर जिम्मेदारी आ चुकी है, इसे मधेशी युवकों को ही सोचना है।

मधेशी नेताओं को कम से कम पतन के इस निम्न स्तर पर कभी नहीं पहुँचना चाहिये। नैतिकता भी कोई चीज है ! अपने क्षुद्र स्वार्थ की पूर्ति के लिये अपने आधे भाइयों को उनकी अपनी ही भूमि से भगा देने में नैतिकता के सिद्धान्त का पालन किस हद तक होगा, इस पर भी मधेशी नेताओं को विचार करना चाहिये। हमें अपने लिये, अपने वतन के लिये, एक वर्गीय सरकार की जबर्दस्त अनुचित मनमानी इच्छा के मुताबिक ही हमें प्रमाण देना पड़े, यह कैसी हमारी दुर्दशा है ! क्या सचमुच में शासकों ने मधेशियों को इस निम्नस्तर के कंगाल गुलाम समझ लिए हैं ?

स्वार्थी तत्वों की ही यह आवाज है कि प्रजातन्त्र खतरे में है। इसलिये चुनाव जल्दी होना चाहिये। परन्तु मधेशियों को याद रखना है कि नेताशाही खतरे में है, व्यक्तिगत स्वार्थ खतरे में है, वर्गगत शक्ति खतरे में है और जिसके कारण ही मधेश की आधी जनसंख्या को खतम करके उपरोक्त स्वार्थ की सिद्धि के लिये चुनाव पर जोर दिया जा रहा है। वर्गतन्त्र खतरे में है, न कि जनतन्त्र। इसलिए मधेशियों को सोच-समझकर ही कदम उठाना है एवं भयंकर खतरों से सावधानी बरतने की आवश्यकता है। अन्तर्राष्ट्रीय जनमत ही हमारे भाग्य का निपटारा कर सकेगा, इस तथ्य को अब भी भूलना हमारी बिलकुल अविवेकशीलता ही सिद्ध होगी। जीवन-मरण के प्रश्न को संतोषपूर्वक धीरता एवं बहादुरी के साथ ही हल करना होगा। हमें अपनी दर्दनाक हालत के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य देशों से कहना होगा जिसके लिये हमें संगठित होकर विदेशी सरकारों के प्रतिनिधियों से बातें करनी होंगी।

"मधेश आन्दोलन के प्रस्ताव और उनकी व्याख्या" से उधृत— लेखक रघुनाथ ठाकुर "मधेशी"

प्रस्ताव (श्रावण, २०१६)

(१) १९५५ ई. में नेपाल के संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य होने पर उक्त संघ के महासचिव ने २४ फरवरी, १९५६ को एक संवाद द्वारा नेपाल की सरकार से पूछा था कि नेपाल के जिम्मे कोई ऐसा क्षेत्र है जो सं. रा. संघ के चार्टर के ग्यारहवें अध्याय के अनुच्छेद ७३ के अन्दर पड़ता हो। इस पर नेपाल के प्रतिनिधि कुछ अवधि तक शांत रहे। बाद में उन्होंने यह बताया कि नेपाली शासन के अधीन ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जो स्वयंशासित नहीं हो और अनुच्छेद ७३ के अन्दर पड़ता हो जिसके लिए नेपाल की सरकार को सूचना देनी पड़े (देखिये संयुक्त राष्ट्र संघीय प्रकाशन—ST / DPI / SER. A / 73/ Rev. 1, अंग्रेजी पृष्ठ ८, १ अप्रैल १९५७)।

नेपाल सरकार के प्रतिनिधि के उपरोक्त वक्तव्य पर यह सभा असंतोष प्रकट करती है और श्री ५ की सरकार से अनुरोध करती है (८ दिसम्बर, १८१६ के स्मरण-पत्र की धारा ७ की शर्त के अनुकूल जो अंग्रेजों के द्वारा महाराजा गीर्वाण युद्ध विक्रम शाहदेव जी को दिया गया था) कि 'मधेश क्षेत्र स्वयंशासित क्षेत्र नहीं है' घोषित करें और सं. रा. संघ में दिये गए निराधार वक्तव्य को वापस लें।

(२) नेपाल तथा पहाड़ प्रदेशों की कुल जनसंख्या की अपेक्षा मधेश क्षेत्र की जनसंख्या अधिक है, इस भौगोलिक तथ्य पर श्री ५ की सरकार पर्दा न डाले।

(३) मधेश क्षेत्र के निवासियों की पिछड़ी आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक स्थिति की उन्नति के लिए श्री ५ की सरकार अविलम्ब ध्यान दे और सं. रा. संघ के चार्टर के अनुच्छेद ७३ में उल्लिखित सारी जिम्मेदारी को वहन करे।

(४) मधेश की धरती पर सर्वप्रथम मधेशियों का ही अधिकार हो।

(५) मधेशी जातीयता (राष्ट्रीयता) की भाषा "हिन्दी" का मधेशी जीवन के हर सामाजिक पहलुओं में प्रयोग हो।

(६) नेपाली संसद के लिए 'मधेश' से चुने गये मधेशी सदस्य 'संयुक्त राष्ट्र संघ' की देखरेख में मधेश की व्यवस्था की सुरक्षा के लिए नेपाली संसद में प्रश्न उठायें, न कि नेपाली शासकों को मनमानी इच्छानुसार ही मधेश की व्यवस्था को नेपाल की व्यवस्था में समन्वित करायें। 'सं. रा. संघ' के चार्टर के अध्याय ११ के अधीन सं. रा. संघ को सूचना दिये बगैर मधेश की व्यवस्था के साथ किसी तरह का अन्याय न किया जाय, क्योंकि मधेश क्षेत्र की जनता परतन्त्र रहने के कारण अपने जीवन-मरण के प्रश्नों को विवेकपूर्ण दृष्टि से सोच नहीं सकती।

(७) मधेश की मूक जनता की दयनीय अवस्था पर विचार करते हुए सभा ने महसूस किया कि मधेशियों को उचित मनोवैज्ञानिक इच्छा को विदेशों में व्यक्त करने के लिए मधेशियों की एक ठोस संस्था बनें तथा 'मधेश क्षेत्र' एवं मधेशी जीवन की दयनीय स्थिति से विदेशी सरकारों के प्रतिनिधियों को अवगत कराने के लिए मधेशियों का एक प्रतिनिधि मंडल नई दिल्ली स्थित विदेशी राष्ट्र-दूतावासों में भेजा जाय।

(८) संयुक्त राष्ट्र संघीय हस्तक्षेप के सिवाय मधेश क्षेत्र पर किसी भी विदेशी सैनिक शक्ति का संचालन अविलम्ब अवैध ठहराया जाय (क्योंकि मधेश क्षेत्र एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है)।

(९) 'परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति' नामक पुस्तक का प्रकाशन अंग्रेजी भाषा में भी हो और उसका प्रचार विदेशी राष्ट्रों में अधिक पैमाने पर हो ताकि दुनियाँ हमारी तकलीफ को समझ सके।

●

दो शब्द

मुलुकी ऐन (The Law of the Land), मधेश गोस्वारा ऐन, मधेश जिल्ला-जिल्ला का जिमिदारी पटुवारी नाउ का सवाल, सरकारी गजेट इत्यादि से यह बात बिल्कुल साफ है कि मधेश प्रदेश की एक स्वतंत्र इकाई है और इसे नये 'मुलुकी ऐन' ने भी स्वीकार किया है। यह एक परतंत्र इलाका (Dependent Territory) है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय संधियों के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान की धारा ७३ के अन्दर अपनी आजादी हासिल करने का अधिकार है। 'परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति' नामक पुस्तक ने इस तथ्य को शासक के समक्ष उचित समय में ही रखा था। क्योंकि एक व्यक्ति को भी ऐसा करने का अधिकार है।

१९५६ ई. में संयुक्त राष्ट्र संघ ने तथाकथित नेपाल राष्ट्र की सरकार से पूछा कि संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान की धारा ७३ के अन्दर उसके जिम्मे कोई अस्वशासित प्रदेश है। परन्तु तथाकथित नेपाल राष्ट्र की सरकार कुछ दिनों तक उत्तर न देकर चुप रह गयी। फिर चतुर्थ समिति में खोज-पूछ होने पर उसने कहा कि उसके अधीन इस किस्म की कोई जिम्मेदारी नहीं है जिस वक्तव्य की पुष्टि के लिए पीछे से नेपाल की सरकार ने पत्र भेजा। अयोग्य जन-नेतृत्व के कारण इसका पता नहीं चला। परन्तु तथाकथित नेपाली सरकार के इस वक्तव्य का पता चलने पर घोर विरोध होना प्रारम्भ हुआ। ''राजद्रोह बनाम वस्तुस्थिति पर पर्दा'' नामक पुस्तक इसका प्रमाण है। मधेश में जन-सभाएँ होने लगीं। खुलेआम प्रस्ताव पास होने लगे और प्रस्तावों को कार्यरूप में परिणत करने के लिए प्रारम्भिक संगठन समितियों का निर्माण हुआ।

गोरखा शासकों के द्वारा लिखित रूप में वि. सं. १९१० से प्रचलित करवाया गया 'मुलुकी ऐन' में इसका स्पष्ट उल्लेख है कि गोरखा राज्य का विजित साम्राज्य नेपाल, पहाड़ तथा मधेश प्रदेश है। ऐसी स्थिति में भी २०१० साल का नेपाल कानून व्याख्या सम्बन्धी ऐन, राजा के द्वारा प्रदत्त वि. सं. २०१५ साल के तथाकथित प्रजातांत्रिक संविधान की धारा २ (१) (ङ) तथा वि. सं. २०१९ के तथाकथित पंचायती संविधान की धारा ९१ (१) (घ) में 'नेपाल' शब्द की व्याख्या तथा परिभाषा 'नेपाल अधिराज्य' के रूप में करना बिलकुल गैरजिम्मेदारी बरतना था और जनता को विद्रोही बनाना भी था। इसलिए पंचायती संविधान के जरिये जब तथाकथित नेपाल राष्ट्र का पुनर्गठन होने लगा तो ''मधेश के पुनर्गठन का अधिकार मधेशियों का है'' नामक पुस्तिका से शासक को सावधान करवाया गया। क्योंकि शासकों के नापाक इरादे का पर्दाफास करना था कि मधेश के टुकड़े-टुकड़े करके उन्हें पहाड़ में जोड़कर मधेश की स्वतंत्र इकाई तथा एकता को नष्ट करना और मधेशी जनप्रतिनिधित्व को हड़प लेना शासकों का उद्देश्य है।

मधेश आन्दोलन की सक्रियता ने गोरखा शासकों को आतंकित किया और नेपाल प्रदेश की तथाकथित प्रजातांत्रिक पत्र-पत्रिकाओं ने मधेश के मोरंग जिले की प्रारम्भिक-संगठन-समितियों के सदस्यों के खिलाफ कड़ी से कड़ी कार्रवाई करने के लिए सरकार से निवेदन करना प्रारम्भ किया। फलस्वरूप इस जिले की समिति का **एक उग्र कर्मठ क्रान्तिकारी कार्यकर्ता कटहरी निवासी श्री शनिश्चर चौधरी अपनी पत्नी सहित गोली के शिकार हुए।** परन्तु शहीदों के खून यों ही बेकार नहीं जाते। शहीद दम्पत्ति से प्रभावित होकर मधेश आन्दोलन बढ़ता ही गया है। पश्चिमी मधेश ने तो सशस्त्र विद्रोह कर दिया। मधेश कांग्रेस, मधेश कम्युनिस्ट पार्टी एवं अन्य मधेश आन्दोलनात्मक संगठनों का संयुक्त 'मधेश मुक्ति मोर्चा' एवं 'मधेश मुक्ति सेना' दोनों कार्यरत हुए हैं और कितने शहीद भी हो चुके हैं। शांतिप्रिय मधेशी कौम को खूनी स्वभाव का बना देना यह दोष सरासर तथाकथित नेपाली सरकार के माथे ही मढ़ा जायेगा। अपने अधिकार तथा कर्त्तव्य को समझ लेने पर शांतिप्रिय मधेशी कौम भी खूनी स्वभाव का बन सकता है यह शासक के लिए समझने की चीज है। विरोध बराबर जारी रहता आया है और मरते दम तक रहेगा जब तक कि मधेश को आत्म-निर्णय का अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। अतः मधेश की स्वतंत्र इकाई एवं एकता पर शासक अब भी बज्र प्रहार करना छोड़ दें तो अच्छा हो।

मधेश प्रदेश का स्थान साफ और एकदम सुरक्षित है। सन् १८१४ ई. में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी तथा गोरखाधीश महाराजा गीर्वाणयुद्ध विक्रम शाहदेव के बीच लड़ाई छिड़ने पर मधेशी जनता ने गोरखा शासन के खिलाफ अंग्रेजों का साथ देकर गोरखों के चंगुल से अपने को मुक्त किया था। लेकिन अंग्रेजी सल्तनत की नींव मजबूत बनाने के लिए एवं गोरखा शासकों को संतुष्ट रखकर उनसे बराबर मदद लेने के लिए कृतघ्न अंग्रेजों ने फिर से मधेश क्षेत्र को गोरखा शासकों के हवाले किया और मधेशियों के भविष्य की परवाह नहीं की। यद्यपि मधेशी कौम पर अत्याचार नहीं करने की शर्त को गोरखा शासकों ने स्वीकार कर लिया, पर स्पष्ट है कि इस तरह की संधि में मधेशी कौम के जनमत की उपेक्षा की गई। इस तरह किसी क्षेत्र को प्रत्यर्पण (सुपुर्द) करने के पहले उस क्षेत्र की जनता के समर्थन की उपेक्षा करना अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि से अवैध है और इस तरह की संधि की कोई मान्यता भी नहीं है। परन्तु शासक इन तथ्यों पर पर्दा डाल देना चाहा है।*

---

* Memorandom—8th December, 1816.

2. With a view to gratify the Rajah in a point which he has much at heart, the British Government is willing to restore the Terai ceded to it by the Rajah in the Treaty......

7. Moreover, the Rajah of Nepal agrees to refrain from prosecuting any inhabitants of the Terai, after its revertance to his rule, on account of having favoured the cause of the British Government during war, and should any of those persons, excepting the cultivators of the soil, be desirous of quitting their estates, and of retiring within the Company's Territories, he shall not be liable to hindrance.

[A collection of Treaties, Engagements and Sanads : Vol. XIV. 1929, Page 65-66 : compiled by C. U. Aetchison, B. C. S.]

नोट :—धारा २ से स्पष्ट है कि अंग्रेज अपने हित अनिष्ट की आशंका से परेशान होकर राजा को खुश रखकर उससे बराबर मनोवांछित मदद लेने के उद्देश्य से ही हस्तगत क्षेत्र को फिर से राजा को वापस दे रहा है। जहाँ अंग्रेजों का अपना स्वार्थ ही सर्वोपरि हो और राजा को खुश रखने का सवाल हो वहाँ मधेशी जनता के जनमत का सवाल ही गौण हो जाता है। इस तथ्य पर पर्दा डालना महा अन्याय है। धारा ७ एक दिखावटी चीज मात्र है। इसे क्षेत्र का मनमानी प्रत्यर्पण अथवा (Arbitrary cession) सुपुर्दगी कहते हैं।

एक अजीब नक्शा दुनियाँ के सामने है। धरती मधेश का है। जनता मधेशी है। जधेमत मधेशी है पर शासन गोरखालियों का है। मधेश की अन्तर्राष्ट्रीय वैधता पर पर्दा डालकर अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं सुविधाओं से मधेश को वंचित रखा गया है। सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक पिछड़ेपन में मधेश को रखकर मधेश को हड़प लेना ही शासकों का दुरुद्देश्य है।

अतः मधेश की जन-सभाओं के द्वारा सर्वसम्मति से पारित प्रस्तावों की पृष्ठभूमि की व्याख्या मधेश के स्वस्थ चित्त वाले विवेकशील सज्जनों के समक्ष प्रस्तुत है जो अहिंसात्मक मधेश आन्दोलन के घोषित उद्देश्य तथा न्यूनतम कार्यक्रम की आधारशिला है। यह व्याख्या अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण पर ही आधारित है। मोटे तौर पर इसमें मुख्य समस्याओं के प्रति बातें कही गयी हैं जिनमें विकास की अन्य समस्याएँ स्वयं ही समावेश कर जाती हैं। मधेश के स्वस्थ बुद्धिजीवी जिन्हें मानव-अधिकार तथा कर्त्तव्य के प्रति कुछ भी आस्था है वे इसका मूल्यांकन करेंगे ही। आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक इत्यादि विभिन्न पहलूओं के विकास-कार्यों में लगे मधेश के बुद्धिजीवियों से अपील है कि समय रहते सही रास्ते को पकड़ें। कौमी अधिकार को व्यक्तिगत स्वार्थ पर बेचना इससे बढ़कर और दूसरा कोई जघन्य अपराध नहीं होता। उनके सामने ही उनकी संतान रक्तपातपूर्ण क्रांति करने के लिए उतारु हों इसके रहस्य को सभी समझें। खासकर पढ़े-लिखे नवजवानों से अपील है कि क्या वे मानवोचित अधिकार तथा कर्त्तव्य के प्रति अपनी ईमानदारी तथा जागरुकता का परिचय देंगे ?

भलाभलेनी, मोरङ्ग (मधेश) ''मधेशी''

विक्रम संवत् २०२१

सांस्कृतिक विकास

सर्वप्रथम 'परतंत्र इलाके की संस्कृति के विकास और उसकी रक्षा का पूरा प्रबंध करना' संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य देशों की जिम्मेदारी है जिनपर परतंत्र इलाके के अभिशासन की जिम्मेदारी है। सांस्कृतिक विकास से मतलब होता है उस इलाके के लोगों को भाषा का विकास एवं उसके साहित्य की उन्नति।

दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि स्कूलों, कालेजों एवं सरकारी कार्यालयों में हमें अपनी भाषा के जरिए काम करने का अधिकार तक नहीं है। फिर अपनी भाषा के विकास के लिए सरकारी आर्थिक सहायता देने का प्रश्न ही नहीं उठता। गोरखा शासकों की अदालती एवं मातृभाषा ''गोरखाली या खसकुरा'' के विकास एवं रक्षा में शासक ने जी-जान लगा दी है। जनता के सरकारी खजाने के पैसे से गोरखाली भाषा के साहित्य को आगे बढ़ाने, सरकारी अत्याचारों का भय दिखाकर इसे दूसरी जातियों पर जबरदस्ती लादने और दूसरी जातियों की भाषाओं का विकास करने का केवल मौखिक आश्वासन देने के सिवाय शासक के पास कुछ रह नहीं गया है। इस सांस्कृतिक शोषण का ज्वलन्त प्रमाण तो यही है कि शासक के द्वारा प्रदत्त तथाकथित संविधान में अन्य जातियों (Nationalities) की भाषाओं के विकास एवं रक्षा के सम्बन्ध में एक शब्द भी नहीं लिखा है। इस तरह के सांस्कृतिक शोषण का अंत इस प्रकार होगा कि शासक वर्ग की तथाकथित नेपाली राष्ट्रभाषा हमेशा के लिए दफना दी जायेगी।

गोरखाली भाषा नेपाली भाषा नहीं है, नेवारी भाषा नेपाली भाषा है।* गोरखा शासक अपनी पुरानी मनोवृत्ति को जल्द से जल्द छोड़ दें तो अच्छा है। क्योंकि सभी को याद है कि दूसरी जातियों को गुलाम बनाने के उद्देश्य से उनके भाषागत सांस्कृतिक इतिहास को गोरखा शासकों ने जलाया था।† और आज भी मदद देने की बात तो दूर रही जब कभी स्वयं अपनी भाषाओं के विकास के लिये कोशिश करते तो शासक बराबर अडंगा लगाते रहते हैं।

शासकों की भ्रष्ट बुद्धि इसे स्वीकार क्यों नहीं करती कि उन्हें जिस तरह उनकी मातृभाषा प्यारी है और उसे राष्ट्रभाषा के पद पर बनाये रखने के लिए संकल्प ले चुके हैं ठीक उसी तरह अन्य जातियों को भी अपनी मातृभाषा, जातिभाषा के प्रति असीम श्रद्धा एवं मोह है! परतंत्र इलाके के सांस्कृतिक जीवन के प्रति शासकों की यह उदासीनता एवं अदूरदर्शिता एक बार जगती हुई जातियों को एकाएक विद्रोह करवाने के लिए बाध्य कर देगी इसे शासक समय रहते क्यों नहीं समझता ? सविनय अनुरोध है कि सांस्कृतिक जीवन के विकास के लिए निम्न सुझाव को अविलम्ब कार्यरूप में लाया जाय—

''मातृभाषाओं के अविलम्ब विकास के साथ मधेशी जाति (Nationality) की राष्ट्रीय भाषा 'हिन्दी' का सर्वत्र प्रयोग।''

सबसे बड़ा दायित्व तो यही है संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य देशों पर।

●

राजनीतिक स्थिति

''अस्वशासित जातियों की राजनीतिक आकांक्षाओं का ध्यान रखने का, उनकी भाषाओं के माध्यम से उनमें स्वशासन को बढ़ावा देने का तथा उनकी राजनीतिक आकांक्षाओं के अनुकूल उनकी आजाद राजनीतिक संस्थाओं के अधिकाधिक विकास करवाने का भार संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य देशों पर है।''

* European call it (Khas-kura) 'Nepali', or 'Naipali', i. e. the language of Nepal. This is a misnomer, for it is not the language of Nepal, but only that of the Aryan rulers of the country. The inhabitants of Nepal itself give this name (in a slightly corrupted form) to the principla Tibeto-Burman language of the country, Newari, and call the Aryan language 'Khas-kura' or 'Khas-speech'. In other words, the Khasas, who have abandoned their own Aryan language and adopted that of their Rajput conquerors, have given the adopted language their own name. It is also called 'Gorkhali' i. e. the language of Gorkhas, owing to the fact that the Rajput rulers of Nepal came immediately from the town of Gorkha, as already stated......
[Linguistic Survey of India, Vol. IX. Part I 1916. Page 18]

† The Limbu call themselves 'Yak-thung-ba', and according to Major Senior they state that they and the Rais were once one people. Their history is stated to be written in a book called Bhongsoli, i. e. Vanisavali of which copies are kept in some of the most ancient families. Such copies, when found the Gurkha, are always burnt, and the keeping of them is strictly forbidden.
[Linguistic survery of India, compiled and edited by G. A. Grierson, C. I. E., Ph. D., D. Litt., I. C. S. Vol. III. 1909, Page 283]

स्पष्ट है कि मधेश का शासन मधेशियों के द्वारा नहीं होता है। फलस्वरूप मधेशी कौम शासक वर्ग के अन्यायपूर्ण व्यवहार एवं उसके अत्याचार का शिकार है।* मधेश की न तो अपनी राष्ट्रीय पुलिस एवं फौज है, न अपनी विधायिका, न कार्यपालिका और न स्वतंत्र न्यायपालिका तथा जनसेवा आयोग। अत: अपनी राजनीतिक आकांक्षाओं को कार्यरूप में लाने का उसके पास साधन ही नहीं है। परराष्ट्र सेवाओं में मधेशियों की पहुँच न होने की वजह से मधेश की जन-आकाँक्षाओं का प्रचार विदेशों में नहीं होता है। कहीं से भी खतरा आने पर मधेश और मधेशी कौम मूली-गाजर की तरह खतम हो जायेगा। अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति एवं घटनाचक्र को देखते हुए यह साफ है कि मधेश का स्थान एक महत्त्वपूर्ण स्थान (Strategic Area) के रूप में है। विदेशी फौजी अड्डे भी मधेश पर कायम हैं।† ऐसी स्थिति में अपने बाहुबल पर खड़ा न होकर शासकों की भाड़े पर बिकने वाली शक्ति पर खड़ा रहना मधेश एवं मधेशी जनता के लिए महान मूर्खता के सिवाय और कुछ भी साबित नहीं होगा।

अत: शासक बिना हिचकिचाहट के मधेश एवं मधेशी कौम के विकास एवं रक्षा के लिए "मधेशी राष्ट्रीय पुलिस, फौज, कार्यपालिका, विधायिका, स्वतंत्र न्यायपालिका तथा लोकसेवा आयोग" की व्यवस्था करवाने की ओर अतिशीघ्र कदम उठावें। प्रतिरक्षा का भार स्थानीय जनता के ऊपर होना चाहिए न कि मुट्ठी भर शासक की फौज के ऊपर। अपनी सुरक्षा के लिए हम दूसरों पर क्यों निर्भर रहें ? इन तत्वों की शीघ्र उन्नति के लिए मधेशी जाति की राष्ट्रीय भाषा का प्रयोग करने का सब जगह अविलम्ब छूट हो। मधेश के लिये मधेश की परराष्ट्र सेवाओं की अलग से व्यवस्था हो जिसमें केवल मधेशियों का ही प्रतिनिधित्व हो जिसे मधेश को स्वतंत्र स्वस्थ परराष्ट्र नीति के निर्धारण करने की छूट हो।

मधेश एक "परतंत्र इलाका" होने की वजह इसे आत्म-निर्णय प्राप्त करने के साथ-साथ बिना दबाव के अपना अन्तर्राष्ट्रीय फैसला करने का अधिकार है। हमारी राजनीतिक आकांक्षाओं का गला घोंटना, राजनीतिक आकांक्षाओं के अनुकूल हमारी राजनीतिक संस्थाओं को पनपने नहीं देना इत्यादि गलत बातें बर्दाश्त के बाहर हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ को गलत सूचना देकर अन्तर्राष्ट्रीय जनमत, सुविधा एवं सहयोग से मधेश को अलग कर देने के कुप्रयास को बहुत दिन तक बर्दाश्त नहीं किया जा सकता।‡ मधेशी जनता के द्वारा जब यह बात सुनी जाती

* अन्याय एवं अत्याचार का वर्णन 'परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति' नामक पुस्तक में है ही।

† धरान, मोरङ्ग (मधेश) स्थित ब्रिटिश फौजी अड्डे का मानचित्र देखें।

‡ Following their admission to the United Nations in 1955, sixteen new Members were sent a communication, dated 24 February 1956, by the Secretary-General in which he referred to the provisions of Chapter XI of the Charter relating to the obligations accepted by Members of the United Nations responsible for Territories under their administration and drew particular attention to the obligation, contained in Article 73 e, to transmit information regarding these territories. As in the request sent to Members in June 1946, the Secretary-General asked the New Members to inform him whether they were responsible for the administration of any territories referred to in Article 73.

As of 30 November 1956, thirteen of the new Members had replied, all of them indication they were not responsible for the administration of any territories which would fall within the scope of Chapter XI. Jordan, Nepal and Spain had not yet replied. However, during the discussion in the Fourth Committee of this question,

है कि राजनीतिक पार्टी अथवा राजनीति की बातें करने का माने है शासकों के द्वारा अपने को बरबाद करवाना तब तो शर्म से मस्तक झुक जाता है। एक ओर राजा को राज्य एवं राजातंत्र की आवश्यकता तो है, परन्तु दूसरी ओर राजनीतिक पार्टियों की आवश्यकता नहीं है। अजीब बात! क्या 'परतंत्र इलाके' के शासक के लिए यह शोभा की बात है ? यही है संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान की मर्यादा की रक्षा ? क्या ग्राम पंचायत को शासक के विरुद्ध फैसला देने का तथा शासक के विरुद्ध अपनी आकांक्षाओं को कार्यरूप में परिणत करने का अधिकार है ? क्या अपनी सुरक्षा के लिए ग्राम पंचायतों को स्थानीय मधेशी फौज रखने का अधिकार है ?

'परतंत्र इलाके' के शासक को स्मरण रखना होगा कि किसी भी 'परतंत्र इलाके' को स्वयंशासित क्षेत्र घोषित करने के पहले उसके लिए निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना होगा—

(क) जनता का राजनीतिक विकास इतना अधिक हो कि वह जनतांत्रिक पद्धति के द्वारा भविष्य के लिए अपने देश के भाग्य का फैसला करने योग्य हो सके।

(ख) प्रतिनिधित्व पद्धति की सरकार का संचालन हो जिसमें सामयिक चुनावों के द्वारा जनता पूर्णरूप से हिस्सा ले अथवा अन्य जनतांत्रिक तरीके हों जिनके द्वारा जनता अपने स्वतंत्र विचारों को प्रकट कर सके।

(ग) मानव की व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं के उपभोग की व्यवस्था ऐसी हो जो संयुक्त राष्ट्र संघ के 'सार्वभौम मानव-अधिकार' की घोषणा से मेल खाये। उक्त घोषणा को ३० धाराओं के प्रति आस्था प्रकट करते हुए निम्नलिखित स्वतंत्रताओं की गारंटी के लिए विशेष प्रबन्ध हो :—

(१) प्रत्येक व्यक्ति तथा उसकी योग्यता की स्वतंत्रता हो कि वह अपनी सरकार बनाने में हिस्सा ले सके तथा सरकार में उसकी आवाज की गुंजाइश हो।

(२) मौलिक अधिकारों की गारंटी हो। जैसे—भाषण की स्वतंत्रता, प्रकाशन की स्वतंत्रता, सम्मेलन करने की स्वतंत्रता, धर्म की स्वतंत्रता तथा व्यक्ति को उचित न्यायपूर्ण बर्ताव पाने की गारंटी आदि।

(३) सामान्य बालिग मताधिकार की गारंटी हो जो अधिक मात्रा में शैक्षणिक सुविधाओं पर आधारित हो।

(४) राजनीतिक पार्टियों से सम्बन्धित रहने की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ-साथ सभी राजनीतिक पार्टियों को अपने प्रदेश के राजनीतिक जीवन में स्वतंत्र रूप से भाग ले सकने की स्वतंत्रता हो।

(घ) जनता को अपनी आकांक्षाओं के अनुकूल अपने प्रदेश की राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर अपना फैसला देने का अधिकार हो। जैसे—प्रभुसंपत्र (Sovereign) राष्ट्र बनाने का, स्वशासन की अन्य व्यवस्थाओं की प्राप्ति जिसमें शासक राष्ट्र या अन्य राष्ट्र विशेष से उसके अङ्ग के रूप में संबद्ध या स्वतंत्र संघ बनाने का अधिकार हो। परन्तु शर्तें यह कि इसके लिए जनता के ऊपर सरकारी दबाव न पड़ने पाये।

Nepal stated that it had no responsibilities of this nature, a statement which was later confirmed by letter.

[Background Paper on Chapter XI of the Charter concerning Non-Self-Governing Territories, U. N. Publication—ST / DPI / SER. A / 73 / Rev. 1, 1 April 1957, English, Page 8]

(ङ) शासक राष्ट्र या अन्य राष्ट्र के साथ अपनी प्रभुसंपन्नता को सीमित कर देने के बावजूद भी जनता का यह अधिकार सुरक्षित रहे कि जनतांत्रिक तरीकों के द्वारा जनता अपने निर्णय को बदल सके।

(च) इसकी गारंटी हो कि जनमत का आदर होगा।

●

(''भूमि सुधार कानून और नेपाली नागरिकता'' नामक पुस्तक से— लेखक : रघुनाथ ठाकुर ''मधेशी'')

वक्तव्य

साम्राज्यवादी साजिश के चलते ही वि. सं. २०२२ की लिखी हुई प्रस्तुत पुस्तक आज प्रकाशित हो रही है अन्यथा साम्राज्यवादी साजिश का भण्डाफोड़ मधेशी जनता के समक्ष बहुत पहले ही आ चुकी होती।

'भूमि सुधार कानून और तथाकथित नेपाली नागरिकता' शासकों के नापाक इरादों का भण्डाफोड़ है। मधेश मुक्ति आन्दोलन का स्पष्ट दावा है कि मधेश की धरती मधेशियों की है। इस जन्मसिद्ध अधिकार के विरुद्ध जो कुछ भी जालफरेबी होती है उसे मानने के लिए मधेशी कौम तैयार नहीं है।*

मधेश और मधेशी कौम की एकता को छिन्न-भिन्न करने के लिए शासक ने साम-दाम-दण्ड-भेद की नीति खुले रूप से अपना रखी है। मधेशी कौम के लिए जीवन-मरण का सवाल उठ खड़ा हुआ है। ऐसी स्थिति में मधेशी कौम के लिए निर्भीकता, धैर्य एवं साहस की जरूरत है। जात-पात, छोटे-बड़े, गरीब-धनी एवं दलगत स्थिति के बखेड़ों से ऊपर उठकर समतामूलक एकता का अस्त्र लेकर मैदान में खड़े होने की जरूरत है। हमारी कौमी एकता के आगे अन्यायी टिक नहीं सकते।

मधेशी कौम के प्रति जाने-अनजाने बड़ी-बड़ी गैर जिम्मेदारियाँ बरती जा रही हैं। नई दिल्ली से प्रकाशित भारत के एक प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक 'टाइम्स आफ इंडिया' के १९ अप्रिल १९६७ के अंक में समाचार छपा है—'बीस लाख भारतीय नेपाली नागरिकता प्राप्त कर सकेंगे।'

इसी तरह बंबई से प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक 'टाइम्स आफ इंडिया' के २ सितम्बर १९६७ के अंक में समाचार है—'बीस लाख भारतीय नये कानून से प्रभावित होंगे।' अक्टूबर १९६८ में भारत के राष्ट्रपति महामहिम श्री जाकिर हुसैन की सद्भावना यात्रा पर नेपाल रेडियो ने भारतीयों का सवाल उठाया था।

दिल्ली के साप्ताहिक प्रतिपक्ष ने अपने १५ अप्रिल १९७३ के अंक में लिखा है—'नेपाल के मधेश के जिले झापा में कोंच और संथाल भारत से गये हैं।'

दैनिक आर्यावर्त, पटना १८ दिसम्बर १९७९ के अपने सम्पादकीय में लिखा है—''वस्तुत: नेपाल में भी मुख्य प्रश्न नागरिकता का है। जैसी कि रिपोर्ट है तराई क्षेत्र में भारतीय मूल के लाखों ऐसे लोग हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी से नेपाल में रहते आ रहे हैं। परन्तु नेपाल की नागरिकता उन्हें नहीं दी गयी है।''

* पढ़ें—'परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति', 'राजद्रोह बनाम वस्तुस्थिति पर पर्दा', 'मधेश के पुनर्गठन का अधिकार मधेशियों का है', 'मधेश आन्दोलन के प्रस्ताव और उनकी व्याख्या' तथा 'नेपाल में भारत विरोधी भावना का रहस्य'।

उपरोक्त समाचारों से कुछ अजीब तथ्य सामने आये हैं। प्रथम यह कि बीस लाख भारतीय नेपाल में रहते हैं। दूसरा यह कि मधेस क्षेत्र नेपाल का अभिन्न अंग है। तीसरा यह कि मधेशियों को अपनी ही मातृभूमि मधेश में नागरिकता के लिए आवेदन करना होगा। चौथा यह कि नेपाल के संविधान १९६२ में नागरिकता संबंधी बातों का जिकर है।

क्या मधेश प्रदेश की मधेशी कौम के सदस्य भारतीय खून साबित होने पर भारतीय नागरिक कहे जा सकते हैं ? अगर इस तथ्य को थोड़ी देर के लिए मान भी लिया जाय तो क्या भारत के लोग ऐसा कहने का दुस्साहस कर सकेंगे कि नेपाल एक हिन्दु राष्ट्र होने एवं तथाकथित वृहत नेपाल राष्ट्र के शाहवंशज भारतीय खून होने के कारण वे भी भारतीय नागरिक ही हैं और नेपाल हिन्दुस्तान का ही एक हिस्सा है ?

इस प्रकार के समाचारों से मधेशी कौम में उत्तेजना का फैलना स्वाभाविक ही होगा। इसे मधेश प्रदेश एवं मधेशी जन-जीवन में एक प्रकार का अनुचित हस्तक्षेप करना माना जायेगा न!

मधेशी कौम मधेश प्रदेश की नागरिकता के लिए क्यों आवेदन पत्र दें ? क्या इस कौम के सदस्य विदेशी हैं ? क्या मधेश की भूमि मधेशियों के लिए विदेशी भूमि है ? क्या मधेशी जनता ने ऐसा कोई संविधान बनाने के लिए अपना प्रतिनिधि भेजा है जिन्होंने नागरिकता सम्बन्धी बातों पर विचार कर किसी प्रकार की व्यवस्था की स्थापना की हो ? क्या नेपाल के तथाकथित किसी संविधान में नागरिकता सम्बन्धी कोई विशेष अध्याय है जिसकी सूचना पत्र में प्रकाशित की गई है ? समस्याओं को बिना सोचे समझे इस तरह की बातों के प्रकाशन पर मधेशी कौम घोर आपत्ति करेगी।

मधेश मुक्ति आन्दोलन इसे स्पष्ट कर देना चाहता है कि मधेश तो नेपाल है नहीं। प्रस्तुत पुस्तक में मध्यदेश का मानचित्र प्रकाशित किया गया है जो स्थिति को स्पष्ट करेगा।* मधेश के नागरिकों की भी पड़ोसी भारत में जगह-जमीन है और ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी की सीमा में इस कौम के लिए ऐसी विशेष छूट रही है। मधेशी कौम पड़ोसी भारत के साथ मित्रवत व्यवहार रखना चाहेगी। अत: परस्पर समान अधिकार के आधार पर भारत के नागरिकों को भी मधेशी कौम वे सभी सुविधाएँ देना पसन्द करेगी जो भारत में मधेशी कौम को प्राप्त है अथवा होगी। शासक लोगों को मधेश की धरती पर नागरिक-अनागरिक का सवाल पैदा करने का कोई हक नहीं है और न किसी विदेशी सरकार को मधेश के मामले में अनुचित दखल देने का ही अधिकार है।

स्वतंत्र भारत की सरकार तथाकथित वृहत नेपाल राष्ट्र की सरकार के साथ १९५० ई. से संधियाँ करती आ रही हैं। अन्य विदेशी सरकारों ने भी संधियाँ की हैं। ये सभी संधियाँ मधेश प्रदेश पर भी लागू हों इसे तो तर्कसंगत नहीं माना जा सकता। क्योंकि किसी भी स्वतंत्र सरकार को यह अधिकार नहीं है कि वह परतंत्र इलाकों के सम्बन्ध में गैरजिम्मेदारी बरते। मानवीय हित की दृष्टि से ही संधियों के गुण-अवगुणों को परख कर मधेशी कौम शांत रही है। पर उन संधियों के आधार पर परतंत्र मधेश प्रदेश में झंझटों का पैदा करना शासक देश की सरकार अथवा अन्य विदेशी सरकारों के लिए सरासर अनुचित एवं गलत है।

* देखें मानचित्रों को "भूमि सुधार कानून और नेपाली नागरिकता" में पृष्ठ १६, २४, ३२ पर।
इस पुस्तक में पृष्ठ २५, २६ पर।

भारत की नीति सदा से गोल-मटोल रही है। भारत और नेपाल के बीच हुई १९५० की शांति और मैत्री संधि में नेपाल-भारत के लोगों को एक दूसरे के प्रदेशों में जगह-जमीन एवं सम्पत्ति आर्जन करने, निवास करने, व्यापार व्यवसाय करने, घूमने-फिरने, प्रदेशों के औद्योगिक एवं आर्थिक विकास में हिस्सा लेने तथा विकास संबंधी ठेकों तथा छूटों को प्राप्त करने तथा अन्य किस्म की समान सुविधाओं को प्राप्त करने की पूरी स्वतंत्रता है।* नेपाली शासकगण उपरोक्त संधि की मर्यादा का उल्लंघन कर भारतीय नागरिकों को नेपाल में क्यों परेशान करते हैं इसे तो वे ही जानें अथवा भारत सरकार जानें कि ऐसा क्यों होता है ? परन्तु उपरोक्त संधि की आड़ में मधेश प्रदेश में भी शासक धोखा-घड़ी पैदा करे और भारत की सरकार भी इसे मानने के लिए तैयार हो तो इस पर मधेशी कौम का रोष फैलना स्वाभाविक ही होगा और दोनों देशों की सरकारों को संदेह की दृष्टि से मधेशी कौम देखे तो यह कौन सी अन्याय की बात होगी!

प्रसंगवश नेपाली कांग्रेस के विश्वासघाती कदम के बारे में भी उल्लेख कर देना अनुचित न होगा। सच्चाई को दुनिया की आँखों से ओझल रखने में अभ्यस्त इस कांग्रेस ने अपने निर्वासित जीवन में पहली बार और लाचारी की हालत में इसे मुक्त कंठ से स्वीकार किया है कि सम्पूर्ण मधेश में मधेशियों के साथ अत्याचार होते हैं। परन्तु इन अत्याचारों के लिए श्री ५ की पंचायती व्यवस्था को दोषी बताया है और अपने को पाकसाफ साबित माना है जो सफेद झूठ और डरपोकपना का एक मिसाल है।

कलकत्ता से प्रकाशित नेपाली कांग्रेस का प्रमुख साप्ताहिक 'नेपाल आह्वान' के अंक ८, वर्ष ६, १० सितम्बर १९६६ में 'मोरंग में धोती-टोपी भिड़न्त-पंहाड़ी-मधेशी में खुला टक्कर' शीर्षक समाचार के साथ ही 'आत्मघाती कदम' शीर्षक सम्पादकीय लिखा गया है। सम्पादकीय टिप्पणी के पढ़ने पर शायद ही विवेकशील सज्जनों से यह तथ्य छिपा रहेगा कि नेपाली कांग्रेस स्वयं पहाड़ी एवं मधेशी अन्तर्द्वन्द्व से जर्जर एवं पीड़ित है। सिर्फ दिखावटी एकतारूपी नकाब के सहारे अपना काम चला रहा है। पत्र मधेशी कौम की एकता को स्वीकार करता है। लेकिन मधेश प्रदेश की स्वतंत्र ईकाई को स्वीकार नहीं करता। मधेश को तराई के नाम से पुकारता है। फिर 'तराई में भारतीय वंशज' शब्दों का प्रयोग करता है। मानो मधेश में भारतीय वंशज के लोग प्रवासी के रूप में नेपाली नागरिकता स्वीकार किए हुए हैं। **मधेश में अभारतीय वंशजों की कौन सी परिभाषा और मधेशी कौम में अभारतीय किसे कंहा जा सकता है** नेपाली कांग्रेस के नेतागण इसका स्पष्टीकरण देने का कष्ट कर सकेंगे क्या ?

Article 6.

* Each Government undertakes, in token of neighbourly friendship between India and Nepal, to give to the nationals of the other, in its territory, national treatment with regard to participation in industrial and economic development of such territory and to the grant of concession and contracts relating to such development.

Article 7.

The Governments of India and Nepal agree to grant, on a reciprocal basis, to the nationals of one country in the territories of the other the same privileges in the matter of residence, ownership of property, participation in trade and commerce, movement and other privileges of a similar nature. [United Nations Publication, Treaty Series, Volume 94, 1951, 1 Nos, 1302-1314, Treaty No, 1302 India and Nepal : Treaty of Peace and Friendship, signed at Kathmandu on 31 July 1950. Offical text English. Registered by India on 13 July 1951, page 3, 4.]

मधेश प्रदेश भारतीय वंशजों का प्रदेश है इस मौलिक तथ्य में नेपाली कांग्रेस को भ्रम प्रतीत होता है क्या ? मधेशी भूमि भारतीय वंशजों की अपनी ही भूमि है और मधेशी कौम अपनी ही मातृभूमि मधेश में बैठी है जो परतंत्र है इस तथ्य को स्वीकार करने में क्या नेपाली कांग्रेस को भ्रम प्रतीत होता है ? यही है नेपाली कांग्रेस का विश्वासघाती कदम जिसे मधेशी जनता को अच्छी तरह परखना चाहिए। मधेशी कौम के अन्तर्गत भारतीय-अभारतीय की दीवार खड़ीकर मधेशी जनता की एकता को सांप्रदायिक दलगत स्थिति में तोड़कर अपना मतलब पूरा करना यही उद्देश्य तो शासक कौम का हमेशा से रहा है।

पत्र ने लिखा है कि बहुदलीय प्रजातांत्रिक पद्धति में पहाड़ी-मधेशी का प्रश्न ही नहीं था। इस सफेद झूठ के लिए क्या लिखा जा सकता है ? बाहरी दुनियां को धोखे में रखना तो नेपाली कांग्रेस का अभ्यास सा बन गया है। मधेशी कौम के अधिकारों के साथ तथाकथित प्रजातांत्रिक व्यवस्था में पंचायती व्यवस्था से क्या कम अत्याचार होते थे ? तथाकथित प्रजातंत्र के ठेकेदार इस कांग्रेस के गोरखाली नेपाली सदस्य मधेशी कौम तथा इसके अधिकारों के साथ क्या कम अत्याचार करते थे ? काश, क्या ही अच्छा होता कि नेपाली कांग्रेस के नामधारी नेता दुनियां को सच्चाई से दूर रखने की पुरानी मनोवृत्ति में सुधार लाते एवं परतंत्र मधेश की उत्पीड़ित कौम की मुक्ति के लिए न्यायोचित कदम उठाते।

मधेशी जनता नेपाल की बहुदलीय व्यवस्था को देख चुकी है और निर्दलीय व्यवस्था को भी देख रही है। किसी भी व्यवस्था ने इस कौम के मौलिक अधिकारों का सम्मान नहीं किया है। मधेशी कौम को सतर्क होने की जरूरत है और अपनी आजादी की लड़ाई के लिए तैयार रहने की जरूरत है। नेपाल का जनमत संग्रह मधेश प्रदेश और मधेशी कौम के लिए कोई माने नहीं रखता। यह तो साम्राज्यवादी साजिश की बराबर होने वाली एक पुनरावृत्ति है जो मधेशी कौम के भाग्य का फैसला नहीं कर सकती।

यह कैसा विवेक है कि अगर कोई जनता से पूछे कि उन्हें अमृत चाहिए या जहर। अमृत तो अमृत है उसे सभी चाहते हैं। देना हो तो दो। जहर की बातें क्यों करते ? जहर-अमृत के बीच चुनाव की बातें करना तो अमृत नहीं देने का बहाना करना है और हमें मूर्ख बनाना है। हमें जाहिल और जंगली समझना है। शासक मधेश की धरती से अपनी पुलिस और फौज को वापस कर लें और संयुक्त राष्ट्र संघ के किसी सदस्य देश की देख-रेख में जनमत-संग्रह कराले तो उन्हें पता लगते देर नहीं लगेगी कि मधेश और मधेशी कौम पूर्ण रूप से साम्राज्यवादी साजिश से मुक्त होना चाहती है। असली लोकतंत्र चाहती है। घटिया लोकतंत्र नहीं। अगर साहस है तो शासक इसे आजमा के देख लें।

जंगली बहुदलीय जनतंत्र अथवा जंगली निर्दलीय जनतंत्र दोनों से मधेशी जनता को सावधान रहने की जरूरत है जिसमें न्याय एवं विवेक का कोई स्थान नहीं, जिसमें जिसकी लाठी उसकी भैंस का बोलबाला हो। उस राजतंत्र से भी हमें कोई सरोकार नहीं जो हमारी नींव को ही समाप्त करता हो। जय मधेश!

हरिनगरा भलाभलेनी (मोरंग-सुनसरी) मधेश। —*लेखक*
वि. सं. २०२२

शासक वर्ग की नियत

जन-जीवन की पिछड़ी आर्थिक स्थिति को उन्नत करने तथा जनता के जीवन-स्तर को उपर उठाने के लिए आर्थिक क्रांति परमावश्यक ही नहीं बल्कि अवश्यम्भावी है। इसमें भूमि सुधार का विशेष महत्त्व है।

परन्तु जहाँ यह सवाल पैदा हो कि शासक कौम जब अपनी वर्गगत समस्या को सुलझाने के लिए अपने शासित प्रदेश की जनता का कानूनी आड़ में उन्मूलन एवं सर्वनाश चाहे वैसी जगह तथाकथित भूमिसुधार का भंडाफोड़ करना जरूरी है।

यह प्रकट सत्य है कि मधेश की धरती को मधेशी कौम ने तोड़ा और अपने खून-पसीने से उसे आबाद गुलजार किया। सिर्फ ५०-६० वर्ष पहले तक का ही अगर रेकार्ड देखा जाय तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि मधेश की धरती पर मधेशी कौम का ही अधिकार था। लेकिन बिर्ता, नापी, दौड़हा के नाम पर आधी से अधिक धरती पर्वतवासियों के कब्जे में आ गयी। मधेशियों की धरती को जबर्दस्ती अपने कब्जे में कर लेना भी शायद ही मधेसी कौम भूली होगी।

उपनिवेशवाद एवं प्रसारवादी साम्राज्यवाद की दिवाल ढहने तथा साम्राज्यवादियों के पैर उखड़ने पर नेपाली शासकों के भी पैर लड़खड़ाये हैं और फिर शासित मधेश प्रदेश एवं मधेशी कौम के सफाये के लिए ये जुट पड़े हैं। उपनिवेशवादियों, साम्राज्यवादियों का साथ देने वाले शासकों के हित के लिए उपनिवेशवाद मुक्त स्वतंत्र धरती पर कोई जगह नहीं रही है।

इसलिए मधेश जो नेपाल का अभिन्न अंग नहीं है उसके बारे में संयुक्त राष्ट्र संघ को गलत सूचना देकर मधेश को नेपाल का हिस्सा बताया है और 'मधेश की धरती पर पहले पहाड़ियों का अधिकार है' इसका नारा बुलंद किया है।

तथाकथित नेपाल राष्ट्र के प्रजातांत्रिक आम चुनाव के समय में ही मधेशियों की स्वाभाविक बहुमत जनसंख्या को केवल ३१ प्रतिशत ही रखा। इसमें भी संतोष नहीं हुआ है तो तथाकथित नेपाल राष्ट्र के पुनर्गठन के नाम पर मधेश के टुकड़े-टुकड़े करके पहाड़ में जोड़ा है ताकि मधेशी जनता का प्रतिनिधित्व पर्वतवासियों के हाथ में सदा के लिए चला जाय और उस कौम की आवाज पर पर्दा पड़े।

इतने पर भी समस्या सुलझती नहीं देखकर शासक ने मधेशी कौम के अन्दर वर्णवाद का बीज बोया है। शरणार्थी, आदिवासी एवं अनागरिक का भेद उत्पन्न किया है। थारू, राजवंशी, संथाल, दोनवार, धिमाल, मुसलमान, वगैरह का बखेड़ा खड़ा किया है। यह सब सिर्फ इसलिए कि मधेशी कौम की एकता नष्ट होवे और शासकों का स्वार्थ सफल हो सके। पंचायत प्रथा के अंदर इसमें भी पूरी सफलता नहीं पाकर शासक ने भूमिसुधार कानून का सहारा लिया है और धनी-गरीबों का बखेड़ा खड़ाकर मधेशी कौम की फूट की खाई को चौड़ा किया है ताकि मधेशी कौम की एकता बराबर के लिए नष्ट होती रहे। इसलिए लेखक का ध्यान इस अवसर पर भूमिसुधार के वैज्ञानिक आर्थिक पहलू पर ही केन्द्रित न होकर भूमि सुधार के राजनीतिक पहलू की ओर गया है। क्योंकि भूमिसुधार एक राजनीतिक चाल है जिसे समझना प्रत्येक मधेश-वासियों का कर्त्तव्य है।

'नेपाल में भारत विरोधी भावना का रहस्य' नामक पुस्तिका में लेखक ने इसे बता दिया है कि शासक के सामने अपने जीवन-मरण का सवाल खड़ा है और मधेश को पूरी तरह से हड़पने के सिवा और दूसरा कोई चारा उसे नजर नहीं आता है।

अत: इस मोटी सी बात को प्रत्येक मधेशी जनता समझ ले कि शासक का नापाक इरादा मधेश की धरती से मधेशियों को अनागरिक भारतीय कहकर निकालने का है।

मधेश की आधी से अधिक भूमि तो 'बिर्ता' के नाम पर सरकार के अधीन है जिसे आसानी से पर्वतवासियों के बीच सरकार बांटती जा रही है। 'मधेश जिल्ला-जिल्ला का जिमिदार पटुवारी का नाउ को सवाल' नामक कानून की पुस्तक की धारा ३० में आप देखेंगे कि मधेश की धरती पर पहले पर्वतवासियों का अधिकार है। यह एक ऐसा राजनीतिक कदम रहा है जहाँ से मधेशी कौम को शासक के नापाक इरादे को समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

सम्पूर्ण मधेश की धरती पर चाहे वह जिस किस्म की जमीन क्यों न हो सभी को मधेशी कौम ने ही तोड़कर आबाद किया। मधेश में पर्वतवासियों की जितनी भी जमीन है सभी पर आज भी मधेशी जनता का ही हलबैल चलता है और उन्हीं के खून-पसीने से आबाद होता है। अगर भूमिसुधार कानून को सही ढंग से लागू किया जाय तो कानून मधेश की धरती पर मधेशी कौम का खोया हुआ अधिकार पुन: स्थापित हो जाय। पर क्या बात ऐसी है ?

सम्पूर्ण मधेश में भूमिसुधार कानून लागू करने से पहले ही पंचायत मंत्री ने वक्तव्य दिया कि भारतीय मूल वाले लोगों को नागरिकता के लिए नये सिरे से आवेदन करना पड़ेगा।* मधेश पर पर्वतवासियों के अधिकार को बरकरार करने के लिए सर्वप्रथम मधेशी कौम के लिए नागरिकता का प्रश्न खड़ा करना जरूरी था। यह बात एकाएक मधेश के सभी वर्ण के लोगों के उपर लागू इसलिए नहीं की गयी कि इससे एकाएक हंगामा हो सकता है।

आखिर भारतीय मूल के लोगों से शासक का क्या तात्पर्य है ? शासक 'भारतीय' शब्द का प्रयोग जानबुझ कर क्यों करते हैं जबकि मधेश में बसने वाली मधेशी कौम मूलत: भारतीय है जो अपने ही पूर्वजों की वासभूमि मधेश (मध्यदेश) में रहती चली आ रही है चाहे वह वर्ण में थारू, राजवंशी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, धिमाल, संथाली इत्यादि क्यों न हों ?

शायद इसलिए कि इससे अनपढ़ जनता में भ्रम उत्पन्न हो और संभवत: यह भी हो कि 'थारू, राजवंशी, धिमाल, दोनवार' आदि वर्णों को छोड़कर अन्य वर्ण (जैसे—ब्राह्मण, क्षत्रिय, कोईरी, यादव, गनगाई, मुसलमान इत्यादि) के लोगों को ज्यादे जागरूक समझते हों जो उनके पथ में कांटे की तरह हों जिनको मार भगाना शासक सर्वप्रथम जरूरी समझते हों। क्योंकि थारू इत्यादि वर्णों के लोगों को ही शासक मधेशी कहकर पुकारने में अपना भला समझते हैं जबकि 'मधेशी' एवं 'भारतीय' दोनों शब्दों का माने एक ही होता है। क्या शासक को 'मधेशी एवं भारतीय' दोनों शब्दों के मूल अर्थ को समझने में भ्रम होता है ? बिलकुल नहीं। तब ऐसा भ्रम उत्पन्न करने में शासक का इरादा क्या है ? इसलिए कि थारू आदि वर्ण के लोग अपने को मधेश के अन्य वर्ण के लोगों से अलग समझेंगे और मधेश के अन्य वर्णों के लोगों को भारतीय समझेंगे। साथ ही जब शासक—'भारतीय मूल के लोगों के खिलाफ कार्रवाई होती है'—ऐसा कहेंगे तो थारू वर्ण के लोग चुप्पी लगाकर रहेंगे जिससे मधेशी कौम की एकता

* देखिये—दैनिक 'आर्यावर्त्त', पटना, प्रथम डाक संस्करण २० मई १९६५ ई. कालम ४ पृष्ठ ७।

नष्ट होगी और शासक को अपना उद्देश्य पूरा करने में सफलता मिलेगी। पर यह भी भूलने वाली घटना नहीं है कि एकबार 'थारू' को भी शरणार्थी (यानी शरण में आया हुआ अनागरिक) कहकर पुकारा जा चुका है।* कुछेक जिले में तो मधेश के सभी वर्ण के मधेशी लोग भूमि-सुधार कानून से उबकर मधेश की धरती छोड़कर भारत की भूमि में शरण लिए हुए हैं।

लेखक मधेशी कौम को सतर्क कर देना चाहता है कि जिस तरह मधेशी कौम में असह्य फूट के लिए शासक हर तरह का सहारा लेता आ रहा है, इसलिए यह बहुत संभव है कि मधेशी कौम के अंदर थारू वर्ण के भूमिहीन मजदूर एवं अन्य वर्णों के मधेशी भूमिहीन मजदूर आपस में खून बहाने के लिए उतारू न कहीं देखे जायं। और फिर आपस की लड़ाई से थके कमजोर थारू वर्ण के भूमिहीन मजदूर पहाड़ी भूमिहीन मजदूर के शिकार न साबित हों। इस कुपरिणाम के लिए समस्त मधेशी कौम ही जिम्मेदार होगी चाहे हिन्दु, मुसलमान, यादव, थारू, राजवंशी, धिमाल, संथाली, कोईरी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य विभिन्न वर्णों में बंटकर ही हम क्यों न लड़ें। अगर लेखक की उपरोक्त आशंका सही हो तो पर्वतवासी, क्रांतिकारी, प्रगतिशील एवं विवेकशील कहे जाने वाले तत्वों के लिए यह एक चुनौती होगी न! क्योंकि इतिहास एवं न्याय इसके लिए उन्हें क्षमा नहीं देगा। अत: क्या उन्हें सतर्कता बरतनी ही होगी ताकि शासकों का इरादा नाकामयाब साबित हो ?

●

परिशिष्ट

परिशिष्टाङ्क (१)

हाम्रो उपेक्षा किन ?

पत्र संख्या	**नेपाल सरकार**	**सिंह दरबार**
ख. १०५०।	शिक्षा विभाग	काठमाडौं, नेपाल १ अषाढ, २०१०

विषय—रघुनाथ जी को अनशनबारे

श्री रघुनाथ ठाकुर जी,

तपाईंले सार्वजनिक मांग लिएर अनशन गर्नु भएकोमा नेपाल सरकार शिक्षा विभागले तपसिल बमोजिम निर्णय गरेको छ।

तपसिल

१. गरीब विद्यार्थीहरूलाई छात्रवृत्ति दिंदा यसै पालादेखि नै सरकारले विशेष ध्यान दिनेछ। छात्रवृत्ति दिईकन गरीब विद्यार्थीहरूले अध्ययन संतोषपूर्वक नगरि शिक्षामा रूकावट पर्न गएमा सरकारले यस विषयको राम्रो जानकारी गरी यस्ता विद्यार्थीहरूलाई छात्रवृत्तिबाट रूकावट गर्दा प्रमाण सहित चित बुझाई मात्र राख्ने छ।

२. आउँदो सालदेखि 'सेलेक्सन बोर्ड' पहाड, मधेशका जिल्ला जिल्लामा समेत रही छात्रवृत्ति विद्यार्थीहरूलाई प्रदान गर्दा त्यस 'सेलेक्सन बोर्ड' जिल्लाका बड़ा हाकिम र शिक्षित प्रतिष्ठित व्यक्तिहरूबाट गठन हुनेछ। यस बोर्डको सिफारिशमा सरकारले मौका दिनेछ।

* देखिए—हिमांचुली।

३. योग्यता पुगेका विद्यार्थीहरूलाई सेलेक्सन गर्दा विशेष गरेर आर्थिक अवस्थाको ख्याल राखि ७५ प्रतिशत गरीब विद्यार्थी र २५ प्रतिशत योग्यता भएका मध्यम श्रेणीका विद्यार्थी-हरूलाई दिइनेछ।

यो कुरा सरकार विद्यार्थीका प्रतिनिधिहरूद्वारा रघुनाथ जी छेउ पुऱ्याउन चाहन्छ र विद्यार्थी संस्थाका प्रतिनिधिहरू यस कुरामा मध्यस्त भएका छन्।

भवदीय

शारदा शमशेर

१. नेपाल स्टूडेन्ट्स यूनियन, २. अखिल नेपाल विद्यार्थी फेडरेशन, ३. नेपाल संस्कृत छात्रसंघ, ४. नेपाल छात्रसंघ, ५. तराईका छात्र प्रतिनिधि।

नोट

शोषित मधेश तथा पहाडका छात्र-छात्रावर्ग!

मेरो आमरण अनशनलाई चाडै नै भंग गराउनको लागि सरकारले यस आश्वासन-पत्रलाई भैलीको छात्र संस्थाहरूद्वारा भनेर राजभवन ढोकामा पठायो। औ जब म अस्पतालतिर लाई जान लागें तबदेखि नै यस आश्वासन-पत्रलाई 'नेपाल स्टूडेन्ट्स यूनियन' आफुसंग राख्यो। अनशन भंग गरेपछि जब म अस्पतालबाट निकलें तब यस आश्वासन पत्रको मांग मैले गरें। यसमा भैलीका छात्र संस्थाहरू (ने. स्टू. यू., अ. ने. वि. फे., ने. छा. सं. र ने. स. छा. सं.) का प्रमुख जिम्मेदार सदस्यहरूले बाहिर (मधेश औ पहाड)-का छात्रहरूको संबन्धमा तल लेखिएका तर्क दिएर आश्वासन-पत्र सधैको लागि आफुसंग राखे :

''किनकि मधेश औ पहाडका विद्यार्थीहरूको कुनै संस्था छैन र न तेस्को आंदोलनको कुनै इतिहास नै छ। त्यस कारण यो आश्वासन-पत्र 'नेपाल स्टूडेन्ट्स यूनियन' संग नै रहनछ।''

दीदी बहिनी एवं दाजु-भाइ हो!

पहाड र मधेशका छात्र-छात्रा वर्गमा के क्षमता छ त्यो त मैले भनि रहनुपर्दैन। हाम्रो शक्ति एवं कार्य गर्ने क्षमताको प्रमाण यो आश्वासन पत्र नै हो। भैलीको छात्र-छात्रा वर्गले हाम्रो संबन्धमा जे मन लागे पनि सोच्न सक्दछन्। हामीलाई काठमांडू भैलीका छात्र संस्थाहरूको जस्तो झूठो अभिमानको प्रदर्शन गर्नु परेको छैन। हाम्रो कामसंग मतलब छ नकि नाउँसंग।

म अबसम्म यस लागि शांत थिएँ कि हामीलाई यी तथाकथित छात्र संस्थाहरूको सांचोपन जान्न परेको थियो। मौका उनीहरूलाई दिइयो औ उनीहरूको सांचोपनको पता हामीहरूलाई अब लागि सक्यो। यहाँ यस सानो परचामा काठमांडू भैलीका यी छात्र संस्थाहरूको इतिहासमा केही लेखन मेरो लागि सम्भव भईरहेको छैन। यहाँ त मलाई यति नै लेखेर तपाईहरूलाई सावधान गरि दिनु परेको छ कि तपाईहरूको यस बहुमूल्य आश्वासन पत्रको प्रचार अबसम्म तपाईहरूको सामुने हुन दिएको छैन। यस पत्रदेखि तपाईहरूलाई अनभिज्ञ राख्न उनीहरूले उचित समझेका छन्। यस सम्बन्धमा मइले काठमांडू गएर बाहिरका विद्यार्थीहरूको समक्ष यस कुराको चर्चा पनि गरेको छु। यस आश्वासन पत्रको प्रचार नहुन दिनु नै साफ-साफ जाहिर गर्दछ कि यी छात्र संस्थाहरूले स्वार्थवश अर्का (मधेश औ पहाड)-को अधिकार र सुविधालाई हडपने कोशिश गरेका छन्।

तपाईंहरूलाई यो सुनेर आश्चर्य होला कि काठमाण्डूका यी तथाकथित छात्र संस्थाहरू आफुलाई देशव्यापी मान्दछन्। तर यस आश्वासन पत्रको प्रचार शोषित मधेश औ पहाडका छात्र-छात्रा वर्गमा नहुन दिनु नै यस कुराको प्रमाण छ कि यी संस्थाहरू न त देशव्यापी छन् औ न सांचो अर्थमा विद्यार्थीहरूको संघ नै हुन्। यदि यी संस्थाहरू देशव्यापी हुँदो हुन् त यस आश्वासन पत्रको प्रचार सारा नेपाल (सदर, मधेश औ पहाड)-को इलाकाहरूमा भई गएको हुन्थ्यो। मधेश र पहाडको त कसले भनोस काठमाण्डू भैलीभित्रका धेरै जस्ता छात्रहरूसम्म यस पत्रका बारेमा केही पनि जान्दैनन्।

सरकारको ढुलमुल नीति र अव्यवस्थाको कारण आज हाम्रो अधिकार एवं हाम्रो सुविधाहरू विदेशी छात्रहरू लूटी रहेका छन्। यस्तो एउटा जिम्मेदार पत्रको भनाई छ। म यो भन्न सक्दिन कि यो कुरा कहाँ सम्म सत्य छ। तर यति त जरूर भन्न सक्दछु कि यी विदेशी छात्रहरूले यस प्रकारको अनुचित कदम उठाउँदैनथे यदि 'सेलेक्सन बोर्ड'को गठन प्रत्येक जिल्ला-जिल्लामा भएको हुँदो हो।

भू. पू. प्रधानमंत्री जनरल श्री मातृका प्र० कोइराला जी को भनाई छ कि 'सेलेक्सन बोर्ड' गठित भएको छ। तब प्रश्न उठ्दछ कि फेरि विदेशी छात्रहरूले हाम्रो छात्रवृत्ति कसरी लूटेर लगेका छन्।

दीदी व बहिनी एवं दाजु-भाइ हो!

यस सानो परचामा धेरै नलेखेर म तपाईंहरूसंग यही अनुरोध गर्दछु कि तपाईंहरू हर किसिमले शतर्क भई जानुहोस् औ सम्हलि जानुहोस्। यी छात्र संस्थाहरूको भ्रममा नपड्नुहोस्। तपाईंको अधिकार र सुविधाहरू कसैले लुटोस् यो तपाईंको आफ्नो कमजोरीदेखि अरू के हो। अतः चाँडै भन्दा चाँडै यस वर्षदेखि नै तपाईं यस आश्वासन-पत्रलाई कार्यरूपमा परिणत गर्नको लागि सरकारसंग अनुरोध गर्नुहोस् औ यसका लागि शांतिपूर्ण तरिकाले तपाईं आफ्नो आंदोलनलाई शुरू गरिदिनुहोस्। यसको लागि तपाईंहरू आफ्नो-आफ्नो जिल्लाको प्रत्येक सानो ठूलो शिक्षण संस्थाहरूसंग सम्पर्क बढाउनुहोस् औ आफ्नो-आफ्नो जिल्लाका छात्रहरूको एउटा स्वतंत्र इकाई बनाउनुहोस् जसले पछि जिल्ला-जिल्लाको इकाईहरूसंग सम्पर्क बढाएर एउटा देशव्यापी आंदोलन गर्न सकोस्। अहिले एतिनै। जय मातृभूमि।

हाम्रो एकता जिन्दाबाद!
हाम्रो शक्ति अमर रहोस्!!

भवदीय
रघुनाथ ठाकुर

परिशिष्टाङ्क (२)

अपील

मधेश निवासी व्यक्तियों से!

मधेश की धरती पर नेपाली, भारतीय, विदेशी का बखेड़ां खड़ा होते देख मोरङ्ग जिले की प्रारंभिक संगठन समितियाँ (मधेश मुक्ति आन्दोलन) की ओर से १९५० के भारत-नेपाल की शांति एवं मैत्री संधि प्रकाशित हो गयी जो भारत द्वारा राष्ट्र संघ में निबंधित (रजिस्टर्ड)

है जिसकी रजिस्ट्री संख्या १३०२ है। इसके बाद दिल्ली के समाचार-पत्रों के द्वारा दोनों देशों की सरकारों का ध्यान उक्त संधि की ओर आकृष्ट किया गया। इस विषय को लेकर भारतीय संसद की लोक सभा तथा राज्य सभा में गरमागरम बहस हुई और संसद की नींव ही हिल उठी। भारत सरकार को बाध्य होकर अपने काठमांडू स्थित भारतीय राजदूतावास के माध्यम से गोरखा शासक की सरकार से जवाब मांगना पड़ा। लेकिन गोरखा शासक की सरकार ने सही बात बताने से इनकार किया है। कहा है कि भारतीयों के साथ कोई गलत व्यवहार या परेशानी नहीं है जबकि भारत के आदमी स्वयं जानते हैं कि उनकी परेशानियाँ रात-दिन बढ़ती ही जा रही हैं। आखिर भारतीयों के नाम पर ही मधेश में बैठे लोगों के धन के साथ-साथ उनके धर्म की भी लूट होती है। भारतीयों के नाम पर ही आज मधेश में पुस्तों से बैठे हुए लोगों पर विदेशी, भारतीय, अनागरिक होने के मुकदमें कायम किये गये हैं तथा उनकी जमीन की उपज तक सरकार अधीन जब्त है और परिवार भूखमरी के शिकार हैं। भारतीयों के ही नाम पर मिल के मजदूरों को, उद्योगपतियों को, विभिन्न पेशों में लगे व्यक्तियों को निकाला गया है। परन्तु महज संसद के सवाल-जवाब पर हीं गोरखा शासक की सरकार में आज हलचल मची हुई है। इनके पाप का घड़ा भर चुका है और फूटने ही वाला है।

मधेशी निवासी जनता से अपील है कि वह अपने दुःख-दर्द की कहानी अपनी कागजी प्रमाणों के साथ रघुनाथ ठाकुर, मकान नम्बर १९६५, लेखराज भवन, दरियागंज, दिल्ली-६ के पते से रजिस्ट्री करके भेजें। मधेश की धरती पर विदेशी, अनागरिक, भारतीय, नेपाली एवं अन्य तरह के बखेड़ों को खड़ा करने की छूट नदीं दी जा सकती। मधेशी कौम के मामलों में दखल देने का अधिकार किसी भी शक्ति को नहीं है। प्रारंभिक संगठन समितियाँ (मधेश मुक्ति आन्दोलन) मोरङ्ग (मधेश) परतंत्र मधेशी जनता की आवाज को सन् १९५८ ई. से ही दुनियाँ के कोने-कोने में पहुँचाती रही है और अन्तिम दम तक लड़ने के लिए कटिबद्ध रहती चली आ रही है। जनता विश्वास रखे की जान-बुझकर इन समितियों द्वारा किसी भी तरह मधेशी जनता का अनिष्ट नहीं हो सकता।

जनता सावधान !!

बहुत ही दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि रघुनाथ ठाकुर के नाम पर गरीब, लूटी हुई, भूखी, उत्पीड़ित मधेशी जनता से गोरखा सरकार द्वारा समर्थित 'मधेश मुक्ति परिषद' नामक फर्जी संस्था की आड़ में कुछ लोग पैसे कमा रहे हैं। चंदे प्राप्त नहीं होने पर रघुनाथ ठाकुर के नाम पर ही लोगों को फसाने के लिए विभिन्न तरह के हथकंडे अपनाये जा रहे हैं। मधेशी जनता को उत्तेजनात्मक पर्चे के द्वारा धमकी तक दी जाती है। ये घोर निंदनीय घृणित कार्य है। मधेशी जनता की भलाई चाहने वालों को मधेशी कौम के खिलाफ ही हथकंडे अपनाना उचित तो प्रतीत नहीं होता। जनता सावधान रहे! रघुनाथ ठाकुर इन कार्यों का घोर विरोधी है। वह हिंसात्मक प्रवृत्तियों का घोर निन्दक है। कम से कम रघुनाथ ठाकुर के नाम पर इस प्रकार के कुकर्म न किए जायं। गंभीर बातें तो और प्रकाश में आयी हैं जिन्हें सुरक्षा की दृष्टि से बताई नहीं जा सकती। समय आने पर मालूम खुद-बखुद हो जायेगा। जनता इतना हीं सावधान रहे

कि 'मधेश मुक्ति परिषद' के ये चन्द लोग सरकारी एजेंट हैं जो जनता से पैसा लेकर उनके नाम को सरकार के पास भेजते जा रहे हैं। विद्याकांत दास नाम का एक व्यक्ति है उसने तो यह कहकर कि रघुनाथ ठाकुर पंचमगढ़ी, नौतनवा इत्यादि जगहों पर घिर गए हैं उन्हें छुड़ाना है, उन्हें रुपये भेजने हैं, २४० रु० एक जगह से, ५०० रु० दूसरी जगह से, १५ रु० तीसरी जगह से और न मालूम कितनी जगहों से कितने वसूल किए हैं। यह व्यक्ति कभी तो अपने को नेपाली कांग्रेस का आदमी कहता है, कभी बिहार संसोपा का सक्रिय सदस्य कहता है, संसोपा राष्ट्रीय सम्मेलन तक में प्रतिनिधित्व करने वाला व्यक्ति अपने को बताता है, कभी मधेश मुक्ति आन्दोलन से संबंधित व्यक्ति बताता है और रघुनाथ ठाकुर के नाम को बेचते फिरता है। पता नहीं यह क्या है ? इस व्यक्ति से निवेदन है कि मधेश मुक्ति आन्दोलन के पवित्र उद्देश्य को कलंकित करने न आयें। हर देश का आदमी घोषित करने वाले व्यक्ति से तो मधेश मुक्ति आन्दोलन बड़ा ही सावधान रहना चाहता है। यह भी पता चला है कि इस व्यक्ति को अब सरकारी समर्थन भी प्राप्त है जो दिखावटी रूप से फारबिसगंज धर्मशाला में डेरा डाले हुए है।

प्रचार विभाग
प्रारम्भिक संगठन समितियाँ (मधेश मुक्ति आन्दोलन)
मोरङ्ग (मधेश)

मधेश मुक्ति आन्दोलन संबंधित साहित पढ़ें :—
(१) परतंत्र मधेश और उसकी संस्कृति, (२) राजद्रोह बनाम वस्तुस्थिति पर पर्दा, (३) मधेश के पुनर्गठन का अधिकार मधेशियों का है, (४) मधेश आन्दोलन के प्रस्ताव और उनकी व्याख्या, (५) नेपाल में भारत विरोधी भावना का रहस्य।

परिशिष्टाङ्क (३)

गोरखा शासक की सरकार की मानसिक उलझनें और मधेशियों की परेशानियाँ !
अब गोरखा शासक ही बतावें कि परतंत्र मधेश प्रदेश की जनता किस विदेशी राष्ट्र की नागरिकता को त्यागें कि वह मधेश की धरती का हकदार बन सके !!

सभी को मालूम है कि भारत सरकार के पूछने पर गोरखा शासक की सरकार ने यह कहा है कि भारतीय नागरिकों के साथ किसी तरह का गलत व्यवहार नहीं है और न वे परेशान किए जाते हैं। तब सवाल उठता है कि जिन मधेशियों पर विदेशी होने के जो आरोप लगाए गये हैं, उन पर मुकदमें चलाये गये हैं, आज तक उनकी उपज वापस नहीं दी जा रही है, वे भूखमरी के शिकार बने हुए हैं, आखिर ये व्यक्ति कहाँ के निवासी हैं ? उन्हें किस देश की सरकार से फरियाद करनी होगी कि उन्हें संरक्षण मिले ?

गोरखा शासक की सरकार की मानसिक उलझनों के कारण आज मधेश की जनता तबाह हो रही है। ऐसा प्रतीत होता है या तो पागलों की जमात ही आजकल नेपाल का शासन चला रही है या गोरखा शासक का विवेकहीन अयोग्यों के सिवाय और कोई उपलब्ध नहीं हो रहा है जो कि उन्हें राजकार्य में सलाह दे सके। इनकी मानसिक उलझनों पर विचार करें।

भारत-नेपाल की शांति-मैत्री संधि, १९५० जिसकी रजिस्ट्री संख्या १३०२ है जो राष्ट्र संघ में सुरक्षित है उसके खिलाफ न तो भारत जा सकता है और न गोरखा शासक। अगर गोरखा शासक उस संधि का उल्लंघन करते हैं तो ६० लाख (अभी १ करोड़ ५० लाख करीब) नेपाली भारत में तबाह होंगे जो नागरिक बन बड़े-बड़े सरकारी ओहदे पर हैं और लाखों, करोड़ों, अरबों की चल-अचल सम्पत्ति का उपभोग कर रहे हैं। इसलिए भारत में बसे नेपालियों के रोष से भी गोरखा शासक की सरकार बचना चाहती है। अत: वह कह नहीं सकती कि गोरखा शासक की सरकार भारतीयों के साथ जुल्म करती है।

इधर परतंत्र मधेश की धरती से मधेशियों को विदेशी कहकर और उन्हें वहाँ से भगाकर उनकी जगह पर्वतवासियों को भरने की उत्कट लालसा भी गोरखा शासक की सरकार में है। अत: इसके लिए वह तरह-तरह के कानूनी हथकंडे करती रहती है। कभी नागरिकता कानून में संशोधन करती है तो कभी भूमि सुधार का नारा देती है। परन्तु इनके कानून भी जब इन्हें साथ नहीं देते तो गोरखा शासक की बेचारी सरकार बेमौत मरने लगती है। संवत् १९८७ साल के 'अदल' शीर्षक कानून की धारा २१ जो नागरिकता संबंधी है और २००९ साल के 'नेपाल नागरिकता ऐन' की धाराएँ २ और ४ मधेश की धरती से मधेशियों को विदेशी कहकर हटाने से शासकों को रोक देती है। यह बात मोटी अकल के लोग भी समझ लेते हैं कि नये कानून बनते हैं और निर्धारित तिथि व समय से हीं नये कानून के मुताबिक कार्य होते हैं। इससे पहले तक पुराने कानूनों की खारिजी के समय तक जो कार्य पुराने कानूनों के मुताबित होते हैं उनके नये कानून गैरकानूनी नहीं कर सकते। फिर २०२० साल के नागरिकता ऐन के जरिए १९८७ साल के 'अदल' शीर्षक कानून की धारा २१ और २००९ साल के 'नेपाल नागरिकता ऐन' की धाराएँ २ और ४ के द्वारा हुए कार्यों पर प्रहार करना यह तो सरकार, वकील, एडवोकेट सभी की महान अयोग्यता के सिवाय और क्या है ? अगर बात समझ में न आये तो इसके लिए ही तो नेपाल कानून व्याख्या संबंधी ऐन, २०१० बना हुआ है जिसका सहारा न्यायाधीश, वकील, एडवोकेट सभी को लेना चाहिए। हाँ, इरादा कुछ और हो तो कानून की परवाह नहीं की जा सकती है ! इसलिए मधेश की धरती पर पुस्तों से बैठे हुए मधेशियों के संबंध में अनागरिकता का सवाल पैदा नहीं होता।

प्रत्येक स्वतंत्र राष्ट्र को अधिकार है कि वह अपना कानून बना सके। लेकिन अंतर्राष्ट्रीय समझौते का उल्लंघन करके नहीं। भारत-नेपाल शांति-मैत्री संधि, १९५० एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। इसका उल्लंघन भारत या नेपाल बिना एक दूसरे की राय से कर नहीं सकता। ऐसा करना अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि से गलत बात है। इसलिए एक दूसरे को जानकारी देकर भारत-नेपाल की उपरोक्त संधि को संशोधित किये वा बदले बिना ही 'मुलुकी ऐन' २०२० के अदल शीर्षक कानून की धाराएँ २ और ३ कभी नहीं प्रचलित करवानी चाहिए थी। वैसे

यह ठीक है कि प्रत्येक विदेशी को समान भाव से देखा जाय। परन्तु एक जुर्म से बचने के लिए दूसरा जुर्म करना भी तो गलत है। दोनों अन्तर्राष्ट्रीय जिम्मेदारियाँ ही हैं—सभी विदेशियों को समान भाव से देखना और भारत-नेपाल की शांति-मैत्री संधि का भी पालन करना। यह तो गोरखा शासक की सरकार की पागलपन या विवेकहीनता का ही नमूना है। अत: म्युनिसिपल (राष्ट्रीय) कानून एवं अन्तर्राष्ट्रीय कानून दोनों की दृष्टि से मधेशियों को विदेशी भारतीय कहकर निकालने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

ऐसी हालत में भी गोरखा शासक की सरकार फिर नागरिकता (संशोधन) ऐन, २०२४ प्रचलित करवाकर कहा है कि पाँच वर्ष की अवधि में विदेशी नागरिकता का त्याग देने का प्रमाण-पत्र दाखिल करें। मधेश के निवासी भारतीय नागरिक तो हैं नहीं। क्योंकि गोरखा शासक की सरकार भारतीयों पर जुल्म नहीं करती है ऐसा तो गोरखा शासक की सरकार का जवाब है। तब मधेश के लोग किस देश की सरकार से आग्रह करें कि वह उनकी नागरिकता को रद्द कर दे ताकि वे मधेश की धरती का हकदार बन सकें। यह बात तो अब गोरखा शासक को ही बतानी है।

थोड़ी देर के लिए शासक यह भी कह सकता है कि शासक राज्यविहीन लोगों के साथ जुल्म कर रहा है। उन्हें किसी भी देश की नागरिकता नहीं है। इस पर भी गोरखा शासक की सरकार को छुट्टी नहीं है। क्योंकि इसने राष्ट्र संघ की 'सामान्य अन्तर्राष्ट्रीय संधि' जिसकी रजिस्ट्री संख्या ५१५८ है जो राज्यविहीन लोगों के अधिकारों की सुरक्षा से सम्बन्धित है, इस संधि-पत्र पर हस्ताक्षर करके यह दायित्व ले रखा है कि वह राज्यविहीन लोगों के साथ उनके अधिकारों के मामलों में अपनी ही प्रजा की तरह व्यवहार करेंगे। कहने का मतलब यह है कि जो अधिकार उनके एक नागरिक को होंगे वे अधिकार उन्हें भी दिये जायेंगे। इसलिए राज्यविहीन मधेशियों पर भी गोरखा शासक की सरकार जुल्म नहीं कर सकती। परन्तु राष्ट्र संघ का विधान या अन्तर्राष्ट्रीय कानून ऐसा नहीं कहता कि परतंत्र मधेश प्रदेश की जनता को राज्यविहीन बनाया जाय। ये ही गोरखा शासकों की मानसिक उलझनें हैं और मधेशियों की परेशानियाँ।

अगर शासक मधेश को भी नेपाल ही मानते हैं तो उनका कानून मधेशियों को विदेशी करार करने से उन्हें रोकती है। भारतीय कहकर मधेशियों को निकालने की बात सोचते हैं तो भारत-नेपाल की शांति एवं मैत्री संधि, १९५० का उल्लंघन करने का अपराधी माने जाते हैं और भारत में बसे ६० लाख (अभी करीब १ करोड़ ५० लाख) नेपालियों के जीवन को भी अस्त-व्यस्त करते हैं। राज्यविहीन कहकर वे अगर मधेशियों को तंग करते हैं तो राष्ट्रसंघ की 'सामान्य अन्तर्राष्ट्रीय संधि' रजिस्ट्री नम्बर ५१५८ की शर्तों का उल्लंघन करने का अपराधी होते हैं। राष्ट्रसंघ का विधान और अन्तर्राष्ट्रीय कानून उन्हें यह अधिकार नहीं देते हैं कि वह परतंत्र मधेश प्रदेश की जनता को राज्यविहीन करार दें। शासक की इन मानसिक उलझनों के बीच मधेश की आश्रित जनता परेशान है।

ए ! गोरखा शासक की विवेकहीन पागल सरकार

परतंत्र मधेशी जनता के जीवन से मजाक करना बन्द करें। फैसला करें कि आप क्या करना चाहती हैं। राष्ट्रसंघ के सदस्य देश होकर भी ऐसी मूर्खता क्यों करती है ? जब इस चीज

को विश्व की जनता नजदीक से समझेगी तो आपकी दशा कितनी दयनीय होगी ? क्या इस पर भी आपने कभी विचार किया है ? विश्व जनमत की अदालत के कटघरे में आपको खड़ा होना ही है।

श्री ५ महेन्द्र से अपील !

माननीय महामहिम जी,

आप जल्द ही अपनी पापी सरकार को भंग कर दें और उपरोक्त अपराधों के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों पर मुकदमें चलायें। इन अयोग्य न्यायाधीशों एवं सरकारी अफसरों को बरखास्त कर दें जिनके चलते उपरोक्त हंगामे हुए हैं। उन वकीलों, एडवोकेटों, वैरिस्टरों के लाइसेन्स जब्त करें जिनकी विलक्षण बुद्धि के चलते यह सब कुकाण्ड हुए। मधेशी परिवार भूखमरी के शिकार हैं क्योंकि उनकी जब्त उपज अब तक नहीं प्राप्त हो रही है। उन्हें उपज अविलम्ब वापस दें ताकि उनकी जान बचे। मुकदमें अब तक खारिज नहीं हुए हैं और लोगों के जब्त खेतों की कच्ची फसल चंद नेपाली गुण्डे चोरी-चोरी से लुटवाते चले जा रहे हैं। कैसा घोर जुल्म है ? आपके कानूने के द्वारा इन बेचारे मधेशी परिवारों का आर्थिक क्षति प्राप्त करने का भी अधिकार मिलना चाहिए। क्योंकि आपकी सरकार द्वारा उन्हें गैरकानूनी रूप से परेशान किया गया है और आर्थिक परेशानी और बरबादी में डाला गया है।

प्रचार विभाग,
प्रारम्भिक संगठन समितियाँ
(मधेश मुक्ति आन्दोलन)
मोरङ्ग (मधेश)

परिशिष्टाङ्क (५)

हजारों रुपये घूस की मांग।

श्री ५ महेन्द्र के नाम खुला निवेदन-पत्र

माननीय महामहिम जी,

प्रा. सं. स. (मधेश मुक्ति आन्दोलन), मोरङ्ग (मधेश) की ओर से विभिन्न तथ्यों का प्रचार बराबर समय-समय पर होता रहता है कि आपके साम्राज्य की तथाकथित लोकशाही एवं नौकरशाही अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक हो और निष्ठावान बनें। अनजान में गलतियों का होना संभव है। लेकिन सही तथ्यों के सामने आ जाने पर लोकशाही और नौकरशाही को कर्त्तव्य के प्रति अपनी जागरूकता का परिचय अविलम्ब देनी चाहिए।

लेकिन आश्चर्य तब होता है जब कथनी और करनी में कोई मेल नहीं दिखाई पड़ता। अब भारत सरकार एवं आपकी सरकार के बीच भारतीयों की समस्या को लेकर कोई सवाल हीं नहीं है, दोनों के सम्बन्ध भी अच्छे हैं, तब इस परतंत्र मधेश की धरती पर बैठे हुए लोगों के साथ हो रहे अन्याय का खातमा क्यों नहीं होता ? मधेश की धरती पर ही मधेशी कौम के सदस्यों को नेपाल-भारतीयों के झगड़ों में क्यों घसीटते ?

आश्चर्य है कि आपकी सरकार ने विदेशी भारतीय कहकर मुकदमें कायम किए हैं और बेचारे मधेशी नागरिक अपने को आपके साम्राज्य के नागरिक होने का दावा कायम किए हैं। तब मुकदमें क्यों हैं ? क्यों नहीं खारिज होते, उपज क्यों नहीं वापस दी जाती ? जोरों का अफवाह है कि हजारों हजार रुपये घूस की मांग नौकरशाही कर रही है। यही कानून है कि घूस लेकर मुकदमें खारिज करो और नहीं देने पर मुकदमें कायम रखो। पैसे पाते ही आपके अफसर कानून खारिज कर सकते हैं। तब तो आपके अफसर आपसे भी ताकतवर हैं।

इस तरह के गलत आचरण से मधेशी जनता में गलत एवं आतंकित करने वाला भ्रम फैल रहा है। अगर नौकरशाही कानून को हाथ में लेकर जनजीवन के साथ खिलवाड़ करती है तो जनता को भी बाध्य होकर कानून तोड़ने का अधिकार है। इसके लिए जिम्मेदारी आपकी नौकरशाही पर होगी न! कानून को मानना केवल जनता का ही कर्त्तव्य नहीं है, बल्कि मानने वालों से बढ़कर मनवाने वालों पर ज्यादे जिम्मेदारी है कि वह कानून के अधीन काम करें। कानून जनता की रक्षा के लिए बनते हैं, तंग करने के लिए नहीं। क्या इस पर श्री ५ का ध्यान अविलम्ब आकर्षित होगा ?

घूस देने और लेने तथा खासकर दिलवाने वालों के प्रति हमारी सख्त नफरत है और ऐसे व्यक्ति परतंत्र मधेशी कौम के घोर दुश्मन हैं जो एक ओर तो कानून की मर्यादा को भ्रष्ट आचरण से कलंकित करते हैं और दूसरी ओर जनता में कानून के प्रति अविश्वास फैलाते हैं। 'भ्रष्ट आचरण का खातमा' हमारा पहला नारा है जिससे जनता में अस्वस्थ वातावरण और अनुचित आतंक न फैलने पावे।

भवदीय :
प्रचार विभाग, प्रारम्भिक संगठन समितियाँ,
(मधेश मुक्ति आन्दोलन), मोरङ्ग (मधेश)

मधेश के जागरूक व्यक्तियों से अपील !

यह बहुत दुःख की बात है कि मधेश के जागरूक व्यक्ति मधेशी कौम के सदस्यों के प्रति हो रहे अत्याचारों के खिलाफ एकजुट होते नहीं दिखाई देते। ऐसा सोचना सरासर गलत बात है कि किसी के परेशानी से किसी दूसरे को क्या मतलब ? ऐसा सोचना मधेशी कौम के प्रति विश्वासघात करना है। एक से दूसरे-तीसरे बढ़ते-बढ़ते सम्पूर्ण समूह पर परेशानी आ पड़ती है। उदाहरण आपके सामने है। इसलिए मधेश के किसी जिले में, कहीं भी, किसी व्यक्ति विशेष या समूह के साथ हो रहे अन्याय का जमकर विरोध करना मधेश के हर क्षेत्र के व्यक्तियों का कर्त्तव्य है। एक जिले के लोगों को दूसरे जिलों के लोगों के पास पहुँचकर मुसीबत में फंसे लोगों की मदद जी-जान से करनी चाहिए। एक स्वर से डटकर विरोध करना चाहिए ताकि चोर नौकरशाही तथा लोकशाही का अनुचित गलत आतंक जनता पर फैलने नहीं पावे।

चूँकि मधेश पर मधेशियों का शासन नहीं है, मधेश की न तो राष्ट्रीय पुलिस है, न फौज; न कानून के निर्माता, न इन्साफकर्ता; न मधेशियों को अपनी भाषा में बयान लिखने का अधिकार है; इसलिए आए दिन मधेश के निवासी चोरी, डकैती, खूनी, नागरिकता, भूमि सुधार (लेवी धान, बचत कोष ऋण, मालगुजारी), विभिन्न प्रकार के टैक्स, अराष्ट्रीय तत्त्व,

विभिन्न तरह के मुकदमों में नाजायज परेशान किए जा रहे हैं और हम तमाशगीर की तरह अत्याचारियों के मुँह देखते हैं। इस बीमारी का इलाज सिर्फ यही है कि हम सभी आपस में बैर को मिटा एकजुट होकर नौकरशाही को ठीक रास्ते पर लाने के लिए ठोस कदम उठावें। हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहने से काम चलने वाला नहीं है। परमात्मा उसी की मदद करते हैं जो अपनी मदद करने के लिए खुद तैयार है। मधेश के किसान, मजदूर, जमींदार, व्यापारी, उद्योगपित, डाक्टर, शिक्षक, विद्यार्थी, वकील विभिन्न पेशों में लगे व्यक्तियों को चाहिए कि किसी एक पर हुए अत्याचारों को सभी अपने उपर हुए अत्याचार समझें और एक दूसरे की सहायता के लिए फौरन नजदीक आ जायं। शक्तिविहीन मधेशी जनता इसी तरह मधेशी कौम के दुश्मनों से मुकाबला कर सकती है।

प्रचार विभाग
प्रारम्भिक संगठन समितियाँ
(मधेश मुक्ति आन्दोलन), मोरङ्ग (मधेश)

परिशिष्टाङ्क (५)

ब्लिट्ज, ३० अगस्त १९६९, पेज १२

नेपाली कांग्रेस के नेताओं का सफाया करने की साजिश

विशन कपूर : ब्लिट्ज लखनऊ ब्यूरो

गोरखपुर : पता चला है कि नेपाल के प्रधानमंत्री कीर्त्तिनिधि विष्ट की चीन समर्थक सरकार ने नेपाली कांग्रेस के चोटी के नेताओं का "सफाया कर देने की कार्रवाई" शुरू कर दी है..................मधेश मुक्ति मोर्चे के अध्यक्ष रघुनाथ राय और सत्यदेव मणि त्रिपाठी की हत्या की जा चुकी है। रघुनाथ राय की तो बोटी-बोटी उड़ा दी गयी थी जबकि त्रिपाठी को उत्तर-प्रदेश की सीमा पर नौतनवा में गोली मार दी गयी थी। कहा जाता है कि राय का हत्यारा एक दोगला जासूस है, जो भारत सरकार और नेपाल सरकार दोनों ही को सूचनाएँ देता है......।

परिशिष्टाङ्क (६)

सोमवार, ४ दिसम्बर '६७ ई., चिराग कार्यालय, कसबा (पूर्णियाँ) से सम्पादित तथा कृष्ण मुरारी प्रेस में मुद्रित

चिराग साप्ताहिक

समाचार-पत्र

नेपाल भयंकर आग में जल रहा है

मधेश किसका है, छीन लो आजादी, क्रांति की आग लगी है।

मधेश (मोरङ्ग) की धरती पर नेपाली—भारतीय—विदेशी का बखेड़ा होते देख...... मधेश की आजादी की लड़ाई को लड़ने के लिए "मधेश मुक्ति परिषद" ने संगठित होकर लड़ने की योजना बनाई है तथा "मधेश सेना" की भी स्थापना किया गया है..........नेपाल में लगी

इस क्रान्ति की भयंकर आग में कई ''सरकारी पण्डे'' मधेश मुक्ति के नाम से ''पाकेट आन्दोलन'' चलाकर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। इस तरह के प्रमुख पंडों में कोई मि० रघुनाथ ठाकुर नामक व्यक्ति का विशेष रूप से नाम बताया जा रहा है, जो सयकड़ों मिल दूर ''दिल्ली'' में बैठा जाली लेखक भी बना हुआ कहा जा रहा है। ऐसे लोगों द्वारा क्रान्तिकारियों के गुप्तपत्रों को फर्जी प्रेमिकाओं द्वारा चुराकर गोरखा शासक के हवाले करने से लेकर, मरने वाले अमर शहीदों को 'चोर-डाकू' की संज्ञा देकर बदनाम करना मुख्य हथकंडा है। यह राज अमर शहीद शनिश्चर चौधरी तथा सत्यदेवमणि की हत्या में जाहिर हुआ............।

(इस भ्रमात्मक प्रचार का खण्डन परिशिष्ट—७ में देखें।)

परिशिष्टाङ्क (७)

भ्रमात्मक प्रचारों से जनता सावधान !

'मधेश मुक्ति परिषद' न कोई संस्था है न 'मधेश सेना' ही मोरङ्ग की धरती पर खड़ी है। हाँ, भारत की धरती पर खड़ी हो या आसमान में तो कहा नहीं जा सकता। यह भी पता नहीं कि इसकी स्थापना कब हुई। यह तो गोरखा शासक की सरकार एवं उनकी पैसे पर बिकने वाले एजेन्टों की करामात है। 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' से विरोध रखने वाले राजनीतिक दल के व्यक्ति एवं गोरखा शासक की सरकार के एजेन्टों द्वारा 'मधेश, मधेशियों का है', शीर्षक पर्चा निकलवा दिया गया था जिसके पीछे रघुनाथ ठाकुर का हाथ बताया जा रहा था। उसका खण्डन 'अपील मधेश निवासियों व्यक्ति से' शीर्षक पर्चे द्वारा किया जा चुका है। 'मधेश, मधेशियों का है' शीर्षक पर्चे में मधेशी जनता तक को बुरे भयंकर परिणामों के लिए धमकी दी गयी थी।

इस भ्रमात्मक घातक प्रचार के पीछे बहुत भयंकर राज है। प्रारम्भिक संगठन समितियाँ (मोरङ्ग) के द्वारा संचालित अहिंसात्मक 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' को जनता की निगाह में बुरा बनाने एवं गिराने के लिए प्रचार के बहाने कुछ चुने हुए मधेशियों को गोली घाट उतारने तथा उसका सारा दोष रघुनाथ ठाकुर पर मढ़ भारत की धरती पर रघुनाथ ठाकुर को गोली से उड़ा देने की योजना बनी है।

'मधेश मुक्ति आन्दोलन' के सम्बन्ध में इस प्रकार प्रचार किया गया है कि मानो 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' भारत की धरती पर ही शुरू है। मधेश की जनता से कोई सरोकार ही नहीं है। इस ढंग के प्रचार से मधेश की जनता की भलाई होने के बजाय भारी नुकसान ही पहुँचा है। साथ ही भारत के विरोधी लोगों को बोलने का मौका दिया गया है कि 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' सचमुच भारत के लोगों द्वारा ही खड़ा करवाया हुआ है। जबकि तथ्य यह है कि भारत की लोगों की न तो मानसिक सहायता ही 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' को प्राप्त है और न फूटी कौड़ी से इस आन्दोलन को मदद की जाती है। बल्कि भारत की भूमि में 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' से सम्बन्धित व्यक्ति की जान तक गोरखा शासक के एजेंटों द्वारा ली जाती है। उसकी सम्पत्ति की लूट करवा कर उसे पैसे-पैसे का मोहताज बनाया जाता है।

स्मरण दिलाने की चीज है कि एक बार पाकिस्तान के समाचार-पत्रों में प्रचार हुआ था कि जिस प्रकार भारत से पाक-कश्मीर को खतरा है उसी प्रकार भारत से नेपाल की तराई को खतरा है। इसी ढंग के प्रचार को देखकर ही शायद ऐसा लिखा गया होगा। अत: सम्पादक महोदय का समाचार के संकलन में अपनी पैनी दृष्टि की परख देनी चाहिए।

पत्रकारिता बड़ा ही पवित्र व्यवसाय है। परन्तु पत्रकार के लिए सचरित्रता, समझ, सूझ, स्थान, काल एवं पात्र को समझने की सम्यक दृष्टि, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का अपेक्षित ज्ञान इत्यादि अनेकानेक गुणों की आवश्यकता होती है। इन गुणों के अभाव में तो समाचार-पत्र जनता एवं देश दोनों के लिए अभिशाप ही सिद्ध होता है।

पूणियाँ जिले के एक पत्र ने (जिसका नाम लेना भी उसके महत्त्व झूठे बढ़ाना है) जाने-अनजाने पत्रकारिता को इस बेरहमी से ऐसे निम्न स्तर पर ला पटका है कि मानों सम्पादक महोदय में पत्रकारिता की कला छु तक नहीं गई हो। 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' की लड़ाई का बिगुल बजाने का अधिकार मधेशी कौम का है; किसी विदेशी पत्र का नहीं है। हाँ, स्वतंत्र विचार एवं अभिव्यक्ति रखने का अधिकार सभी को है। 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' का वैचारिक प्रचार किसी भारतीय की देन नहीं है। इसका बिगुल मधेश के मोरङ्ग (सुनसरी) जिल्ला अन्तर्गत भलाभलेनी निवासी एक अल्पज्ञ लेखक रघुनाथ ठाकुर 'मधेशी' द्वारा बजाया गया है और मोरङ्ग की धरती से ही 'मधेश मुक्ति' की शास्वत संगठित आवाज १९५९ ई. से मोरङ्ग की जनता के मुँह से निकली जो दुनियां के कोने-कोने में गयी। 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' गलत प्रचारों का विरोध करेगा। इस प्रकार के पत्र को अपना विरोधी मानेगा। यह सहायता नहीं वरन हस्तक्षेप है। क्योंकि हिन्दुस्तान के लोगों ने मधेश को विदेशी भूमि माना है, अपनी भूमि नहीं। अत: अन्तर्राष्ट्रीय कानून के दायरे में ही हमें किसी की सहायता चाहिए। हम ऐसे पत्र, पत्रकार एवं संवाददाता को गोरखा शासक के एजेंट कहते हैं जो अपने निजी स्वार्थ के चलते एक ओर तो हिन्दुस्तान का नाम अन्तर्राष्ट्रीय जगत में बदनाम करते हैं और दूसरी ओर हमारे 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' को कुचलने की साजिश में हाथ बटाते हैं।

आश्चर्य तब होता है कि अज्ञात महिलाओं के शील पर भी पत्रकार प्रहार करते हैं। पत्रकारिता इस गंदे स्तर पर कभी नहीं उतरती। यह प्रकट सत्य है कि सरकारी तंत्र अपने राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए महिलाओं को राजनीतिक अस्त्रों के रूप में खुलकर प्रयोग करता है। जिसके शिकार 'मधेश मुक्ति आन्दोल' के कुछ सदस्य बचते-बचते भी हो चुके हैं। स्त्रियाँ अपने आठ अवगुणों के लिए नामी तो है हीं ऐसा आर्य पुरुषों का वचन है। तो क्या हम उनके शील के साथ मजाक करें ? अज्ञात महिलाओं के शील पर तो प्रहार किया गया है लेकिन उनके नामों को प्रकाश में लाने की हिम्मत नहीं हुई। कायरता और बहादुरी का ऐसा मिश्रण तो देखते ही बनता है। नाम छिपाने का मतलब जनता कहीं यह न लगा ले कि रिपोर्टर महोदय स्वयं अपने पापों को छिपाने का पूर्वाभ्यास तो नहीं कर रहे हैं ? रिपोर्टर महोदय को इन फर्जी प्रेमिकाओं से कैसे भेट-मुकालात व मोहब्बत हो गयी ? इतनी आसानी से ये गंभीर प्रेमिकाएँ इस फटीचर महोदय के इतने नजदीक कैसे आ गई और इस महाशय के पास कौन सी खूबी या लालच है जिस पर ये प्रेमिकाएँ रीझकर सारा भेद दे दिया ? स्पष्ट है कि इस अल्पज्ञ लेखक के खिलाफ शुरू से ही सुनियोजित ढंग से षड्यन्त्र चल रहा है जिसकी सूचना भारत

के अधिकारियों को बराबर दी जाती रही है और अब यह स्वत: प्रकाश में आ जाने पर भी भारत के अधिकारी मौन रहें तो यह कुछ गंभीर खतरे की पूर्व सूचना तो है ही।

प्रेमिकाएँ तो होती हैं इसे सभी जानते हैं। लेकिन फर्जी प्रेमिकाओं का नाम तो कभी नहीं सुना गया है। अत: जनता को जानने का अधिकार है कि फर्जी प्रेमिकाएँ कैसी होती हैं ? मूर्त कि अमूर्त ? बेचारी प्रेमिकाएँ या तो कुलवधु होंगी या कुमारी कन्याएँ। कृपया जरा उन्हें सामने तो लाएँ! निर्लज्जता की भी एक हद होती है। पत्रकारिता की धज्जी नहीं उड़ायी जानी चाहिए। कभी-कभी इसकी चर्चा चलती है कि आवश्यक गुणों से सम्पन्न व्यक्तियों को सरकार पत्रकारिता के कार्य-सम्पादन के लिए अधिकार पत्र दे। बात ऐसी ही जगह जंचती भी है। अपवित्र, लम्पट, अव्यवस्थित मानसिक स्तर के लोगों की बातों को गैरजिम्मेदार ढंग से प्रकाश में लाना यह समाज, देश एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के लिए बड़ा ही घातक होता है। हर चीज की छानबीन होनी चाहिए। चरित्रहीन, लम्पट, मूर्ख, लोभी, गैरजिम्मेदार संवाददाता पर भरोसा करना ही नाजायज होता है। भ्रमात्मक गंदे प्रचारों का एक-एक जवाब रघुनाथ ठाकुर द्वारा लिखित पुस्तकों में, समाचार-पत्रों में छपे वक्तव्यों एवं चिट्ठियों में देखा जा सकता है।

यह कैसा प्रचार है कि रघुनाथ ठाकुर एक जाली लेखक है। तब इस लेखक की किताबों के असली लेखक कौन है ? कोई भारतीय है वा अन्य विदेशी नागरिक ? एक अल्पज्ञ वैधानिक लेखक भी कभी भी दूसरे की बुद्धि का भरोसा लेकर नहीं चलता। अपनी मानसिक शक्ति ही उसका सहारा होता है। इसके लिए उसे विभिन्न जगहों के बड़े-बड़े पुस्तकालय में चक्कर देना पड़ता है जहाँ विभिन्न तिथियों में अवलोकन के लिए, लिए गए ग्रन्थों के लिए उसे हस्ताक्षर देने होते हैं। अव्वल के दुशमनइस बात को कैसे समझ पायेंगे। अत: गलत प्रचारों के द्वारा 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' को विदेशों में बदनाम नहीं किया जा सकता कि यह आन्दोलन मधेशी कौम का नहीं, वरन किसी विदेशी राष्ट्र के द्वारा संचालित है। वह कैसा मूर्ख व्यक्ति है जो अपने को रघुनाथ ठाकुर का गुरु कहते सुना जाता है जिसे यह भी शक्ति नहीं कि रघुनाथ ठाकुर की पुस्तक को पढ़कर भी उसका सही मूल्यांकन कर सके। मधेश की धरती पर ऐसे भी लोग घुम रहे हैं जो इस प्रकार के प्रचार के माध्यम से मधेशी जनता को ठग रहे होंगे जिनसे मधेशी जनता सावधान रहे।

रघुनाथ ठाकुर का राजनीतिक गुरु उसके जीवन की परेशानियाँ हैं। इन्हीं परेशानियों के बीच काठमांडू एवं दिल्ली के विरुद्ध प्रचार करने पर दिल्ली के जेल एवं हथकड़ियों ने इसे मधेश को राजनीतिक गुलामी से छुटकारा दिलाने के लिए रास्ता खोजने की ओर बाध्य किया था जबकि स्वर्गीय नेहरू की दिल्ली प्रदेश सरकार ने इस लेखक पर यह कहकर मुकदमें चलाया था कि यह व्यक्ति किसी बड़े व्यक्ति (संदेह किसी राजनेता की ओर इंगित करके किया गया था, लेकिन नाम नहीं दिया गया था) की जान लेने पर तुला हुआ है। स्मरण रहे कि लेखक को रूसी राजदूतावास के निकट से गिरफ्तार किया गया था। लेकिन दिल्ली की गिरी नौकरशाही एवं गोरखा शासक के राजदूतावास का षड्यन्त्र सफल नहीं हो सका। तब से ही इस अल्पज्ञ लेखक के मन में दृढ़ इच्छा उत्पन्न हो गयी कि परतंत्र मधेशी कौम की आजादी की रूपरेखा जनता के सामने प्रस्तुत कि जाय और इसके लिए लेखक अपना अनवरत अध्ययन जारी रखता आया है। अत: लेखक का राजनीतिक गुरु अब तक कोई नहीं है।

रघुनाथ ठाकुर की इस लालसा पर तो पानी ही फिर गया कि उसका कोई राजनीतिक गुरु बनें। तथ्य तो यह है कि हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े दैनिक पत्र एवं चोटी के नेता तक घबड़ाते हैं कि समस्या बड़ी कठिन रखी है इसने। कोई तो यहाँ तक कह देते कि आधार ही गलत है जबकि यह एक वैधानिक तथ्य है। परन्तु इस अल्पज्ञ लेखक को उनके तर्कों में कोई सार नहीं दिखाई पड़ता और किसी की तथ्यहीन आलोचना की परवाह किए बगैर वह अपना कदम बढ़ाता चला जा रहा है। किसी में हिम्मत नहीं होती कि कमसे-कम राजनीतिक दृष्टि से इसे मुक्त कंठ से स्वीकार किया जाय कि 'परतंत्र मधेश और परतंत्र मधेशी कौम' भी एक तथ्य है, विश्व के मानव-समूहों के बीच यह भी मानव-जाति की एक समस्या है। इस अल्पज्ञ वैधानिक लेखक को क्रांतिकारी, विद्रोही, देशद्रोही, जिन्ना, जयचन्द, क्वाजलिंग के नामों से सम्बोधित करना परतंत्र मधेशी जनता के अधिकारों से मजाक उड़ाना ही समझा जायेगा।

स्वर्गीय डा० श्री राममनोहर लोहिया जी बहुत नजदीक से इस अल्पज्ञ लेखक को एवं इस समस्या को परख चुके थे। लेकिन इस लेखक को सिर्फ बोल भरोसा देकर ही उन्होंने रखा कि तुम्हारी चीज एक दिन सबों के दिमाग में उतरेगी। लाचारी की हालत में कुछ बोलने से कतराते थे। सिर्फ यही कहते थे कि डा० लोहिया के बोलने का मतलब होगा मधेशियों का नुकसान। क्योंकि भारत जैसे पथभ्रष्ट देश में लोहिया के शब्दों का गलत अर्थ लगा लिया जाता है। फिर भी इस अल्पज्ञ लेखक ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। बराबर कुछ न कुछ नये तथ्यों को खोज-खोजकर उनके सामने रखता ही गया कि मजबूर होकर भी उन्हें कुछ बोलना पड़े। परतंत्र मधेश की निरीह जनता के साथ हो रहे अत्याचार के खिलाफ उनके हृदय में विद्रोह की भावना जग चुकी ही थी और कुछ बोलने के लिए वे बाध्य से जान पड़ते थे। लेकिन इसके पहले ही चल बसे। हालांकि श्री राजनारायण जी को बोलने के लिए डा० साहब ने ही बाध्य किया था। डा० साहब ने श्री राजनारायण जी के सामने ही जब यह कहा कि तुम्हें एक आदमी (राजनारायण) मिल गया है, इसे नेपाल से लड़ा दो, अब मुझे तंग न करो तब उनकी विवशता एवं स्थिति की गम्भीरता का पता लगा।

हमारी समस्या को विश्व में कौन परख सकेगा। इसके लिए हमारा प्रयास जारी है और हम धैर्यपूर्वक अपना कार्य करना चाहते हैं। ऐसा करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। लेकिन बीच-बीच में गोरखा शासक के एजेंटों एवं असामाजिक तत्त्वों की हरकत से बाधा उपस्थित हो जाया करती है। अगर कोई हमारा भलाई नहीं कर सकता तो उसे हमारा बुराई भी करने का अधिकार नहीं है। क्या आशा की जाय कि भारत के अधिकारी, जिम्मेदार पत्रकार एवं शिष्ट तथा समझदार व्यक्ति इन चीजों का बराबर ध्यान देंगे ? अनुचित सहयोग हमें नहीं चाहिए। हाँ, यह एक तथ्य है कि विश्व के मानव समूह में किसी कौम विशेष के मुक्ति आन्दोलन में किसी कौम विशेष का सहयोग जरूर रहा है। लेकिन मर्यादित घेरे के अन्दर ही। स्व० राजा त्रिभुवन एवं वर्तमान राजा महेन्द्र दोनों को दिल्ली में राजनीतिक शरण मिली थी और उन्हें राजतंत्र एवं प्रजातंत्र की मुक्ति के लिए भारतीय जनता एवं सरकार से उचित सहायता मिली थी। लेकिन 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' से संबद्ध व्यक्ति एवं गोरखा साम्राज्य की अन्य राजनीतिक दलों के लोग आज हिन्दुस्तान की धरती पर गोली के निशाने बनाये जाते हैं और भारत के अधिकारी अपनी असमर्थता का परिचय देते हैं।

गोरखा शासक की सरकार जब इस अल्पज्ञ लेखक पर गंदे से गंदे राजनीतिक अस्त्रों के प्रयोग में असफल हुई है तब नेपाल रेडियो एवं गोरखा पत्र ने इस अल्पज्ञ लेखक के खिलाफ आतंकपूर्ण प्रचार से धावा बोल दिया है ताकि मधेशी जनता में आतंक फैले। इसके सफाये के लिए असामाजिक तत्वों एवं गोरखा शासक के एजेंटों के बीच आधुनिक घातक हथियार बांटे गए हैं। ये लोग फारविसगंज तक में इस लेखक की खोज करते फिरते हैं। राजनीतिक हथकंडे किये जा रहे हैं। इस अल्पज्ञ लेखक में जेल अथवा मृत्यु से घबड़ाहट नहीं आती। जेल भगवान श्री कृष्णचन्द्र जी का जन्मस्थल होने की वजह से लेखक के लिए वह तीर्थस्थल है और कुकर्मों को छोड़कर इन्साफ के लिए इस देवस्थल जेल का दर्शन सभी को करना ही चाहिए। लेखक को कोई मौत के घाट उतारता है तो कोई बड़ा काम नहीं करता। क्योंकि लेखक को न मारने पर भी उसे एक दिन जाना है ही। कायर ही मृत्यु से घबड़ाते हैं। लेखक का आयु कोई छीन नहीं सकता। चाहे दुनियां ही इसके खिलाफ क्यों न हो जाय ? परमात्मा की मर्जी पर ही लेखक जा सकता है। लेखक द्वारा जो कुछ होना है उसे कोई रोक नहीं सकता।

'मधेश मुक्ति आन्दोलन' एक उत्पीड़ित कौम की आह से निकली एक शाश्वत वैधानिक आवाज है। इस आन्दोलन से सम्बन्धित लोगों को मधेश या भारत की धरती पर गोली से उड़ाने से यह रूकने वाला नहीं है। और न किसी राजनीतिक दल का उद्देश्य ही पूरा हो सकेगा जिसे 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' से विरोध है। अपनी कौमी आजादी के लिए लड़ने वालों को, वतन पर मिटने वालों को जो अन्तिम पुरस्कार मिलता है वह है मृत्यु। लेकिन आजादी के दीवानों में इससे घबड़ाहट पैदा नहीं होती। बल्कि उसमें काम करने का दुगुना उत्साह बढ़ता ही जाता है। बलिदान की बेदी पर अपने को होम करने के लिए नित्य नये-नये चमकते हुए सूर्य, चाँद, सितारे आते हैं और अपना इतिहास बनाते हैं। इतिहास के कलंकित पन्ने को गर्म-गर्म लाल-लाल खून से धोते हैं और नये इतिहास का निमार्ण करते हैं। उनके गर्म-गर्म लाल-लाल खून की स्याही से परतंत्र कौम का इतिहास लिखा जाता है। लेकिन पतित व्यक्ति ऐसे महान पुण्य कार्य में भी अपनी नीचता का ही परिचय देते हैं। उन्हें क्या कहा जाय ? अपने परिश्रम के बल से वे अपनी रोटी का इन्तजाम कर सकते हैं यही हमारी उनसे प्रार्थना है। गन्दे प्रचारों के बीच भी प्रतिभा चमकती ही चलती है और उसका कोई नुक्सान नहीं होता। आग में जलने पर सोना खरा ही उतरता है। लेखक अपना उल्लू सीधा नहीं करता, वरन उसका तन-मन-धन तीनों अपनी कौमी आजादी के लिए न्यौछावर है।

एकाध भ्रमात्मक प्रचार करने वाला पापी तो लेखक के निजी पैसे से पला भी है और 'मधेश मुक्ति आन्दोलन' के विरुद्ध हमेशा जासूस का काम करता आया है। आज भी लेखक के नाम को बेचकर ही पैसे कमाया है। अपने पापों, पूर्व अपराधों से बचने के लिए एक ओर तो सरकारी एजेंट बना बैठा है और दूसरी ओर राजनीतिक जामा भी पहनना चाहता है। जनता इस तरह के तत्त्वों से बराबर सावधान रहे। रघुनाथ ठाकुर जैसे व्यक्ति की जान की कीमत इस तरह के व्यक्तियों की नजर में कुछ नहीं रहता। अत: लेखक सावधान है। मधेशी जनता सावधानी बरते।

प्रचार विभाग, प्रारम्भिक संगठन समितियाँ
(मधेश मुक्ति आन्दोलन), मोरङ्ग (मधेश)

परिशिष्टाङ्क (८)

मूंजी मधेशिया इंदिरा के पास अपनी मांग क्यों रखने जायँ ? जवाब दो!
अभागे भारतीयों की कहानी कौन जानता है ? कृतघ्न गोरखाली सरकार, मधेश छोड़ो।
मोरंग के बेशरम सी० डी० ओ० पर मुकदमें चलाओ
मधेश के मिलों का प्रबन्ध, मधेशी मजदूरों के हाथ सौंपो।

मधेश जनक्रांतिकारी दल की मांग

उपकार न माननेवाली, कृतघ्न गोर्खाली सरकार की मजबूरी की कहानी शायद मधेशी जनता नहीं जानती है। ऐसा संदेह किया जा सकता है कि शायद भारत के भी कम ही लोग इसे जानते हैं।

गोर्खाली सरकार के अत्याचारों से उबकर १८१४ ई. में गोर्खाली सरकार एवं ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी की सरकार के बीच लड़ाई छिड़ने पर मधेशी जनता ने अंग्रेजों का साथ दिया। नतीजा यह निकला कि गोर्खाली सरकार की हार हुई। २ दिसम्बर १८१५ ई. की संधि हुई। इस संधि की धारा ७ के अनुसार गोर्खा शासक अंग्रेजों की मंजूरी के बगैर किसी भी यूरोपियन या अमेरिकन मूल्कों की प्रजा को या ब्रिटिश भारतीय प्रजा को अपने यहाँ बहाल नहीं कर सकते थे।

ऐसी मजबूरी की हालत में गोर्खाली सरकार चोरी से ब्रिटिश भारतीय प्रजाओं को गोर्खाली साम्राज्य में लाते थे। क्योंकि गोर्खाली सरकार के विकास कार्य ठप थे। बाद में गोर्खाली सरकार की गद्दारी के इतिहास से प्रभावित होकर सेप्टेम्बर १९२३ ई. से अंग्रेजों ने सिर्फ ब्रिटिश भारतीय प्रजाओं को ही शिक्षा, स्वास्थ्य, निर्माण, यातायात, संचार, कृषि, व्यापार तथा उद्योग के विकास के लिए गोर्खाली साम्राज्य में ले जाने की छूट दी। क्योंकि गोर्खाली फौज ने भारत के सिपाही विद्रोह एवं भारतीय जनता के मुक्ति आन्दोलन को दबाने में अंग्रेजों की मदद की थी। सन् १९२३ से भारतीय नागरिक खुलकर गोर्खाली सरकार के विकास एवं उन्नति के कार्यों को बढ़ाने के लिए अपनी सेवाएँ अर्पित करते रहे हैं। परन्तु सम्पूर्ण जीवन को इस तरह लगाने का नतीजा उन्हें यह मिल रहा है कि उन्हें निकाला गया है और निकाला जा भी रहा है। भारतीय उद्योगपति जानकार मजदूरों के साथ विकास कार्य के लिए मधेश क्षेत्र को ही चुना। जब उनकी पूँजी विकसित हुई तो गोर्खाली सरकार के वर्गगत स्वार्थ ने उस पर धावा बोल दिया। वे आज बाहर दिखलाई पड़ रहे हैं। इसके भी कारण हो सकते हैं। बेचारे मजदूरों की कहानी तो और भी दर्दनाक है। गोर्खाली लोगों की तथाकथित प्रजातांत्रिक व्यवस्था के नाम पर मजदूरों ने गोली खाकर अपने प्राण भी गंवाए। परन्तु नतीजा यह हुआ कि अन्त में वे गैरनागरिक घोषित हुए। शासकों की हाँ में हाँ मिलाया, उन्हें प्रधानमंत्री बनाने का आश्वासन दिया तो नागरिक बने। परन्तु उनकी इच्छा के मुताबिक नहीं चलने पर ही अब वे गैरनागरिक हैं। उनकी जगहों पर गोर्खाली वर्ग के लोगों को भरा गया है और भरा जा रहा है।

भारत-नेपाल की शान्ति-मैत्री संधि १९५०

भारत में शरणागत स्वर्गीय श्री ५ त्रिभुवन वीर विक्रम शाहदेव जी ने भारतीय जनता एवं सरकार के सहयोग से अपने साम्राज्य में प्रजातंत्र की स्थापना की। दोनों राज्य की प्रजाओं की सुविधा के लिए १९५० ई. में संधि हुई। भारत-नेपाल की शांति-मैत्री संधि १९५० के अनुच्छेद ७ में लिखा है—

"भारत तथा नेपाल की सरकारें स्वीकार करती हैं कि परस्पर के आधार पर एक दूसरे की प्रजाओं को एक दूसरे के प्रदेशों में निवास करने में, सम्पत्ति की मालकीयत हासिल करने में, व्यापार तथा व्यवसाय में हिस्सा लेने में, घुमने-फिरने में तथा अन्य समान सुविधाओं की प्राप्ति में समान सुविधाएँ देंगी।"

यह संधि भारत सरकार द्वारा संयुक्त राष्ट्रसंघ के कार्यालय में रजिष्ट्री की जा चुकी है। रजिष्ट्री संख्या १३०२ है। भारत सरकार या गोर्खाली सरकार का कोई भी कानून इस संधि के बिना दोनों के मंजूरी के रद्द नहीं कर सकता। दोनों राज्यों की प्रजाओं को एक-दूसरे के देश में उपर लिखे गये अधिकारों को हासिल करने का अधिकार है। भारतीय मजदूर या कोई भी भारतीय नागरिक उपर्युक्त संधि के मुताबिक अपने अधिकार की सुरक्षा की मांग गोर्खाली सरकार से कर सकते हैं। नेपाली-भारतीय भेदभाव के खिलाफ आवाज बुलन्द कर सकते हैं। अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए भारतीय राजदूत से मिल सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संस्था की जिम्मेदारी की याद गोर्खाली शासकों को दिला सकते हैं।

विराटनगर सी० डी० ओ० की हरकत ने गोर्खाली सरकार के षडयन्त्रों का भंडाफोड़ कर दिया

मोरङ्ग १, (मधेश) जिले के रानी विराटनगर स्थित सरकार द्वारा संचालित रघुपति जूट मिल के मजदूरों ने अपनी कुछ मांगों को लेकर हड़ताल कर दी थी। इनकी मुख्य मांगे निम्नलिखित थीं :—

(१) ४० प्रतिशत वेतन वृद्धि, (२) सालाना वेतन वृद्धि, (३) बिमार मजदूरों को साल में १५ दिन की सवैतनिक बिमारी छुट्टी, (४) जूट मिल्स अस्पतालों में बोर्ड की व्यवस्था वगैरह।

पर्वतवासी मजदूर एवं मधेशी मजदूर दोनों हड़ताल में साथ-साथ थे। विराटनगर के सी० डी० ओ० ने हड़तालियों को आगे बढ़ने से रोकते हुए कहा—"तुम मुजी मधेशी लोग अपनी मांग इन्दिरा के पास रखो।"

बेशरम मूर्ख सी० डी० ओ० ने यह कहकर गोर्खाली सरकार के नापाक षड़यन्त्रों का भण्डाफोड़ कर दिया। "भारतीय मजदूर इन्दिरा के पास जाओ!"—यह कहना एक हद तक तो सही है। लेकिन "तुम मुजी मधेशी लोग इन्दिरा के पास मांग रखो"—यह तो घोर आपत्तिजनक बात है। इसका मतलब मधेश मधेशियों का नहीं। मधेशिया भारतीय हैं।

इस बेशरम सी० डी० ओ० से क्या कहा जाय ? मधेश मधेशी सन्तानों का वह भूभाग है जिस बपौती धरती पर भारतीय मूल के लोगों का निवास है जिसका नाम है मधेशिया। यह

धरती आज तक साम्राज्यवादियों के चंगुल से मुक्त नहीं हो सकी है। मधेश क्षेत्र के लुम्बिनी निवासी भगवान गौतम बुद्ध, जनकपुर के राजा विदेह तथा जगत जननी सीता मधेशी (मध्यदेशीय) संतानें थीं। अगर शासक मधेशियों को भारतीय समझते (क्योंकि ऐसा समझना भी कोई अपराध नहीं होगा) तो मधेश क्षेत्र जो प्राचीन मध्यदेश का उत्तरी हिस्सा है भारतीय भूभाग हुआ कि नहीं ? साम्राज्यवादियों ने इस भूभाग के साथ बड़ी बेरहमी बरता है। साम्राज्यवादियों की साजिश, इतिहास एवं अन्तर्राष्ट्रीय कानून ने इस भूभाग को ऐसा विशिष्ट स्थान प्रदान कर दिया है कि इस क्षेत्र पर भारत सरकार गोर्खाली सरकार की सौदेबाजी चलने वाली ही नहीं।

भारत सरकार की गोर्खाली साम्राज्यवाद समर्थक नीति के आगे मधेशी कौम घुटने टेकने नहीं जा रही है। मधेश आजाद होकर रहेगा। मधेश की धरती पर भारतीय-नेपाली का झगड़ा खड़ा करने का अधिकार किसी भी शक्ति को नहीं है। भारतीय जनता से मधेशी जनता का सम्बन्ध जीवन-मरण का है और ऐसा ही रहेगा। मूर्ख एवं भ्रष्ट राजनीतिज्ञों एवं सरकारी पदाधिकारियों के बस की बात नहीं कि इस सम्बन्ध को वे तोड़ सकें ताकि मधेश को हड़पने का मौका उन्हें मिल जाय। भारतीय जनता अपने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हुए जो सुविधा मधेशी कौम को प्रदान करेगी, मधेशी कौम भी भारतीय जनता को उतनी ही सुविधा देने में पीछ नहीं रहेगी।

मधेश के मिलों में काम करने वाले मजदूरों ने अपनी वाजिब मांगें रखी थीं। उनकी पूर्ति शासक को अविलम्ब कर देनी चाहिए थी। जिन मजदूरों का शोषण करके इतनी बड़ी इमारत खड़ी की गई है वे मजदूर अगर अपने जीवन की हिफाजत के लिए सरकार के समक्ष मानवोचित मांगें रखते हैं तो यह कोई अपराध नहीं। काम करें मधेश में, मजदूरी मांगने जायँ इन्दिरा से! यह कैसा मखौलपूर्ण तर्क है। मानों ये मजदूर महज गुलाम हों जो शासक की मर्जी पर जी रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर एकता शासकों की इस हरकत को हमेशा के लिए शांत कर देगी। ''दुनियां के मजदूर एक हों'' इस नारे का कुछ मतलब है कि नहीं ? शासकों को संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य होने की हैसियत से मानव के सार्वभौम अधिकार के अधीन मानवता का ख्याल रखकर भी मजदूरों की इन मांगों की पूर्ति अविलम्ब करनी थी। परन्तु गोरखाली सरकार के मूर्ख एवं बेशरम सी० डी० ओ० ने इसके बदले ''मूजी मधेशिया'' शब्द का प्रयोग किया है।

कृतघ्न गोर्खाली सरकार के पापी बेशरम अफसर मधेश छोड़ो! इन्दिरा कौन है हमारे मामले में दखल देने वाली ? गोर्खाली सरकार को मधेशी कौम के मामलों में अनुचित दखल देने का क्या अधिकार है ? इन्दिरा जी के पास हम क्यों जायं ? जवाब दो!

मधेश के मिलों का प्रबंध मजदूरों के हाथ में सौंप दो। यह हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। इस अधिकार के खिलाफ गोर्खाली सरकार के सारे नापाक षड्यन्त्रों को चूर-चूर कर देंगे।

जय मधेश !

मधेश के मजदूर एक हों ! मधेशी मजदूर एकता जिन्दाबाद !

मधेश जनक्रान्तिकारी दल-जिन्दाबाद !

प्रचार विभाग

मधेश जन-क्रान्तिकारी दल।

परिशिष्टाङ्क (९)

मधेशी जनता से अपील !

मधेश जन-क्रांतिकारी दल को तन-मन-धन से मदद करें। मधेश जन-क्रांतिकारी दल ने मधेशी जनता की आजादी की लड़ाई लड़ने का बिगुल इसलिए बजाया है कि—

(१) श्री ५ की अत्याचारी गोर्खाली सरकार के हाथ से शासन छीनकर मधेशी जनता के हाथ में शासन देना है।

(२) मधेशी जनता में से ही योग्य व्यक्तियों को चुन-चुनकर मधेश में मधेशी पुलिस, फौज और हाकिमों के पद पर बहाल करना है। स्कूल, कॉलेज, अस्पताल, तमाम कृषि तथा औद्योगिक कारखानों, तमाम सरकारी अड्डेखानों में मधेशी जनता को ही बहाल करना है। घरेलू और विदेश व्यापार को मधेशी कौम के हाथ में देना है।

(३) मधेश पर मधेशी जनता के कानूनों को लागू करना है।

(४) मधेशी जनता की भाषा में मधेश का सारा राज-काज करना है। स्कूल, कॉलेजों में मधेशी भाषा के जरिए ही शिक्षा देने का प्रबन्ध करना है। गोर्खाली साम्राज्यवादियों की भाषा गोर्खाली को मधेश क्षेत्र से निकाल बाहर करना है।

(५) मधेश की सारी जमीन मधेशियों के कब्जे में दिलवाना है। मधेश की धरती पर जबरन अधिकार करने वाले मधेशी कौम के शत्रुओं को मधेश की धरती से निकाल बाहर करना है।

(६) मधेश एवं मधेशी जनता की आमदनी को मधेश की धरती पर ही मधेशी जनता के विकास, सुख-सुविधाओं के लिए खर्च करनी है।

(७) मधेश के हर व्यक्ति के लिए उचित अन्न-वस्त्र, दवा, मकान एवं शिक्षा का प्रबन्ध करना है। मधेशी कौम के सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक विभिन्न स्वतंत्र विकास में गोर्खाली सरकार के दखल देने की आदतों को जड़मूल से हमेशा के लिए खतम करना है।

(८) चोरी, डकैती, खून, बलात्कार, आगजनी, लूट, शोषण एवं अत्याचारों से मधेशी जनता को बचाना है।

(९) मधेशी, लिंबु, राई, मगर, गुरुङ्ग, तमाङ्ग, नेवार वगैरह सभी जनता के आपसी दोस्ताने सम्बन्धों को बढ़ाना है। इन जातियों के आजादी के दुश्मन एवं इनके आपसी दोस्ताने सम्बन्धों को बिगाड़ने वाली गोर्खाली साम्राज्यवादी सरकार के दलाल पीट्टू समर्थकों का भण्डाफोड़ करना है। निजी स्वार्थ के लिए मधेशी कौम के अधिकार के साथ गद्दारी करने वाले, मधेशी कौम के खिलाफ जासूसी

करने वाले और मधेशी कौम की आजादी के लिए लड़ने वालों के खिलाफ घातक षड्यंत्र करने वाले पापियों को जनता के सामने लाकर उनका पोल खोलना है। इस बात को जनता के फैसले के लिए छोड़नी है कि इन पापियों के साथ कैसा बर्ताव किया जाय।

(१०) विदेश में मधेश एवं मधेशी कौम की सही स्थिति की जानकारी पहुँचाने के लिए आवश्यक कार्य करना है। मानव स्वतंत्रता के कट्टर समर्थक विश्व की तमाम स्वतंत्र जातियों से मधेशी कौम का सम्पर्क बढ़ाना है। परराष्ट्र (विदेश) सेवा पर मधेशियों का कब्जा दिलाना है।

अन्त में दृढ़ विश्वास के साथ यह कहना है कि मधेशी कौम के उचित मानवीय संघर्ष का समर्थन विश्व की तमाम स्वतंत्र जातियाँ करेंगी। इसलिए मधेश जन-क्रांतिकारी दल को तन-मन-धन से मदद और सहयोग देकर मधेशी कौम की आजादी की लड़ाई को आगे बढ़ावें।

मधेशी जनता की मेहनत-कमाई पर ही जब अत्याचारी गोर्खाली सरकार और उसके पिट्ठू दलालों का सारा खर्च चल सकता है तब मधेश की आजादी की लड़ाई के लिए मधेशी कौम को बाहर भीख मांगने की जरूरत नहीं है। आपस के भेदभाव और मनमुटाव को भुलाकर निजी स्वार्थ को लात मारकर केवल आपसी एकता और सहयोग से मधेशी कौम अत्याचारी गोर्खाली साम्राज्यवादियों को आसानी से मधेश क्षेत्र से भगा सकती है।

इसमें डरने की कौन सी बात है। सबसे बड़ी सजा मृत्युदण्ड है। अगर मनुष्य को मृत्युदण्ड न भी मिले तो भी उसे मरना ही है। मनुष्य कब किस समय मरेगा कोई नहीं जानता। फिर भी अपनी मौत की परवाह किए बगैर मनुष्य हँसता-खेलता अपना कार्य कर रहा है। मनुष्य अपनी नासमझी के कारण ही मृत्युदंड से घबड़ाता है। मानव-जीवन की जन्मजात स्वतंत्रताओं के लिए संघर्ष करने पर अगर मृत्युदंड मिले तो इससे बढ़कर पवित्र मृत्यु संसार में नहीं है। कायर ही बहादुरों पर गोली चलाते हैं, वीर नहीं। मृत्यु की परवाह नहीं रखने वालों के लिए डरने-डराने वाली और बात कोई महत्त्व नहीं रखती।

अत: जेल-गोली-फाँसी की परवाह किए बगैर मधेश की बहादुर जनता को परतंत्रता की बेड़ी में जकड़ी हुई मधेशी कौम को आजाद करने के लिए तन-मन-धन से सहयोग देकर काम करना है। केवल शोषक, स्वार्थी, नीच प्रकृति के लोग ही जेल-गोली-फाँसी का भय दिखाकर जनता को गुमराह कर सही रास्ते जाने से भटकाते रहते हैं।

जय मधेश !

राष्ट्रीय परिषद, मधेश जन-क्रांतिकारी दल।